अध्यात्म विज्ञान

(Theology)

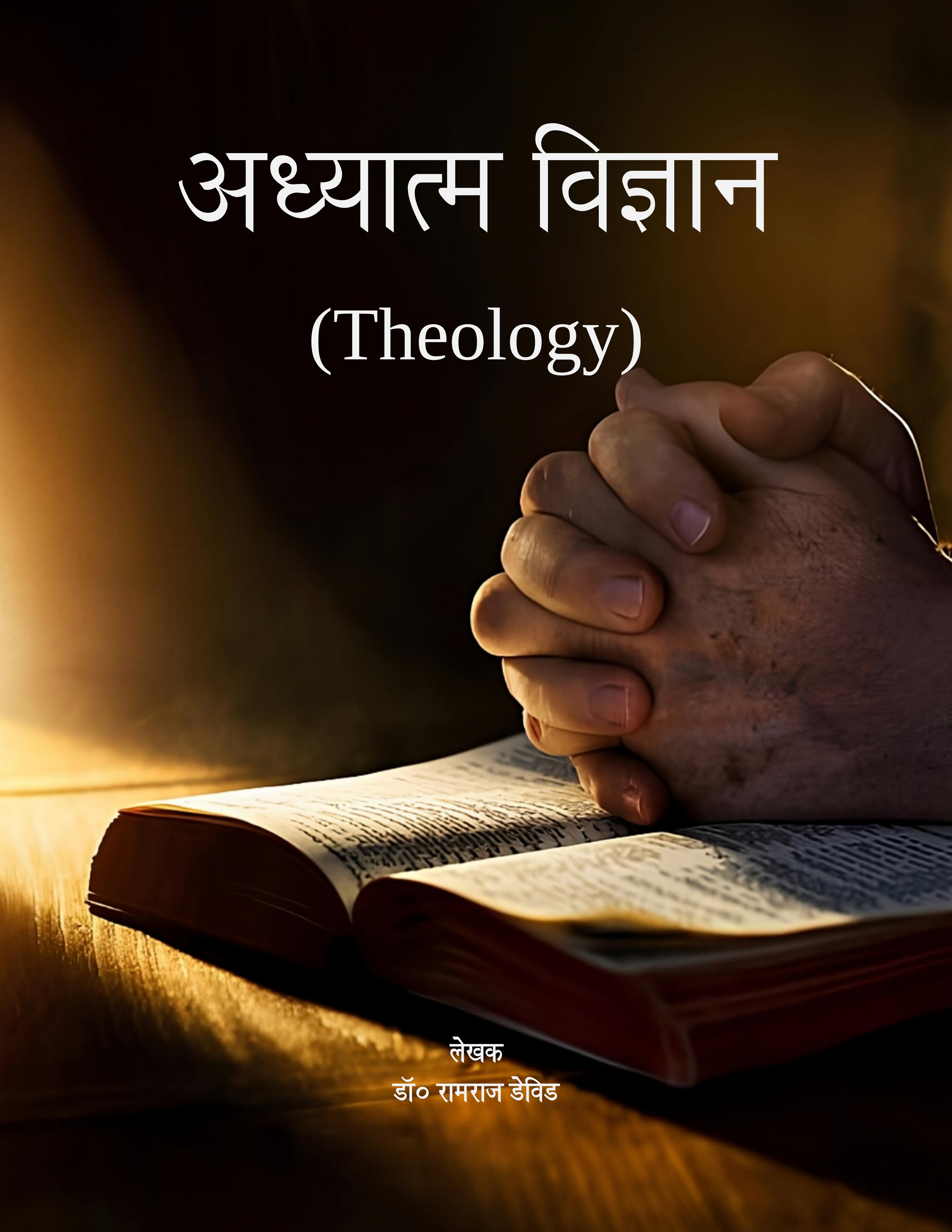

लेखक
डॉ० रामराज डेविड

आभार

सर्वप्रथम मैं परमेश्वर का धन्यवाद करता हूं कि उसने मुझे अपनी बुद्धि और समझ प्रदान की कि मैं अध्यात्म विज्ञान पर कुछ लिख सकूं। तत्पश्चात मैं अपने शिक्षकों के प्रति आभार प्रकट करना चाहता हूं जिन्होंने मुझे इतनी गहनता से वचन की शिक्षा प्रदान किया। जिन्होंने मुझे यह पुस्तक लिखने के लिए प्रेरित किया। में उन सभी व्यक्तियों का आभारी हूं जिन्होंने पुस्तक के लेखन, संशोधन, टाइपिंग, और अंतिम रुप देने में, मुझे सहयोग प्रदान किया। उन मित्रों का भी मैं आभारी हूं जिनका स्नेह और सहयोग मुझे हमेंशा मिलता रहा।

Creation Autonomous Academy

लेखक का प्राक्कथन

अध्यात्म विज्ञान की स्थापना एक विश्वासी के जीवन में करना अति आवश्यक है। आज कल सिद्धांत को लेकर ही कलीसियाओं में अनेक विवाद उठ खड़े हो रहे हैं। जिनको लेकर कलीसियाएं विभाजित होती चली जा रही हैं। प्राथमिक कलीसिया अध्यात्म विज्ञान पर टिकी रही, लेकिन बाद में नामधारी मसीहियत उभर कर आयी। उसके बाद तो नित नए सिद्धांत और उन पर विवाद तथा नयी-नयी कलीसियाओं का उदय हुआ।

यह अध्ययन इस बात पर ध्यान केन्द्रित करेगा कि किस प्रकार पवित्र आत्मा की अगुवाई में अध्यात्म विज्ञान को विश्वासियों के जीवन में स्थापित किया जाए।

‘ अध्यात्म विज्ञान ’ नामक यह पुस्तक अनेक वर्षों के अध्ययन-अध्यापन के उपरान्त हिन्दी भाषी विश्वासियों की आवश्यकता के अनुसार तैयार की गयी है। यह पुस्तक विश्वासियों के अन्दर अध्यात्म विज्ञान स्थापित करने के लिए लिखी गयी है। ताकि कलीसिया के विश्वासियों के बीच अध्यात्म विज्ञान को सीखा व सिखाया जा सके, जिससे विश्वासी मसीही विश्वास में दृढ़ हो सकें। यह पुस्तक सभी पाठकों के लिए सरल, रोचक एव व्यवहारिक है। पुस्तक में उदाहरणों का समुचित प्रयोग किया गया है।

हमारी इच्छा है कि कलीसिया के विश्वासीगण इस पुस्तक का अध्ययन कर अध्यात्म विज्ञान में दृढ़ हों। कलीसिया में अध्यात्म विज्ञान को सिखाने हेतु इस पुस्तक का उपयोग करें। मैं वस्तुतः इस पुस्तक के प्रथम संस्करण को प्रस्तुत करने के द्वारा पाठकों के अन्दर अध्यात्म विज्ञान को स्थापित करना चाहता हूं।

डॉ० रामराज डेविड

Creation Autonomous Academy

विषय -सूची

अध्याय | पृष्ठ संख्या

अध्याय	पृष्ठ संख्या
आभार	02
लेखक का प्राक्कथन	03
भूमिका	05
1-प्रेरणा	06
2-प्रकाशन	09
3-परमेश्वर	11
4-मनुष्य	14
5-पाप	19
6-प्रभु यीशु मसीह	22
7-पवित्र आत्मा	42
8-त्रियेकता	69
9-उद्धार	87
परिभाषिक शब्दावली	109
ग्रंथावली-बिब्लियोग्राफी	110

Creation Autonomous Academy

भूमिका

आज कल जब कि झूंठे सिद्धांत और झूंठे शिक्षकों की भरमार है। सिद्धांत को लेकर कलीसियाओं में अनेक विवाद उठ खड़े हो रहे हैं। जिनको लेकर कलीसियाएं विभाजित होती जा रही हैं। ऐसे समय में सही सिद्धांत को स्थापित करना एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है। एक विश्वासी के जीवन में आधारभूत बाइबल सिद्धांत की स्थापना करना अति आवश्यक है।

हमें अपने विश्वास को दृढ़ता से थामें रखने के लिए आधारभूत बाइबल सिद्धांतों की अति आवश्यकता है। ऐसे सिद्धान्त जो बाइबल हमें सिखाती है। कलीसिया में नए विश्वासियों की बढ़ती संख्या को देखते हुए उन्हें आधारभूत बाइबल सिद्धांतों को सिखाना आवश्यक है।

प्राथमिक कलीसिया आधारभूत बाइबल सिद्धांतों को दिन प्रतिदिन सीखती रही। पौलुस ने कलीसिया के अन्दर आधारभूत बाइबल सिद्धांतों को स्थापित किया। उसने कलीसिया के अगुवों को भी निर्देश दिया कि वे कलीसिया में उन्हीं सिद्धांतों को सिखाएं जिन्हें उन्होंने प्रेरितों से सीखा है।

यह अति आवश्यक है कि कलीसिया के विश्वासियों के बीच आधारभूत बाइबल सिद्धांत को सीखा व सिखाया जा सके, जिससे विश्वासी मसीही विश्वास में दृढ़ हो सकें। अपने विश्वास को अन्त तक दृढ़ता से थामे रहें एवं नए विश्वासियों को सिखाएं।

इस पुस्तक से हम प्रेरणा, प्रकाशन, परमेश्वर, मनुष्य, पाप, प्रभु यीशु मसीह, पवित्र आत्मा, त्रियेकता और उद्धार के आधारभूत बाइबल सिद्धांतों की शिक्षा प्राप्त कर सकेंगे। इन सिद्धांतों का एक -एक करके हम सिलसिलेवार उल्लेख करेंगें।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-1
प्रेरणा
(Inspiration)

प्रेरणा का अर्थः-

प्रेरणा का अर्थ है उकसाया जाना।

बाइबल परमेश्वर द्वारा प्रेरित वचन हैः-

बाइबल परमेश्वर द्वारा प्रेरित वचन है। इसका अर्थ है पवित्र आत्मा ने जो त्रिएकत्व का एक भाग है लोगों को उकसाया। उन्होंने प्रेरणा पाकर ऐसे शब्द लिखे जिनको वे खुद नहीं जानते थे। जिस प्रकार यशायाह की पुस्तक में लिखा है कि, 'देखो, एक कुंवारी गर्भवती होगी, वह एक पुत्र को जन्म देगी और उसका नाम इम्मानुएल रखा जाएगा,' तब यशायाह यह नहीं जानते थे कि वे क्या कह रहे हैं। आठ सौ वर्ष बाद ये वचन यीशु मसीह के जन्म के द्वारा पूरे हो गये। उस समय यशायाह नहीं जानता था कि वह क्या लिख रहा है।

पवित्र शास्त्र बाइबल का लेखक पवित्र आत्माः-

पवित्र आत्मा ने अपने शब्दों को मनुष्यों के अन्दर डाला और उन मनुष्यों ने अपने शब्दों और संस्कृति में उसे लिखा। बाइबल में कुल 66 पुस्तक है जिसमें एकाग्रता है। ऐसा क्यों है? पवित्र शास्त्र बाइबल का लेखक एक ही है और वह पवित्र आत्मा है। इसलिए सभी पुस्तकों में एकाग्रता है।

बाइबल में क्रमबद्ध प्रकाशन की एक समान रेखाः-

एक समान रेखा क्रमबद्ध प्रकाशन की हमें बाइबल में प्राप्त होती है। बाइबल की 66 पुस्तकें दो हजार साल के अन्तराल में लिखी गयीं। इन पुस्तकों के लेखक एक दूसरे से कभी नहीं मिले थे। एक लेखक दूसरे लेखक के विषय में नहीं जानता था। किन्तु पवित्र आत्मा की प्रेरणा पाकर पुस्तक लिख डाला। लेखक यह नहीं जानते थे कि जो कुछ वे लिख रहे हैं वे पूरे होते हैं।

बाइबल के समान और कोई पुस्तक नहींः-

पवित्र शास्त्र लिखने के इस कार्य में पवित्र आत्मा ने अनेक प्रकार के व्यक्तियों को बाइबल को लिखने के लिए उपयोग किया। बाइबल के समान और कोई पुस्तक नहीं है। बाइबल के अलावा अन्य पुस्तकें किसी

एक व्यक्ति द्वारा कुछ विशेष बातों के संग्रह के रुप में लिखी गयी हैं। जिसने उन्हें योजना बनाकर लिखा है। किन्तु बाइबल किसी एक व्यक्ति द्वारा योजना बनाकर नहीं लिखी गयी है। बाइबल के जो लेखक थे उनको पवित्र आत्मा ने उकसाया तब वे लिख सके।

उदाहरण के लिए दिल्ली बाइबल इन्स्टीट्यूट के छात्रों को परमेश्वर के बारे में लिखने के लिए दिया जाय, तो वे भिन्न-भिन्न बातें लिखेंगे क्योंकि यह पवित्र आत्मा की प्रेरणा से नहीं लिखा गया। किन्तु बाइबल पवित्र आत्मा की प्रेरणा से रचा गया।

उत्पत्ति की पुस्तक से पवित्र शास्त्र बाइबल शुरु होती है। उत्पत्ति में परमेश्वर ने सम्पूर्ण ब्रम्हाण्ड की और मनुष्य की सृष्टि किया। परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि अपने मार्ग पर अपनी इच्छानुसार मनुष्य को चलाने के लिए किया। किन्तु मनुष्य को अपने विवेक से चुनाव करने का अधिकार परमेश्वर ने प्रदान किया। शैतान के द्वारा मनुष्य के अन्दर जो पाप आया उसके कारण मनुष्य परमेश्वर का मार्ग छोड़कर अपने मार्ग पर चल दिया। परमेश्वर ने अपने मार्ग पर मनुष्य को चलाने की योजना बनाया। उसने एक व्यक्ति अब्राहम का चुनाव किया। परमेश्वर ने उसके और उसके संतान के साथ वाचा बांधा। अब्राहम के बाद इसहाक और उसके बाद याकूब और फिर बारह गोत्रों के साथ वाचा बांधा। यही बारह गोत्र इस्राएली कहलाते हैं। इसलिए कि ये परमेश्वर के वचनों के वाहक बन जाएं।

निर्गमन में परमेश्वर ने एक और व्यक्ति का चुनाव किया। परमेश्वर हर एक युग में एक व्यक्ति का चुनाव कर उसके द्वारा कार्य करता है। उसने निर्गमन मे मूसा का चुनाव किया। इसी प्रकार हम देखते हैं कि पुस्तकों का क्रम बढ़ता चला जाता है और 39 पुस्तकों के बाद एक देश के बारे में कहानी आ जाती है। जहां सभी बातें परमेश्वर के विरुद्ध हो जाती हैं। जिसमें 400 वर्ष का अन्तराल आता है, जिसे शान्ति काल या अन्धकार युग कहा जाता है।

बाइबल परमेश्वर के प्रकाशन का इतिहास है।:-

बाइबल परमेश्वर के प्रकाशन का इतिहास है। इसका अर्थ यह नहीं है कि विश्व का इतिहास रुक गया था। परन्तु यह जाति - बारह गोत्र जिनका चुनाव परमेश्वर ने अपना संदेश ले जाने के लिए किया था, उन्होंने परमेश्वर की योजना का इन्कार कर दिया। वे पाप करने लगे थे। इन 400 वर्षों के अन्तराल के बाद प्रभु यीशु मसीह स्वयं संसार में आ जाते हैं।

Creation Autonomous Academy

एक नयी योजना -उद्धार:-

परमेश्वर ने उद्धार की एक नयी योजना बनाया यीशु मसीह के माध्यम से । कोई भी व्यक्ति संसार में नहीं हुआ जिसके विषय में काफी वर्षों पहले से भविष्यद्वाणी की गयी हो। परमेश्वर ने अपनी योजना को समय पूरा होने पर पूर्ण किया। अपने पुत्र को संसार में भेज दिया।

सुसमाचार जिन नये लोगों के बारे में बात करता है, ये वे नये लोग हैं जिनका चुनाव संसार का उद्धार करने के लिए किया गया है। उद्धार के बारे में 27 पुस्तकें बताती हैं और 39 पुस्तकें मिलकर 66 होती हैं। दो हजार वर्ष के अन्तराल में ये पुस्तकें लिखी गयीं। परमेश्वर को अपने आपको पूर्ण रुप से बताने के लिए दो हजार वर्ष लगे। हमारा जन्म उस समय हुआ जब परमेश्वर अपनी योजना को पूरा कर दिया था।

पुराना नियम के अनुसार उद्धार के लिए बलिदान करना होता था। नया नियम मसीह यीशु के विश्वास के द्वारा उद्धार के बारे में चर्चा करता है। परमेश्वर को प्राप्त करने में तीन बाधाएं हैं-1 शरीर 2 संसार 3 शैतान।

परमेश्वर ने जो उद्धार यीशु मसीह के द्वारा दिया है वह सरल है। इसके लिए कोई कर्मकाण्ड नहीं करना पड़ता है। इसमें केवल यीशु मसीह पर विश्वास करना पड़ता है।

बाइबल स्वयं अपनी प्रेरणा को सिद्ध करती है।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-2

प्रकाशन

(Revelation)

प्रकाशन का अर्थ है प्रगटीकरण (रहस्योदघाटन)। परमेश्वर के आत्म प्रकाशन का अर्थ है कि परमेश्वर ने स्वयं के विषय ज्ञान को मनुष्य तक संचारित किया। मनुष्य जो सीमित है, मात्र स्वयं के प्रयत्नों से परमेश्वर के ज्ञान को प्राप्त नहीं कर सकता है। जब तक परमेश्वर न बोले और स्वयं को प्रगट न करे, हम उसे कभी भी नहीं जान सकते। जैसे-टेलीफोन की घंटी बजने पर उसके रिसीवर को बस अपने कान पर लगा लेने से हम नहीं बता सकते कि लाइन के दूसरी ओर कौन है। उसके बोलने तथा स्वयं को व्यक्त करने पर ही हम जान सकते हैं कि वह कौन है और क्या चाहता है। परमेश्वर को जानने में भी ठीक ऐसा ही है। यदि परमेश्वर शान्त रहे तो उसे हम कभी भी नहीं जान सकेंगे। परमेश्वर को अवश्य है कि वह सक्रिय हो और अपने आपको व्यक्त करे और उसने ऐसा ही किया है। उसने बोला और स्वयं को प्रगट किया है।

परमेश्वर के स्वयं को प्रगट करने के दो माध्यम हैं-

1-सामान्य प्रकाशन 2-विशिष्ट प्रकाशन

सामान्य प्रकाशनः-

सामान्य प्रकाशन से हमारा अर्थ उस ज्ञान से है जो हमें प्रकृति के अवलोकन से प्राप्त होता है। अवलोकन एवं तर्क की प्रक्रिया द्वारा हम कुछ निष्कर्षों तक पहुंच सकते हैं। उदाहरण के लिए हम किसी चीज जैसे एक घड़ी को देखकर कह सकते हैं कि-

1-यह घड़ी स्वतः ही अस्तित्व में नहीं आ गयी,

2-अवश्य ही इसे कोई न कोई बनाने वाला (कारीगर) बनाया है,

3-निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री व शक्ति के स्रोत उपलब्ध थे,

4-इसे खास उद्देश्य को ध्यान में रखकर बनाया गया है।

इसी प्रकार पृथ्वी, वायु, जल, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, मनुष्य, पक्षी, प्रकृति को हम देखते हैं तो ऐसा अनुभव करते हैं कि इन सबका कोई न कोई बनाने वाला है। संसार का कोई न कोई सृष्टिकर्ता अवश्य है। सामान्य प्रकाशन से हम परमेश्वर के बारे में एक सीमित समझ रखते हैं। लेकिन यदि हम उसके बारे में कुछ और मालुम करना चाहते हैं तो हमें उसको किसी भिन्न ढंग से जानना होगा।

विशिष्ट प्रकाशनः-

यद्यपि यह सच है कि प्रकृति और विश्व के चहुंओर के अवलोकन से हम परमेश्वर के बारे में कुछ जान सकते हैं। प्राकृतिक जगत के अवलोकन से हमें सृष्टिकर्ता की बुद्धि, शक्ति और महानता के प्रमाण मिलते हैं। लेकिन बिना परमेश्वर के विशिष्ट प्रकाशन और आत्म प्रकटीकरण के , परमेश्वर के बारे में हमारी समझ सीमित ही रह जाती है। प्रकृति के द्वारा हम यह नहीं जान पाते कि परमेश्वर कौन है और वह किस प्रकार का व्यक्ति है।

विशिष्ट प्रकाशन का अर्थ है पूर्ण प्रकाशन। विशिष्ट प्रकाशन परमेश्वर द्वारा अपनाया गया वह तरीका है जिसके द्वारा उसने अपने को हमारे ऊपर प्रगट किया। बाइबल परमेश्वर के विशिष्ट प्रकाशन का अभिलेख है। बाइबल में क्रम से धीरे-धीरे परमेश्वर ने अपने आपको प्रगट किया है। पवित्र शास्त्र बाइबल परमेश्वर के आत्म प्रकाशन का इतिहास है। पहले उसने अपने आपको मनुष्य पर प्रकट किया। परन्तु मनुष्य ने परमेश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन कर पाप किया। पवित्र परमेश्वर और अपवित्र मनुष्य, पवित्र परमेश्वर को एक सीधी रेखा के समान ले सकते हैं और अपवित्र मनुष्य को दूसरी रेखा के समान। दो समानान्तर रेखाएं कभी भी एक दूसरे से मिल नहीं सकती, गणित के नियमानुसार। ठीक उसी प्रकार परमेश्वर और मनुष्य का मेल नहीं हो सकता था। लेकिन परमेश्वर ने मनुष्य से प्रेम किया और व्यवस्था दिया, जिससे कि मनुष्य परमेश्वर के बताए मार्ग पर चले। लेकिन आदि मनुष्य आदम हव्वा के द्वारा आया जगत में पाप फिर भी मनुष्य के स्वभाव में उपस्थित रहा और अन्ततः परमेश्वर का प्रकाशन शिखर बिन्दु पर पहुंचा, जब परमेश्वर मसीह के रुप में देहधारी हुआ। जिससे कि मनुष्य अपने संसार के पाप मार्ग को छोड़कर परमेश्वर के मार्ग पर आ जाएं।

सामान्य प्रकाशन और विशिष्ट प्रकाशन का उद्देश्य यह है कि मनुष्य अपने मार्ग को छोंड़कर परमेश्वर के मार्ग पर आ जाएं।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-3

परमेश्वर

(God)

जब हम परमेश्वर के रुप में चर्चा करते हैं तब हम त्रियेकता की चर्चा करते हैं।

हम त्रियेक परमेश्वर की चर्चा करते हैं तो इसका अर्थ है एक परमेश्वर के तीन व्यक्तित्व। त्रियेकता को समझना कठिन है क्योंकि संसार में इसके उदाहरण हम नहीं देखते हैं।

जब भी हम परमेश्वर की बात करते हैं, तब परमेश्वर पिता की चर्चा करते हैं। इसका क्या अर्थ है? क्या परमेश्वर की कोई पत्नी थी? नहीं। परमेश्वर को कहीं भी पति नहीं बताया गया है, परन्तु पिता बताया गया है। पिता पीढ़ी का बोध कराता है, पिता परमेश्वर है। त्रियेकता में पिता परमेश्वर, पुत्र परमेश्वर, पवित्र आत्मा परमेश्वर की चर्चा की जाती है। पिता परमेश्वर है पुत्र यीशु मसीह है। पुत्र यीशु पीढ़ी का बोध नहीं कराता बल्कि अधिकार और पद का बोध कराता है। परमेश्वर और यीशु के बीच समानता का सम्बन्ध है। पिता का अधिकार पूर्ण रुप से पुत्र का हो जाता है। पुत्र पिता से पूर्ण रुप से स्वतन्त्र है। जब पिता संसार के उद्धार की योजना बना रहा था, तो पुत्र ने कहा मैं आपके मार्ग पर चलने के लिए तैयार हूं। यीशु पुत्र है और वह पूर्ण मनुष्य था। यीशु उद्धारकर्ता है। पवित्र आत्मा एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है। पवित्र आत्मा सहायता करने वाला है जिसके द्वारा हमें विश्वास में चलने की सामर्थ्य प्राप्त होती है। पिता सृष्टिकर्ता है, पुत्र उद्धारकर्ता है। पिता परमेश्वर, पुत्र परमेश्वर और पवित्र आत्मा परमेश्वर तीनों के कार्य भिन्न हैं किन्तु पिता-पुत्र-पवित्र आत्मा तीनों के गुण समान हैं। पिता-पुत्र-पवित्र आत्मा एक परमेश्वर के तीन व्यक्तित्व हैं।

1-परमेश्वर एक जीवित परमेश्वर है।:-

परमेश्वर एक जीवित परमेश्वर है और उसका अस्तित्व एक मनुष्य के समान है। इस संसार में बहुत सारे देवी -देवता हैं, परमेश्वर हैं और अनेक जीव-जन्तुओं, पेड़-पौधों आदि की उपासना होती है। परन्तु हमारा परमेश्वर कोई प्राचीन मन्दिर, बरगद का पेड़ आदि नहीं है जिसकी उपासना की जा सके। परन्तु हमारा परमेश्वर जीवित परमेश्वर है, जिसका व्यक्तित्व मनुष्य के समान है। क्योंकि यदि वचन के आरम्भ में पढ़ें तो लिखा है कि परमेश्वर ने अपनी समानता में मनुष्य को बनाया है। जिसका अर्थ है कि परमेश्वर आपके और मेरी तरह है। इसका दूसरा प्रमाण है कि प्रभु यीशु ने स्वीकार कर लिया कि वह मनुष्य है।

2-परमेश्वर कोई काल्पनिक व्यक्ति नहीं है।:-

परमेश्वर कोई काल्पनिक व्यक्ति नहीं है। काल्पनिक का अर्थ है कि किसी ने कल्पना कर लिया कि परमेश्वर इस तरह का है और उसने एक कहानी लिख दी। मन की श्रृद्धा से बने भगवान कल्पना के परमेश्वर हैं। कल्पना का परमेश्वर मनुष्य द्वारा बनाया गया है। वह स्वयं परमेश्वर नहीं है।

3-परमेश्वर कोई अकर्मण्य शक्ति नहीं है।:-

परमेश्वर कोई अकर्मण्य शक्ति नहीं है, न ही कोई भौतिक शक्ति है। परमेश्वर एक जीवित परमेश्वर है जिसका अस्तित्व मनुष्य के समान है। कोई ऐसी शक्ति नहीं है जिसके पास भावनाएं न हों। भावनाएं न रखने वाला परमेश्वर नहीं है। हमारा परमेश्वर जीवित परमेश्वर है और अपने खोज करने वालों पर अपने आपको प्रकट करता है। ऐसा परमेश्वर है जिससे हम लोग सम्पर्क कर सकते हैं, सम्बन्ध कायम कर सकते हैं। क्योंकि परमेश्वर हमारे साथ भी सम्पर्क रख सकता है। बाइबल में परमेश्वर एक वास्तविक व्यक्ति के रुप में दिखाया गया है। जिसका अर्थ है कि हम परमेश्पर के साथ रिश्ता रख सकते हैं। तभी मसीह में व्यक्तिगत परमेश्वर की चर्चा है। जब भी हम परमेश्वर के बारे में किसी से बात करते हैं तो उससे यह बताना जरुरी है कि परमेश्वर एक जीवित परमेश्वर है उससे हम रिश्ता कायम कर सकते हैं।

4-परमेश्वर सनातन एवं स्वयंभू है।:-

परमेश्वर सनातन एवं स्वयंभू है। सनातन का अर्थ है हमेशा-हमेशा रहने वाला, ऐसा परमेश्वर है जिसका न आरम्भ हुआ न अन्त है। स्वयंभू का अर्थ है कि स्वयं जीवन रखने वाला। उसे मनुष्य की तरह और चीजों पर आधारित नहीं होना पड़ता। परमेश्वर स्वयंजात है। परमेश्वर हर जगह है और हर जगह उपस्थित रहता है। परमेश्वर है और सर्वदा रहेगा।

परमेश्वर न केवल सनातन एवं स्वयंभू है, वह एक असीम परमेश्वर है। उसकी क्षमताएं असीमित हैं और उसका चरित्र सिद्ध है।

5-परमेश्वर सर्वव्यापी है।:-

परमेश्वर सर्वव्यापी है। सर्वव्यापी का अर्थ है कि वह सब वस्तुओं से अलग है और परमेश्वर की उपस्थिति समस्त विश्व में है। परमेश्वर का अस्तित्व जो कि अनादि एवं अनन्त से है और वह जो आत्मा है, वह समय व दूरी से स्वतन्त्र है। परमेश्वर सर्वव्यापी है क्योकि उसकी उपस्थिति हर एक स्थान में है, इसका तात्पर्य यह नहीं कि वह भौतिक वस्तुओं में है या उनका कोई भाग है। सृष्टिकर्ता परमेश्वर उस सृष्टि से जिसको उसने रचा पृथक है।

परमेश्वर इस विश्व के सभी पदार्थीय या अपदार्थीय अस्तित्वों से श्रेष्ठ है। परन्तु उसकी उपस्थिति सदा बनी रहती है। वह सब में व्यापक तौभी सबसे अलग है। वह इस रचे हुए विश्व से अलग तो है परन्तु वह इससे कभी अनुपस्थित या दूर नहीं। उदाहरणार्थ-जैसे कोई मनुष्य यात्रा में किसी विशेष स्थान से दूर रहता है। परमेश्वर से सम्बन्धित बाइबल का प्रकाशन हमें एक व्यक्तिगत परमेश्वर की महानता, उसकी महिमा और श्रेष्ठता का ज्ञान कराता है।

Creation Autonomous Academy

6-परमेश्वर सर्वशक्तिमान है।:-

ऐसा कोई भी कार्य नहीं है जो परमेश्वर न कर सके, परन्तु केवल वह कार्य जो उसके नैतिक चरित्र के प्रतिकूल हो। अर्थात वह ऐसा कोई भी कार्य नहीं करेगा जो उसके चरित्र के अनुकूल नहीं है। उसकी शक्ति असीमित है। उसका अधिकार सर्वश्रेष्ठ है। उसकी इच्छा सर्वप्रभुत्व सम्पन्न है। यह कितना महत्वपूर्ण है कि वह जिसकी शक्ति असीमित है उसका चरित्र भी सिद्ध हो। परमेश्वर सर्वशक्तिमान है परन्तु चरित्र में सिद्ध और पवित्र है।

7-परमेश्वर सर्वज्ञानी एवं सर्वबुद्धिमान है।:-

परमेश्वर न केवल परमबुद्धिमान है, परन्तु सर्वज्ञानी भी है। मनुष्य के विपरीत परमेश्वर का मस्तिष्क अपनी क्षमता में असीमित है। कुछ भी ऐसा नहीं है जो परमेश्वर की जानकरी, सचेतनता या ज्ञान से परे हो। उसे भूत, वर्तमान,भविष्य सभी का पूर्ण ज्ञान है।

परमेश्वर सभी समय सब वस्तुएं अपनी चेतना के केन्द्र में थामें रहता है। यह बात बाइबल में परमेश्वर के प्रकाशन के बिल्कुल केन्द्र में है और यह हम सबके लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। हममे से प्रत्येक यह कह सकता है कि मेरे जीवन में कुछ भी ऐसा नही है जो परमेश्वर से छिपा हुआ है। यहां तक कि मेरे विचारों और मेरे मन की गुप्त बातों को भी जानता है। उसे मेरे बारे में सब कुछ मालुम है। मेरे जीवन से जुड़ ी प्रत्येक बात की परमेश्वर हर समय जानकारी रखता है।

8-परमेश्वर अपरिवर्तनीय और सिद्ध है।:-

परमेश्वर की महानता और ऐश्वर्य को हम पहिले ही देख चुके हैं। परन्तु परमेश्वर की सम्पूर्ण महिमा को उसके नैतिक गुणों के प्रकाशन अर्थात उसका सिद्ध चरित्र एवं उसकी अपरिवर्तनीयता ही में देखा जा सकता है। परमेश्वर चरित्र में सिद्ध और पवित्र परमेश्वर है। परमेश्वर न बदलने वाला अर्थात अपरिवर्तनीय परमेश्वर है। परमेश्वर आज कुछ, तो कल कुछ नहीं हो सकता परन्तु वह सर्वदा से है, था और वैसा ही रहेगा। सिद्ध और अपरिवर्तनीय होने के कारण वह विश्वासयोग्य और निर्भर रहने लायक है।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-4

मनुष्य

(Human)

यदि हम किसी समस्या का हल निकालना चाहते हैं, तो बिना समाधान के तरीके जाने समस्याओं का समाधान नहीं समझ सकते। परमेश्वर और उसके मार्ग को जानना जरुरी है। बहुत जरुरी है कि मनुष्य अपने आपको जाने। नहीं ंतो मनुष्य जीवन भर भागते ही रहेगा।

1-मनुष्य का प्रारम्भः-

मानव जाति का प्रारम्भ कैसे हुआ? यह युग-युग का प्रश्न एक विशेष महत्व रखता है क्योंकि इसके प्रति हमारा उत्तर जीवन के प्रति हमारे रवैये को निश्चित करता है। यदि हम निश्चयता से यह जान सकें कि मनुष्य का प्रारम्भ कैसे हुआ तब हम उसे जान जाएंगे जो कि मानव की आवश्यकताओं और समस्याओं का पूर्ण एवं संतोषजनक उत्तर है।

क-परमेश्वर ने मनुष्य की सृष्टि कियाः-

यह एक तर्क संगत बात है कि प्रत्येक प्रभाव का एक कारण होता है, कि बिना किसी चित्रकार के चित्र नहीं हो सकता, बिना किसी योजना बनाने वाले के योजना नहीं हो सकती। इस युग में हम विभिन्न प्रकार के आधुनिक यन्त्रों और औजारों का प्रयोग करते हैं परन्तु हम यह सोच नहीं सकते, कि इनमें से साधारण से साधारण भी, अपने आप से अस्तित्व में आया हो। इनमें से प्रत्येक इसके बनाने वाले की साक्षी देता है। यह विश्व जिसके हम एक भाग हैं, इसमें हम हर एक स्थान में बुद्धिमान विचार, योजना और उद्देश्य को देखते हैं। हम मनुष्यों का अस्तित्व भी कोई कम अचम्भित करने वाला नहीं है, मन और देह की अनोखी शक्तियां जो कि मनुष्य के पास हैं और उनका आपस में विचित्र सहयोग इस तथ्य का प्रमाण है। मनुष्य एक श्रेष्ठ रचनात्मक शक्ति का उत्पाद है। परमेश्वर हमारे अस्तित्व का कर्ता है।

ख-परमेश्वर ने मनुष्य की रचना कीः-

बाइबल के प्रारम्भिक कथन परमेश्वर की रचनात्मक क्रिया का वर्णन हैं। जिसमें कि परमेश्वर के समान अस्तित्व की घोषणा है और जिससे सभी वस्तुएं परमेश्वर के साथ एक सृष्टिकर्ता होने के नाते जुड़ जाती हैं। अर्थात परमेश्वर किस प्रकार एक क्रमबद्ध संसार को अस्तित्व में लाया। जो कुछ उसने बनाया वह सब सिद्ध और उसके अपने ही अस्तित्व से मेल खाता था। इससे परमेश्वर की असीम शक्ति, बुद्धि और

भलाई प्रकट होती है। परमेश्वर ने जब मनुष्य को बनाया तब आरम्भिक मनुष्य भी सिद्ध और परमेश्वर के अस्तित्व से मेल खाता था।

ग-मनुष्य परमेश्वर की सर्वोत्तम रचना हैः-

सबसे प्रमुख बात यह है कि मनुष्य परमेश्वर की सर्वश्रेष्ठ सृष्टि है। जिसका अर्थ है कि सृष्टिकर्ता ने बहुत सारी चीजों का निर्माण किया परन्तु मनुष्य सृष्टि का शिखर है। परमेश्वर ने मनुष्य को अपनी समानता में बनाया। जबकि सृष्टि की अन्य रचनाएं परमेश्वर ने अपनी समानता में नहीं बनाया। जिसका अर्थ है कि मनुष्य को परमेश्वर ने एक बहुत उच्च पद पर बनाया है। मनुष्य परमेश्वर की सर्वोत्तम रचना है।

जब परमेश्वर ने आदम को मिट्टी से बनाया और उसके नथनों में श्वांस फूंका तब मनुष्य जीवित प्राणी बन गया। मनुष्य केवल जीवधारी नहीं बल्कि एक जीवित मनुष्य है। मनुष्य के जीवित प्राणी होने का अर्थ है कि आत्मा और देह का एक सुन्दर मिलन। जीवित प्राणी के साथ मनुष्य को परमेश्वर ने स्वयं इच्छा दी है। मनुष्य अपने लिए अपनी इच्छा से निर्णय ले सकता है। स्वयं इच्छा के इस्तेमाल से मनुष्य परमेश्वर को स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है। पाप करे या अच्छे मार्ग पर चले मनुष्य को चुनने के लिए परमेश्वर ने स्वतंत्रता प्रदान की है। परमेश्वर ने मनुष्य के अलावा और किसी प्राणी को स्वयं इच्छा नहीं दी है।

आजकल मशीन का युग है, विभिन्न देशों में मशीन के द्वारा मनुष्य बनाये गए हैं जिनको रोबोट कहा जाता है। ये मशीनी मनुष्य (रोबोट) मनुष्य की ही तरह विभिन्न कार्य कर सकते हैं, किन्तु वे अपने आप कार्य नहीं कर सकते। क्योंकि वे मशीन हैं जो मनुष्य की इच्छा से कार्य करते हैं। परमेश्वर मनुष्य को भी मशीन की तरह बना सकता था। परन्तु परमेश्वर ने मनुष्य को आत्मा दिया। आत्मा वह सम्पर्क है जिसके द्वारा मनुष्य परमेश्वर से संगति रख सकता है। जबकि अन्य प्राणियों को यह विशेषता नहीं दी गयी है। अन्य प्राणी मनुष्य के साथ संगति कर सकते हैं।

2-मनुष्य का स्वभावः-

यह जान लेने के बाद कि बाइबल मनुष्य के अस्तित्व के बारे में क्या कहती है, अब हम जानना चाहेंगे कि यह मनुष्य के वास्तविक स्वभाव के बारे में क्या कहती है, उसकी बनावट किस प्रकार की है? उसकी स्थिति क्या है? उसका दूसरी वस्तुओं और प्राणियों से क्या सम्बन्ध है? उसका अन्त क्या है? और उसका अस्तित्व किस उद्देश्य के निमित्त है?

Creation Autonomous Academy

क-मानव व्यक्तित्वः-

वह कौन सी बात है जो कि मनुष्य को अन्य रची हुई वस्तुओं अर्थात जीव और निर्जीव दोनों ही से विभाजित करती है? परमेश्वर ने मनुष्य को 'एक जीवित प्राणी' और 'अपनी समानता में बनाया ।'

'एक जीवित प्राणी', 'परमेश्वर की समानता में' अर्थात साक्षात परमेश्वर की तरह मनुष्य भी एक व्यक्तित्व है। जब परमेश्वर ने मनुष्य की रचना की तो उसने उसे जीवित व्यक्तित्व बनाया, केवल एक यन्त्र मात्र नहीं।

पहला मनुष्य परमेश्वर की रचनात्मक क्रिया के परिणाम स्वरुप, एक पूर्ण सिद्ध विकसित मनुष्य के रुप में अस्तित्व में आया। इस रचना क्रिया का पहला चरण परमेश्वर के द्वारा उस मिट्टी से मानवीय देह को संवारने का था जिसको वह पहले से ही अस्तित्व में ला चुका था। यह क्रिया जीवन के श्वांस फूंकने और परमेश्वर के द्वारा आत्मा प्रदान करने के द्वारा पूर्ण हुई। ताकि मनुष्य न केवल एक जीवित शरीर के रुप में अस्तित्व में आया, जो जिए और मर जाए जैसे कि मैदान की घास हो, बल्कि एक व्यक्तित्व वाला प्राणी हो। एक ऐसा व्यक्ति जिसके पास अपने एक निचले स्तर की सृष्टि से अधिक शक्ति और क्षमता हो।

ख-मनुष्य :भौतिक, नैतिक और आत्मिक प्राणी है।:-

परमेश्वर ने मनुष्य के नथनों में जीवन का श्वांस फूंक दिया और मनुष्य प्राकृतिक व शारीरिक जीवन पाया हुआ जीविता प्राणी बन गया। जीवधारी मात्र नहीं परन्तु एक जीवित व्यक्तित्व। मनुष्य एक शरीर मात्र नहीं है और न ही वह आत्मा है और न ही मात्र एक आत्मा एक देह में कैद के रुप में है, बल्कि वह एक जीवित व्यक्तित्व है जिसके पास देह और आत्मा है। इस प्रकार हम पूर्ण मनुष्य को एक जीवित प्राणी के रुप मे सोचते हैं जिसके पास देह, आत्मा, मन व भावनाएं हैं। इन गुणों के कारण मनुष्य एक नैतिक स्वभाव वाला प्राणी है। परमेश्वर की समानता में रचे गये मनुष्य की बनावट में शारीरिक, बुद्धि, भावनाएं, नैतिक और आत्मिक यह सब तत्व पाये जाते हैं।

ग-मनुष्य की एकता और भिन्नताः-

बाइबल मनुष्य जाति की एकता के तथ्य और उसकी अपेक्षाओं के ऊपर बहुत जोर देती है। यह घोषणा करती है कि मानव जाति का आरम्भ एक मनुष्य और एक स्त्री से हुआ। वे परमेश्वर के द्वारा रचे गये थे, क्योंकि परमेश्वर सबका रचयिता है, इसलिए सब मनुष्यों का नाता परमेश्वर से है और सब उसके सम्मुख एक समान हैं। मानव जाति में हम विभिन्नता और एकता दोनों ही को देखते हैं। एक तरफ हम उन बातों को देखते हैं जो कि मनुष्यों को एक दूसरे से भिन्न बनाती हैं। दूसरी ओर हम उन बातों को देखते हैं जो मनुष्य जाति में समानता दर्शाती हैं। यद्यपि मनुष्य जाति में भेद राष्ट्रीयता, सभ्यता, भाषा, धर्म, विचारधारा आदि के आधार पर होता है, फिर भी हम समस्त मानवों में एक साधारण बन्धुत्व को देख सकते हैं, जिसमें मनुष्य, एक मनुष्य होने के नाते उस समानता को पहिचानता है, जो उसकी अन्य मनुष्यों के साथ है, जो रहन-सहन के तौर तरीके या जाति के परे हैं। मनुष्य विभिन्न प्रकार का भोजन खाने वाले हो सकते हैं परन्तु उनकी देह

Creation Autonomous Academy

का पालन पोषण, पाचन और समीकरण एक ही मूल नियम से होता है। एक शल्य चिकित्सक अपने रोगी पर आपरेशन करते समय यह नहीं सोचता कि रोगी की राष्ट्रीयता, धर्म या भाषा क्या है। वह मनुष्य को एक प्राणी के रुप में देखता है और जीवन के उन सामान्य नियमों के विषय सोचता है जिनसे मानव देह का कार्य चलता है।

3-मानव व्यक्तित्व के पहलूः-

मानव व्यक्तित्व के निम्नलिखित पहलू हैं-

क-परमेश्वर के साथ संगति रखने की क्षमताः-

मनुष्य परमेश्वर की समानता में होने के तथ्य में, एक गहन सच्चाई है। मनुष्य के पास उसी के समान अन्य मनुष्यों के साथ सम्पर्क और संगति रखने की क्षमता पायी जाती है। हम अपनी दूसरों के साथ संगति रखने की इस आवश्यकता के प्रति निरन्तर जागरुक हैं। हम अलगाव के जीवन में, जीवन की भरपूरी और परिपूर्णता नहीं पा सकते। हमें दूसरों की संगति की आवश्यकता है, परन्तु इससे भी बढ़कर हमें परमेश्वर की आवश्यकता है।

मनुष्य को अपने ही समान एक व्यक्तित्व देते हुए परमेश्वर ने मनुष्य को सम्पर्क रखने की, अपने साथ संगति रखने की और उसके जीवन में भागी होने की क्षमता प्रदान की है। परमेश्वर के साथ संगति रखे बिना मनुष्य का जीवन अधूरा है और उसमें कोई सच्ची परिपूर्णता नहीं। मनुष्य परमेश्वर के साथ संगति रखने के लिए बनाया गया था। उसके जीवन को परमेश्वर में केंद्रित होकर सिद्धता पाना था। मनुष्य के जीवन से परमेश्वर का निकल जाना उसे बेचैन और एक असन्तुष्ट प्राणी करके छोंड़ देता है। मनुष्य के जीवन में जीवित परमेश्वर का स्थान और कोई नहीं ले सकता। उसे अवश्य ही विश्वास के द्वारा परमेश्वर के निकट उसके ईश्वरीय व्यक्तित्व को यह मानकर आना है कि वह उसके जीवन और उसकी भलाई के लिए आवश्यक है।

Creation Autonomous Academy

ख-अविनाशी व्यक्तित्वः-

मनुष्य के व्यक्तित्व का एक प्रारम्भ है। बाइबल सिखाती है कि परमेश्वर ने रचना की क्रिया के द्वारा पहिले पुरुष और पहिली स्त्री को पूर्ण विकसित व्यक्ति के रुप में अस्तित्व में लाया और इस पुरुष से पूर्व कोई भी मानव का व्यक्तित्व नहीं था।

इस पहले पुरुष और पहली स्त्री से मानव जाति अस्तित्व में आई। प्रत्येक जन्म के समय एक नया व्यक्ति उत्पन्न होता है जिसका पहले कोई अस्तित्व न था। यह नया व्यक्तित्व, शारीरिक मृत्यु के समय अपना अस्तित्व समाप्त नहीं कर देता, एक पुरुष अथवा स्त्री सर्वदा तक जिएंगे। पुरुष और स्त्री कुछ भी हों फिर से इस संसार में प्रवेश नहीं करते और न ही मानव आत्मा नई देह में प्रवेश कर फिर से जन्म लेती है। वे अपना

व्यक्तित्व और एकरुपता बनाए रखते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के पास इस पृथ्वी पर और अनन्त जीवन जीने के लिए एक ही जीवन है। व्यक्ति एक और वही व्यक्ति के रुप में हमेशा रहेगा। मानव व्यक्तित्व अविनाशी है।

ग-आश्रित और उत्तरदायी प्राणीः-

परमेश्वर की समानता में मनुष्य एक नैतिक योग्यताओं और गुणों से युक्त नैतिक प्राणी है। उसके जीवन के स्रोत उसके नैतिक चरित्र के रुप में हैं और उसके अस्तित्व के निर्णायक नियम शारीरिक नहीं परन्तु नैतिक और आत्मिक हों यह उसकी अनोखी संरचना और उसकी परमेश्वर के साथ संगति पर आधारित है।

मनुष्य परमेश्वर की तरह अपना अस्तित्व स्वयं रखने वाला नहीं है परन्तु परमेश्वर के द्वारा रचे जाने के कारण वह एक आश्रित प्राणी है। उसकी बेहतरी और पालन पोषण के लिए मनुष्य उस स्रोत पर आधारित है जिससे उसने अपना जीवन और अस्तित्व पाया है। एक नैतिक प्राणी होने के नाते मनुष्य का अस्तित्व और उसका जीवन नैतिक नियमों पर आधारित है। नैतिक स्वभाव रखने और बुद्धिमान प्राणी होने के नाते जिसके पास स्वतन्त्र इच्छा भी हो, वो मनुष्य एक उत्तरदायी प्राणी है। मनुष्य जीवन को परमेश्वर के चरित्र की पूरी समानता में होना चाहिए। अपने अस्तित्व सम्बन्धी नियमों के उल्लंघन करने पर गम्भीर परिणाम होना अवश्यम्भावी है और इसका पूर्ण उत्तरदायित्व स्वयं मनुष्य का ही होगा।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-5

पाप

(Sin)

हम अपने बारे में सच्चाई जानना चाहते हैं। हम अपने हृदयों के खालीपन को भरने और अपनी आत्माओं की भूख को मिटाने के लिए कुछ चाहते हैं। हम मानव जीवन में घटने वाली भयंकर समस्याओं का उत्तर पाना चाहते हैं। हम मानव की आशाहीनता और संकट की स्थिति से निकास की खोज में रहते हैं। पवित्र शास्त्र बाइबल मनुष्य की समस्या का समाधान देती है।

पाप के बारे में जानने के लिए पाप की परिभाषा होना जरुरी है।-

पाप की परिभाषाः-

'परमेश्वर की आज्ञाओं का उल्लंघन करना पाप है।'

पाप की वास्तविकताः-

पाप की वास्तविकता हर एक दिन, हर समय, हमारे बीच बनी रहती है। बाइबल हमें सिखाती है कि इस संसार में दुख, संकट और मृत्यु के पीछे पाप का तथ्य है। मनुष्य की समस्या पाप की समस्या है और मनुष्य की यह पाप की समस्या परमेश्वर के बिना हल नहीं हो सकती।

मनुष्य ने पाप कियाः-

परमेश्वर ने आदम हव्वा को अदन की वाटिका में रखा। अदन की वाटिका में ऐसे बहुत से वृक्ष थे जो कि देखने में मनभावक और जिनके फल खाने के लिए अच्छे थे। परन्तु उनमें से दो ऐसे वृक्ष थे जो दूसरे सभी वृक्षों से भिन्न थे। उनमें से प्रत्येक का विशेष चरित्र था। प्रत्येक का गहन महत्व था। इन वृक्षों के चिन्ह में हमारे सम्मुख वे विचार प्रस्तुत किए गए हैं जिन्होंने मानव इतिहास और मानव भवितव्यता के क्रम को निश्चित किया है। एक वृक्ष को 'जीवन का वृक्ष' और दूसरे को 'अच्छे और बुरे के ज्ञान का वृक्ष' की संज्ञा दी गयी है। मनुष्य की पहुंच दोनों वृक्षों तक थी परन्तु उसे अच्छे और बुरे के ज्ञान के वृक्ष से खाने को परमेश्वर द्वारा मना किया गया था।

वाटिका के मध्य में जीवन का वृक्ष परमेश्वर का मनुष्य के प्रति उद्देश्य के चिन्ह के रुप में खड़ा था, कि मनुष्य का कुल स्वभाव जीवन और अमरत्व का भागीदार हो, वह यह कि उसकी देह फिर से वापिस भूमि में मिलकर मिट्टी न बन जाए, परन्तु यह आत्मा के अमर जीवन की भागीदार हो जाए, ताकि अनन्त जीवन

और परमेश्वर के साथ सहभागिता में, मनुष्य की परिपूर्णता को प्राप्त कर सके। जीवन का वृक्ष जीवन की उस मीरास का चिन्ह है जिसका परमेश्वर ने मनुष्य के लिए प्रयोजन किया है।

अच्छे और बुरे के ज्ञान का वृक्ष आज्ञाकारिता के परीक्षण के लिए था। यह परीक्षा काल का माध्यम था जिसके द्वारा मनुष्य विचारशील और उत्तरदायी प्राणी के समान चुनाव करेगा और अपनी मंजिल को समझने में पहिला कदम उठाएगा जो कि उसके लिए , जीवन के वृक्ष में सांकेतिक रुप से प्रकट की गयी है।

परमेश्वर की इच्छा थी कि मनुष्य उस स्वतन्त्रता का प्रयोग करते हुए जो उसे परमेश्वर द्वारा मिली थी अपनी इच्छा को परमेश्वर की इच्छा के साथ आज्ञाकारिता, प्रेम और विश्वास में जोड़ेगा। ऐसा करने से मनुष्य परमेश्वर के प्रति और गहरे और पूर्ण अनुभव में बढ़ेगा, ताकि परमेश्वर में एकता और सहभागिता रखते हुए जीवन और अमरता का भागीदार हो जाए। मनुष्य अपने अन्तिम उद्देश्य और महिमा को, अपने सृष्टिकर्ता परमेश्वर, रचयिता के साथ सनातन अस्तित्व समझेगा।

मनुष्य के सम्मुख एक कठिन परीक्षा है। वह कौन सा मार्ग अपनाएगा? क्या उसका जीवन और क्रियाएं परमेश्वर की इच्छा और चरित्र के सदृश्य होंगी अथवा वह अपना ही मार्ग अपनाएगा? क्या वह परमेश्वर की इच्छा पूरी करेगा या नहीं? एक ओर तो परमेश्वर का वचन है,'यदि तुम खाओगे तो तुम निश्चय मर जाओगे।' दूसरे हाथ परीक्षा करने वाले का वचन है,'तुम निश्चय नहीं मरोगे तुम परमेश्वर के तुल्य हो जाओगे।'

क्या हुआ? मनुष्य ने अपना चुनाव किया। स्वेच्छा से और जानते हुए उसने सीमा पार कर ली। उसने वह किया जो परमेश्वर ने उसे करने को मना किया था। जी हां, मनुष्य ने परमेश्वर के विरुद्ध पाप किया। उसने अपने रचयिता की ओर अपनी पीठ फेर दी जिस पर वह अपनी सर्वोत्तम भलाई के लिए आश्रित था। उसने अपना जीवन परमेश्वर के साथ संगति रुपी विरासत को खो दिया और इस संसार को पतन के क्रम की ओर ढकेल दिया।

पाप के परिणामः-

मानव पाप उस आवश्यक स्वतन्त्रता का दुरुपयोग करने से हुआ जो परमेश्वर ने मनुष्य को बुद्धिमान और नैतिक प्राणी होने के नाते दी थी। अच्छाई का इन्कार करने में और बुराई का चुनाव करने में स्वतन्त्र मनुष्य ने पाप का पथ चुना। परमेश्वर की इच्छा और चरित्र में चलना और उसकी एकता में रहने की स्वतन्त्रता के स्थान पर मनुष्य ने परमेश्वर से फिर कर स्वेच्छा से और जानबूझकर ऐसा कदम उठाया जिसने मानव जाति के प्रति संकट पैदा कर दिया, जिसका वह पिता और मुखिया था। पहिले मनुष्य आदम ने परमेश्वर के विरुद्ध पाप किया जिसके भयंकर परिणाम व्यक्तिगत और उसके संतान के लिए विश्वव्यापी थे।

मनुष्य के पाप के परिणाम इस प्रकार हैं-

1-मनुष्य ने अपना चरित्र खो दिया। उसने धार्मिकता खो दी। वह अपवित्र बन गया।

2-मनुष्य ने अपनी सामाजिक स्थिति, परमेश्वर के साथ अपने स्थान और सम्पर्क को खो दिया।

Creation Autonomous Academy

3-मनुष्य ने अपना पैतृक धन खो दिया,परमेश्वर के साथ एकता में अनन्त जीवन की विरासत को खो दिया।
4-मनुष्य ने अपनी स्वतन्त्रता खो दी। संकल्प शक्ति के बिगाड़ और स्वभाव की भ्रष्टता में मनुष्य पाप का दास बन गया।
5-मनुष्य ने परमेश्वर का ज्ञान खो दिया, वह परमेश्वर के विषय में अज्ञान तथा आध्यात्मिक रुप से अन्धा हो गया।
6-मनुष्य परमेश्वर से पराधीन, अलग हो गया। वह आत्मिक रुप से मृतक हो गया।
7-मनुष्य स्वार्थी हो गया और उसका जीवन आत्म केन्द्रित बन गया। उसने परमेश्वर और साथी मनुष्यों के साथ एकता और सहभागिता को खो दिया। वह शान्ति से रह नहीं सकता था।

मनुष्य के पास एक व्यक्तित्व है जिसकी पूर्ति केवल परमेश्वर में ही की जा सकती है और तौभी वह परमेश्वर से अलग और दूर है उसे परमेश्वर की आवश्यकता है। तौभी वह परमेश्वर के जीवन से अलग और दूर है। वह अपने रचयिता परमेश्वर के सम्मुख एक पापी, दोषी और असहाय अवस्था में है।

पाप की समस्याः-

मनुष्य एक बुद्धिमान, नैतिक और उत्तरदायी प्राणी है। पापी होने के नाते मनुष्य परमेश्वर के सम्मुख दोषी है, वह मृत्यु दण्ड और सनातन दण्ड के अधीन है, एक ऐसा न्याय जो कि न्यायपूर्ण और ठीक है। वह अपने ही प्रयत्नों से न तो अपने पापों को मिटा सकता है और न ही अपने दोष को दूर कर सकता है। उसके धार्मिक कार्य अधिक से अधिक केवल सामान्य नैतिक कर्तव्य को ही पूरा कर सकते हैं। उनमें ऐसा कोई गुण या योग्यता नहीं कि उसके भूतकाल के पापों से उसे छुटकारा दिला सकें। एक मनुष्य चाहे कितने ही वर्ष जिए और कितनी भी भलाई करे, वह पाप के दोष और परिणाम को दूर नहीं कर सकता और खोए हुए पैतृक धन को फिर से नहीं पा सकता।

पाप से कौन छुड़ा सकता है?:-

पाप के भयंकर परिणामों से हमें कौन छुड़ा सकता है? परमेश्वर मनुष्य से प्रेम करता है। मनुष्य ने परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करके पाप किया। परमेश्वर ने मनुष्य के पाप से छुटकारे की योजना बनाया, परमेश्वर द्वारा की गयी भविष्यद्वाणी उत्पत्ति 3:15 के अनुसार परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र प्रभु यीशु मसीह को इस संसार में भेजा। प्रभु यीशु मसीह ने क्रूस पर अपने को बलिदान करके शैतान के अधिकार को खत्म कर दिया।

परमेश्वर ने पाप से छुटकारे के लिए ही अपने एकलौते पुत्र को दिया ताकि मनुष्य का पाप से उद्धार हो सके। प्रभु यीशु मसीह उद्धारकर्ता है और केवल वही पापों से छुड़ा सकता है।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-6

प्रभु यीशु मसीह

(Lord Jesus Christ)

1- पूर्व अस्तित्व

बाइबल की सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा प्रभु यीशु मसीह पर केन्द्रित है--वह कौन है और क्या करता है। उसके बारे में अध्ययन करते समय यह आवश्यक है कि हम स्वाभाविक मानव जीवन के आरम्भ से पूर्व की स्थिति पर ध्यान करें।

यीशु मसीह के जीवन के विषय में बाइबल ही एकमात्र प्रमाणिक स्रोत है। अन्य कहीं से प्राप्त जानकारी पूर्णतः काल्पनिक है --यदि वह बाइबल पर आधारित नहीं है। सुसमाचार इस पृथ्वी पर मसीह के जीवन का विवरण हैः मत्ती और लूका बैतलहम में उसके जीवन से आरम्भ करते हैं, मरकुस अपना विवरण तीस वर्ष की आयु में यीशु द्वारा अपनी जन सेवा शुरु करने के समय से आरम्भ करता है, तथा यूहन्ना का सुसमाचार मसीह की अनन्तता के तथ्य पर, अर्थात उसके पूर्व अस्तित्व पर बल देता है।

पूर्व अस्तित्व का बिल्कुल वही अर्थ है जैसा प्रतीत होता हैः पूर्व (पहले से) अस्तित्व (होना) --अर्थात इस पृथ्वी पर रहने से पहले भी मसीह जीवित था। हम ऐसा इसलिए जानते हैं क्योंकि यह बाइबल में बताया गया है। पुराने और नये नियम में अनेक जगह पर उसके पूर्व अस्तित्व का वर्णन है। मीका 5:2 बताता है कि वह कहां पैदा होगा और फिर कहता है कि वह 'प्राचीनकाल से वरन् अनादिकाल से, होता आया है।' यशायाह अपना अनुभव बताता है जब उसने परमेश्वर को 'ऊंचे सिंहासन पर विराजमान देखा।' यशायाह मसीह के बैतलहम में जन्म लेने से सात सौ वर्ष पहले हुआ था, परन्तु यूहन्ना इस घटना की ओर संकेत करता हुआ कहता है कि यशायाह मसीह के विषय में बोल रहा था (यूहन्ना 12:41)

यूहन्ना 1:1-2----निश्चित रुप से बताता है कि ' आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन परमेश्वर था। यही आदि में परमेश्वर के साथ था।' यह मसीह के पूर्व अस्तित्व को निर्णायक रुप से सिद्ध करता है। वह न सिर्फ परमेश्वर के साथ था परन्तु वह सृष्टि की रचना से पहले भी परमेश्वर था। वह त्रियकत्व का सदस्य है और परमेश्वर पिता तथा परमेश्वर पवित्र आत्मा के समान है। यीशु ने स्वयं अपने पूर्व अस्तित्व का स्पष्ट दावा यूहन्ना 17:5 में लिखी अपनी प्रार्थना में कियाः 'और अब, हे पिता, तू अपने साथ मेरी महिमा उस महिमा से कर जो जगत के होने से पहिले, मेरी तेरे साथ थी।' उसने यहूदी अगुए से कहा,'कि पहले इससे कि इब्राहीम उत्पन्न हुआ मैं हूं।' (यूहन्ना 8:58) इब्राहीम की जीवनी उत्पत्ति के 11 से 25 अध्यायों में लिखी हुई है। ऐतिहासिक रुप से वह मसीह से 2000 वर्ष पहले हुआ था। तौभी इन विशेष क्रिया और कालों का प्रयोग करने के द्वारा यीशु यह कह रहा था कि इस संसार में जन्म लेने से पहले भी उसका अस्तित्व था, क्योंकि वह इब्राहीम से पहले था। यहूदी पहचान गए कि वह अनन्त होने का दावा कर

रहा था, जो कि परमेश्वर होने का दावा था। इब्रानियों 13:8 में यीशु मसीह के विषय में कहा गया है कि वह,‘ कल और आज और युगानुयुग एक सा है।’ वह अनन्त है।

यहां पर मसीह के पूर्व अस्तित्व के विषय में स्पष्ट जानकारी होना नितान्त आवश्यक है। यदि वह अनन्त नहीं है--अर्थात यदि वह पहिले से जीवित नहीं था--तब वह इतिहास में एक निश्चित समय पर अस्तित्व में आया (पैदा हुआ)। यदि यह सच है, तब वह परमेश्वर नहीं हो सकता, क्योंकि परमेश्वर के लिए अनन्त होना आवश्यक है।

मानवीय रुप में, यीशु का एक आरम्भ था, वह बैतलहम में पैदा हुआ। यशायाह 9:6 कहता है ‘हमारे लिए एक बालक उत्पन्न हुआ’ ईश्वरीय रुप में, मसीह का कोई आरम्भ नहीं था, वह तो पुत्र था जो दिया गया (यशायाह 9:6) जो अनन्त काल से जीवित था।

पुराने नियम के प्रमाणः-

पवित्र शास्त्र बताता है कि सम्पूर्ण पुराने नियम के समय में मसीह पृथक तथा व्यक्तिगत रुप से विद्यमान था। पुराने नियम के दर्शन, जिन्हें ईश दर्शन कहते हैं, इस बात का प्रमाण है कि मसीह बैतलहम में जन्म लेने से पूर्व विद्यमान था। मसीह के एक मानव या स्वर्गदूत के रुप में दर्शन को ईश दर्शन कहते हैं। जॉन एफ० वॉलवूर्ड लिखते हैं, ‘हम यह विश्वासनीय रुप से मान सकते हैं कि पुराने नियम में परमेश्वर का दिखाई देने वाले शारीरिक रुप में प्रत्येक प्रकटीकरण प्रभु यीशु मसीह का ही रुप है।’ * इसमें मुख्य हैः

(1) ‘यहोवा के दूत’ के रुप में-

हाजिरा को उत्पत्ति 16:7-13,21:17-19 में,
इब्राहीम को उत्पत्ति 22:11-18 में,
मूसा को निर्गमन 3:2 में,
गिदोन को न्यायियों 6 में,
शिमशोन के माता पिता को न्यायियों 13 में।

Creation Autonomous Academy

(2) एक मानव के रुप में-

इब्राहीम पर उत्पत्ति 18 में,
याकूब पर उत्पत्ति 32:24-32 में।
‘यहोवा का दूत’ नए नियम में नहीं प्रगट होता, क्योंकि वह देहधारी मसीह बन गया था।

नए नियम के प्रमाणः-

यहां स्पष्ट वर्णन है कि अपने पूर्व अस्तित्व में मसीह कार्यशील था।

सृष्टि की रचना में: यूहन्ना 1:3 कहता है, 'सब कुछ उसी के द्वारा उत्पन्न हुआ और जो कुछ उत्पन्न हुआ, उसमें से कोई भी वस्तु उसके बिना उत्पन्न न हुई।' कुलुस्सियों 1:16 तथा इब्रानियों 2:10 स्पष्टीकरण करते हैं कि सब कुछ - जिसमें अनदेखी प्रधानताएं तथा अधिकार (शक्तियां) तथा दिखाई देने वाला यह विश्व भी शामिल है- वह न सिर्फ उसके द्वारा, परन्तु उसके लिए बनाया गया।

सृष्टि के नियंत्रण में: इब्रानियों 1:3 कहता है कि यह मसीह है जो 'सब वस्तुओं को अपने सामर्थ्य के वचन से सम्भालता है'। जब मसीह इस पृथ्वी पर (मनुष्य के रुप में) था तो उसे प्रकृति पर अधिकार था। वह एक तूफान को रुकने की आज्ञा दे सकता था (मरकुस 4:39), पानी पर चल सकता था (यूहन्ना 6:19-20), रोटियों को कई गुणा बढ़ा सकता था (यूहन्ना 6), तथा मरे हुए व्यक्ति को जीवित कर सकता था (यूहन्ना 11)। चूंकि केवल परमेश्वर के पास ही ऐसी शक्ति है तथा परमेश्वर को -परमेश्वर होने के लिए -अनन्त होना आवश्यक है-निष्कर्ष यही निकलता है कि यीशु मसीह परमेश्वर है।

उद्धार में: पवित्रशास्त्र अनेक बार परमेश्वर के महान उद्देश्य, अर्थात मनुष्य जाति को पाप से छुड़ाने के बारे में बताता है। सबसे पहले उत्पत्ति 3:15 में शैतान को कुचल डालने के लिए आने वाले का वर्णन है। आगे अन्य स्पष्ट भविष्यवाणियां हैं, जैसे कि यशायाह 9:6-7,जहां नए नियम में मसीह के आने का वर्णन है। एक छुड़ाने वाला भेजने का परमेश्वर का उद्देश्य, उत्पत्ति से देहधारण तक, सदियों से स्पष्ट था। इफिसियों 1:4 और भी स्पष्टता से बताता है कि यह उद्देश्य 'जगत की उत्पत्ति से पहिले' से था तथा वह 'उस सनातन मनसा के अनुसार था, जो उसने हमारे प्रभु मसीह यीशु में की थी।' (इफिसियो 3:11) इससे बढ़कर परमेश्वर का अनुग्रह 'मसीह यीशु में सनातन से हम पर हुआ है' (2 तीमुथियुस 1:9)। चूंकि उद्धार की ईश्वरीय योजना जगत की उत्पत्ति से पहले बन चुकी थी तथा यीशु मसीह में केन्द्रित थी, इसलिए हमारे पास उसके पूर्व अस्तित्व का अतिरिक्त प्रमाण है।

यदि हम इस सत्य को अस्वीकार करते हैं तो हम पवित्रशास्त्र को परमेश्वर के सटीक वचन के रुप में नहीं मानते। इसका अर्थ परमेश्वर को, जो पवित्रशास्त्र का लेखक है, अस्वीकार करना होगा। यदि हम यीशु मसीह को स्वीकार करते हैं तो हमें उसके पूर्व अस्तित्व को भी स्वीकार करना होगा।

Creation Autonomous Academy

2- परमेश्वरत्व

मसीह के पूर्व अस्तित्व के तथ्य को उतने ही विशाल उसके ईश्वरत्व के तथ्य से अलग करना असम्भव है। मसीह केवल परमेश्वर की तरह नहीं है। वह स्वयं परमेश्वर है। कुलुस्सियों 2:9 मसीह के विषय में कहता है कि ' उसमें ईश्वरत्व की सारी परिपूर्णता सदेह वास करती है।' वास्तव में मसीह का

ईश्वरत्व उसके पूर्व अस्तित्व के अध्ययन के समय ही सिद्ध हो गया था, क्योंकि केवल परमेश्वर ही अनन्त हो सकता है।

बहुधा लोग मसीह के ईश्वरत्व के विषय में यह अर्थ लगाते हैं कि प्रत्येक मनुष्य किसी न किसी रुप में ईश्वर के समान है। परन्तु वास्तव में यह सच नहीं है।

मसीह में परमेश्वर का स्वभाव हैः

इसका अर्थ यह है कि परमेश्वर के सारे गुण यीशु में भी हैं। अपने स्वभाव में वह असीमित, अनन्त, स्वयं अस्तित्व रखने वाला, तथा अपरिवर्तनीय है। परमेश्वर का सम्पूर्ण सार उसमें है। वह अनन्त काल से विद्यमान है, वही इस पृथ्वी पर कुछ समय के लिए आया और वही अब स्वर्ग में महिमा पाता है।

मसीह में परमेश्वर के गुणः परमेश्वर सर्वज्ञ है (सब कुछ जानने वाला यूहन्ना 2:25, 16:30, 21:17, 1 कुरिन्थियों 1:30), सर्वशक्तिशाली (सबसे अधिक शक्ति वाला मत्ती 9:6, 28:18, , लूका 8:25), तथा सर्वोपस्थित है (सब जगह उपस्थित, मत्ती 28:20, , यूहन्ना 14:18,20)। यह परमेश्वर के गुण हैं जो अन्य किसी को नहीं दिए जा सकते। तौभी पवित्रशास्त्र के यह संदर्भ दर्शाते हैं कि यह सब गुण मसीह के हैं। उदाहरण के लिए, उसकी सर्वज्ञता यूहन्ना 4 में कुएं पर सामरी स्त्री से बातचीत में दिखाई पड़ती है। यीशु उस स्त्री के बारे में सब कुछ जानता था यद्यपि वह उससे पहले कभी नहीं मिला था। उसको प्रकृति पर अधिकार था, जैसा हम मत्ती 8 में पाते हैं। यशायाह 9:6-7 की भविष्यवाणी में उसे दिए गए अनेक नामों में से एक नाम है 'पराक्रमी परमेश्वर'।

मसीह को परमेश्वर के नाम प्राप्त हैं: उसको परमेश्वर (यूहन्ना 1:1, 20:28, तीतुस 2:13, 1 यूहन्ना 5:20), परमेश्वर का पुत्र (मत्ती 16:16-17, मरकुस 1:1, लूका 1:15,यूहन्ना 1:18) तथा प्रभु (प्रेरितों के काम 4:33) में कहा गया है। यूहन्ना 12:41 बताता है कि यशायाह ने उसकी महिमा देखी वह मसीह की थी। यूहन्ना बपतिस्मा देने वाले के लिए परमेश्वर पिता ने पुष्टि की, कि जिस व्यक्ति यीशु को उसने बपतिस्मा दिया है वह देहधारी ईश्वर है (यूहन्ना 1:32-34)।

मसीह परमेश्वर के कार्यकर्ता हैः इस पृथ्वी पर आने से पहले तथा उसके पश्चात मसीह ने वह कार्य किए जो परमेश्वर के हैं तथा जिनके बारे में यह माना जाता है कि केवल परमेश्वर ही उन्हें कर सकता है। प्रथम पाठ में हमने देखा कि उसने सृष्टि की रचना में कार्य किया। सृष्टिकर्ता के रुप में वह स्वयं सृजा नहीं गया। वही सब वस्तुओं को सम्भालता है और स्थिर रखता है (कुलुस्सियों 1:17, इब्रानियों 1:3) पृथ्वी पर रहते हुए उसने प्रकृति पर अधिकार रखा, मृतकों को जिलाया और अन्धों तथा बीमारों को स्वस्थ किया।

Creation Autonomous Academy

भविष्य में वह सब मनुष्यों का न्यायकर्ता होगा (यूहन्ना 5:22, प्रेरितों के काम 17:31, 2 तीमुथियुस 4:1)।

परमेश्वर के रुप में मसीह की आराधना होती हैः बाइबल स्पष्टता से शिक्षा देती है कि केवल एक ही ईश्वर है और उसी की आराधना होनी चाहिए। दस आज्ञाओं में से प्रथम आज्ञा स्पष्ट घोषणा करती है कि परमेश्वर को छोंड़ अन्य किसी (वस्तु या व्यक्ति) की आराधना नहीं की जानी चाहिए (निर्गमन 20:3, व्यवस्था विवरण 5:7-8) तौभी बाइबल में हमें मसीह की आराधना किए जाने के उदाहरण मिलते हैं (मत्ती 14:33, लूका 5:8, 24:52, यूहन्ना 20:28) इन चेतावनियों के बार-बार दिए जाने पर भी कि 'मुझे छोंड़ कोई और दूसरा परमेश्वर नहीं----मैं ही ईश्वर हूं, और दूसरा कोई नहीं है' (यशायाह 45:21-22), बाइबल यीशु के इन शब्दों को बताती है, 'मैं और पिता एक हैं' (यूहन्ना 10:30),।

मसीह के लिए , यह एक अपवित्र मूर्तिपूजा का कार्य होगा, यदि वह परमेश्वर न होते हुए मनुष्य की आराधना स्वीकार करे। बाइबल ऐसे लोगों का वर्णन करती है जो लोगों द्वारा उनकी आराधना किए जाने के विचार मात्र से भयभीत हो गए। (पतरस, प्रेरितों के काम 10:25-26 में तथा पौलुस प्रेरितों के काम 14:11-18)। बाइबल उन लोगों का भी उदाहरण प्रस्तुत करती है जिन्होंने मनुष्य की आराधना को स्वीकार किया और फलस्वरुप दण्ड पाया (हेरोदेस ने प्रेरितों के काम 12:22-23 में) तौभी बार-बार यीशु ने लोगों की आराधना स्वीकार की।

वह लोग भी , जो यह विश्वास नहीं करते कि यीशु परमेश्वर है, उसको एक अच्छा व्यक्ति कहते हैं-ऐसा व्यक्ति जिसका अनुकरण दूसरों को करना चाहिए। वास्तव में वह एक 'अच्छा व्यक्ति' नहीं हो सकता यदि वह परमेश्वर न होते हुए भी परमेश्वर होने का दावा करे।

3-देहधारण

Creation Autonomous Academy

मसीहियत का एक मौलिक सत्य है कि यीशु मसीह, जो पूर्ण रुप से परमेश्वर था, जो 'जगत के होने से पहले' (यूहन्ना 17:5) परमेश्वर के साथ था, मनुष्य बना। परमेश्वर के अनन्त पुत्र ने मानव स्वभाव धारण किया और ऐसा करने के द्वारा वह देहधारी परमेश्वर बन गया। जन्म का कोई भी सिद्धान्त इसको समझा नहीं सकता। परमेश्वर ने गलातियों 4:4 के अनुसार समय पूरा होने पर एक रचनात्मक कार्य के द्वारा इतिहास में एक निश्चित समय पर यीशु मसीह को एक कुंवारी द्वारा उत्पन्न किया। बाइबल इस सत्य को बहुत ही स्पष्टता से बताती है कि प्रभु यीशु एक मानवीय माता द्वारा, बिना एक मानवीय पिता के , उत्पन्न हुआ। इसकी भविष्यवाणी यशायाह 7:14 में की गयी तथा मत्ती 1:18-25 में पूरी हुई (लूका 2:6-7 भी देखें)। लूका 1:34-35 आलोचकों के लिए परमेश्वर का उत्तर है क्योंकि यह बताता है कि मसीह एक

कुंवारी स्त्री से पैदा हुआ। मत्ती के पहले अध्याय में युसुफ इस सत्य को स्वीकार करता है कि मरियम से पैदा होने वाला शिशु आलौकिक रुप से आया है।

मसीह का कुंवारी से पैदा होने का सिद्धान्त मसीही विश्वास का एक मौलिक सिद्धान्त है। इसे मानना कठिन नहीं होना चाहिए, क्योंकि जिसने जन्म क्रिया को बनाया है वह आवश्यकता पड़ने पर उसको हटा सकता है। स्वर्गदूत ने घोषणा में मरियम को याद दिलाया कि परमेश्वर के लिए कुछ भी असम्भव नहीं (लूका 1:37)।

परन्तु पिता परमेश्वर स्वयं लोगों को आज्ञा देता है कि वह उसके पुत्र यीशु मसीह की आराधना करें (यूहन्ना 5:22-23, फिलिप्पियों 9:10)। तीन अवसरों पर परमेश्वर ने बोलकर यह गवाही दी कि यीशु मसीह उसका पुत्र है। यह तीन अवसर थेः

यीशु के बपतिस्मा के समय (मत्ती 3:13-17, लूका 13:22)

देह रुपान्तर के समय (मत्ती 17:5, लूका 9:35)

फसह के समय (यूहन्ना 12:27-28)

मसीह परमेश्वर के समान होने का दावा करता हैः 'मैं और पिता एक हैं' (यूहन्ना 10:30) यीशु के बहुत से कथनों में से एक है जहां उसने स्वयं परमेश्वर होने का दावा किया। उसके समय के यहूदी परमेश्वर के तुल्य होने के उसके दावे को समझ गए (यूहन्ना 5:17-18) और यह शब्द भी कि 'जिसने मुझे देखा उसने पिता को देखा है' (यूहन्ना 14:9)। यहां तक कि उन्होंने उसके इस दावे के कारण उस पर ईश निन्दा का दोष लगाकर उसको मार डालना चाहा।

मसीह के लिए परमेश्वर होना क्यों आवश्यक था-

यदि प्रभु यीशु परमेश्वर नहीं होता तो वह संसार का उद्धारकर्ता कभी नहीं हो सकता था। कोई भी मनुष्य किसी दूसरे मनुष्य को (पाप से) नहीं बचा सकता। केवल परमेश्वर ही यह कार्य कर सकता है। पाप से उद्धार दिलाने के लिए एक महान शिक्षक या एक अच्छा उदाहरण होना ही काफी नहीं। बाइबल एक ऐसे परमेश्वर को प्रस्तुत करती है जो उद्धार दे सकता है क्योंकि - वह परमेश्वर का पुत्र और संसार का उद्धारकर्ता यीशु मसीह है।

Creation Autonomous Academy

कुछ लोग यह विश्वास करते हैं यीशु मसीह अपने दावों के अनुसार परमेश्वर का पुत्र तथा संसार का उद्धारकर्ता तो है परन्तु यह विश्वास नहीं करते कि वह वचन के अनुसार कुंवारी कन्या से पैदा हुआ। यह दृष्टिकोंण तर्कसंगत नहीं है। कुंवारी से पैदा न होने पर यीशु में एक पापी मनुष्य का स्वभाव होता और इस कारण वह पापी मनुष्य के लिए नहीं मर सकता था। वह तथा उसका कार्य दोनों एक दूसरे से अलग नहीं किए

जा सकते। किसी ने कहा है,‘एक उद्धारकर्ता जो पूर्णतया परमेश्वर नहीं है एक अधूरे पुल के समान है जो दूसरे छोर तक पहुंचने से पहले ही समाप्त हो जाता है।’

देहधारण के विषय में पूर्ण जानकारी होना अति आवश्यक है, क्योंकि इससे पहले कि हम यह पूर्ण रुप से जान पाए कि मसीह ने क्या किया, हमें मसीह को जानना आवश्यक है। यह सत्य, कि उसका कोई मानवीय पिता न था उसको अन्य सभी मनुष्यों से अलग करता है तथा उसके ईश्वरत्व की गवाही देता है। प्रभु यीशु मसीह परमेश्वर का दिखाई देने वाला रुप है, क्योंकि वह देहधारी ईश्वर, अर्थात ईश-मानव है। सिर्फ यही नहीं कि देह धारण करने से परमेश्वर मनुष्य बन गया परन्तु यह एक आश्चर्यजनक रुप में कुंवारी स्त्री से जन्म लेने के कारण हुआ।

देहधारण के विषय में पुराने नियम की भविष्यवाणियांः सबसे पहली भविष्यवाणी उत्पत्ति 3:15 में मिलती है, जहां परमेश्वर ने हव्वा से कहा कि उसका वंश मनुष्यों का उद्धार करेगा। पुराने नियम की अन्य भविष्यवाणियां हैं- 2 शमूएल 7:12-16, जहां लिखा है कि वह दाऊद के घराने से होगा, यशायाह 7:14, कि वह कुंवारी से पैदा और ‘परमेश्वर हमारे साथ ’ होगा, दानिय्येल 9:25, वह उसके आने के समय का वर्णन है, तथा मीका 5:2, जहां उसका जन्म स्थान बताया गया है।

यह भविष्यवाणियां नए नियम में अक्षरशः (पूर्णतया) पूरी हुईं। जो व्यक्ति ‘कुंवारी से जन्म’ के सत्य का इन्कार करता है वह पुराने नियम की स्पष्ट गवाही का इन्कार करता है, जो नए नियम में दोहराई गयी है, कि ‘परमेश्वर ने अपने पुत्र को भेजा जो स्त्री से जन्मा’ (गलातियों 4:4)।

देहधारण के कारणः

परमेश्वर को प्रकट करने के लिएः परमेश्वर कैसा है? यीशु मसीह परमेश्वर की ओर से इस प्रश्न का उत्तर है। जब हम परमेश्वर के बारे में बोलते हैं, तब हम उसकी पवित्रता, ऐश्वर्य तथा सामर्थ का उल्लेख करते हैं। हम उसको संसार का सृष्टिकर्ता तथा शासक बताते हैं और सब वस्तुओं पर उसकी प्रभुसत्ता का ध्यान करते हैं। पवित्र शास्त्र मनुष्यों से आग्रह करता है कि परमेश्वर का जो हमारी समझ से बिल्कुल परे है, आदर सहित भय मानें तथा श्रद्धा से आराधना करें। नीतिवचन 9:10 ‘यहोवा के भय’ को ‘बुद्धि का आरम्भ’ बताता है। निर्गमन 19:16 में सीनै पर्वत पर लोग परमेश्वर के वैभव तथा सामर्थ के सामने कांपने लगे। जब अय्यूब को परमेश्वर की महिमा के दर्शन हुए, तो उसका उत्तर था,‘मुझे अपने ऊपर घृणा आती है और मैं धूलि और राख में पश्चाताप करता हूं’ (अय्यूब 42:6)।

Creation Autonomous Academy

प्रभु यीशु ने आकर हमें एक अतिरिक्त सत्य दिखाया कि परमेश्वर प्रेम है। यह कोई नई बात नहीं थी, यह पुराने तथा नए नियम के परमेश्वर के चरित्र के बीच कोई परिवर्तन नहीं था, क्योंकि परमेश्वर बदल नहीं सकता। अपरिवर्तनीयता उसके स्वरुप का एक घनिष्ट अंग है। सृष्टि के आरम्भ से अपने लोगों के साथ

व्यवहार में परमेश्वर का प्रेम सदैव उपस्थित रहा था। परन्तु प्रभु यीशु (परमेश्वर के प्रेम का) प्रदर्शन था और इस बात का प्रमाण कि परमेश्वर प्रेम है (1 यूहन्ना 4:10)। मत्ती 11:27 में यीशु ने कहा कि उसका उद्देश्य पिता को प्रकट करना था। जो व्यक्ति मसीह में परमेश्वर को देखने से इन्कार करता है वह परमेश्वर को कदापि नहीं देख सकता, क्योंकि यीशु ने कहा,'बिना मेरे द्वारा कोई पिता के पास नहीं पहुंच सकता ' (यूहन्ना 14:6)।

हमारे स्वभाव को पूर्णतया समझाने के लिएः परमेश्वर हमें पूर्ण रुप से जानता है। उसी ने हमारे अंगों को निर्धारित किया तथा जैसे मनोवैज्ञानिक प्राणी हम हैं, वैसे हमें बनाया। हमारा स्वभाव भाग्य से नहीं बना, क्योंकि हम परमेश्वर की रचनाएं हैं।

परन्तु परमेश्वर कभी भी भूखा, थका या निराश नहीं होता। यदि वह पूर्णतया सिद्ध नहीं होता तो वह अनन्त, सर्वशक्तिमान परमेश्वर नहीं हो सकता एक मनुष्य के रुप में प्रभु यीशु थका, उसे भूख लगी। उसने दुख को निकट से जाना।

परमेश्वर पूर्णतया पवित्र है। इसलिए उसे पाप करने के लिए परीक्षित नहीं किया जा सकता है। मनुष्य रुप में प्रभु यीशु मसीह की परीक्षा हुई, इसलिए जब हम परीक्षा में पड़ते हैं तब वह हमारी स्थिति भली-भांति समझता है। अन्तर सिर्फ यही है कि उसने परीक्षा के सामने आत्मसमर्पण नहीं किया, जैसा कि हम करते हैं। इब्रानियों 4:15-16 कहता है कि क्योंकि यीशु मसीह हमारी निर्बलताएं जानता है, इसलिए हम उसके पास बिना भय के आ सकते हैं तथा उसकी सहायता की मांग कर सकते हैं।

परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं की पुष्टि हेतुः मसीह के बारे में पुराने नियम की भविष्यवाणियां परमेश्वर की ओर से प्रतिज्ञाएं थीं कि वह जगत का उद्धारकर्ता तथा आगामी शासक होने के लिए अपने पुत्र को भेजेगा। देहधारण के द्वारा यह प्रतिज्ञा पूरी हुई। जब बालक यीशु को मन्दिर में प्रस्तुत किया गया, तब वह परमेश्वर द्वारा तैयार और भेजे गए (उद्धारकर्ता) के रुप में पहचान लिया गया (लूका 2:25-38)।

उद्धारकर्ता बनने के लिएः उसके आने का यह प्रमुख कारण है। यीशु मसीह मरने के लिए पैदा हुआ। उसने कहा,'मैं इसी कारण इस घड़ी को पहुंचा हूं' (यूहन्ना 12:27)। देहधारण के कारणों का सार यूहन्ना 3:16 में मिलता है।

Creation Autonomous Academy

शैतान को नाश करने के लिएः इब्रानियों 2:14-15 में स्पष्ट वर्णन है कि यीशु मनुष्य इसलिए बना कि शैतान को, जिसे मृत्यु पर शक्ति मिली थी, निकम्मा कर दे। शैतान को यह शक्ति आदम और हव्वा को सफलतापूर्वक पाप में गिराने पर मिली थी (उत्पत्ति 3) जो लोग मसीह को व्यक्तिगत उद्धारकर्ता के रुप में स्वीकार करते हैं वह अब शैतान के अधिकार से स्वतन्त्र हैं। इसके अतिरिक्त एक दिन आएगा जब सम्पूर्ण

सृष्टि पर शैतान की शक्ति पूर्णतया तोड़ दी जाएगी, जैसा कि प्रकाशित वाक्य 20:10 तथा 21:3-5 बताता है। यह सब कुछ इसलिए होगा क्योंकि परमेश्वर का पुत्र मनुष्य बना।

संक्षेप में देहधारण के तथ्यः

देहधारण के द्वारा, यीशु मसीह जो परमेश्वर है, मनुष्य बना। उसकी एक मानवीय वंशावली थी। मत्ती 1 उसकी वैधानिक वंशावली देते हुए दिखाता है कि वह दाऊद के वंश से था, जबकि लूका उसकी वंशावली मरियम से लेकर आदम तक दिखाता है। वह शारीरिक रुप से जिया, मरा तथा फिर जीवित हो उठा। उसमें मानवीय मनोभाव तथा इन्द्रियां थीं और प्रत्येक मनुष्य की तरह उसका विकास हुआ (लूका 2:52)।

हम नहीं जानते की यीशु देखने में कैसा था, यद्यपि स्पष्ट है कि यह एक पुरुष के जैसा ही दिखता होगा। उसका प्रत्येक चित्र मध्यकालीन चित्रकारों के चित्रों पर आधारित है जिन्होंने उसे उस समय के पुरुषों जैसा ही दिखाया है। क्योंकि उसकी मानवीय माता यहूदी थी, यह मानना तर्कसंगत है कि उसके समय के अन्य यहूदियों की तरह ही उसके नाक-नक्श होंगे।

देहधारण के कारण मसीह अन्त में यशायाह 53 में की गई भविष्यवाणी के अनुसार बन गया जहां कहा गया है कि उसके सताव के कारण उसमें 'न तो कुछ सुन्दरता थी।'

4-मनुष्यत्व

यह बहुत बड़े रहस्यों में से एक है कि प्रभु यीशु परमेश्वर और मनुष्य दोनों कैसे हो सकता है। उसने थोड़े समय के लिए देहधारण से पूर्व की अपनी महिमा को तो छोड़ दिया था परन्तु अपने परमेश्वरत्व को नहीं। उसके आने की भविष्यवाणी स्पष्ट है कि वह वही था जिसके बारे में कहा गया था कि हमारे लिए एक बालक उत्पन्न हुआ, हमें एक पुत्र दिया गया (यशायाह 9:6), जो परमेश्वर और मनुष्य दोनों है।

यीशु मसीह में परमेश्वर का स्वभाव तथा मनुष्य का स्वभाव दोनो है। मसीह में इन दोनो स्वभावों का व्यक्तिगत मिलाप यूहन्ना 10:1-14, फिलिप्पियों 2:6-11, 1 तीमुथियुस 3:16 तथा 1 यूहन्ना 1:1-3 में बताया गया है। यह मिलाप परमेश्वरत्व और मनुष्यत्व का मिला जुला रुप है, क्योंकि दोनों स्वभाव एक दूसरे से भिन्न तथा अलग-अलग बने रहते हैं। परमेश्वरत्व पूर्णतया परमेश्वरत्व रहता है तथा मनुष्यत्व भी बिलकुल शुद्ध मनुष्यत्व रहता है। दोनों स्वभाव अनन्त हैं तथा अविभाजित रुप से एक व्यक्ति में विद्यमान हैं जिससे की मसीह में किसी दोहरे व्यक्तित्व का विचार भी नहीं है। बल्कि उसके पास ईश्वरीय चेतना तथा एक मानवीय चेतना थी।

Creation Autonomous Academy

इसलिए मसीह परमेश्वर और मनुष्य दोनों है, अपने मनुष्यत्व के कारण कुछ कम परमेश्वर नहीं तथा अपने ईश्वरत्व के कारण कुछ कम मनुष्य नहीं।

मसीह में दो स्वभावों का मिलन, विश्वासी का मसीह के साथ मिलन के समान कदापि नहीं है। प्रभु यीशु कोई ईश्वर से भरा मनुष्य नहीं है, वह स्वयं परमेश्वर है। हम इसे समझ तो नहीं सकते, परन्तु 1 तीमुथियुस 3:16 के इस कथन को स्वीकार कर सकते हैं कि मसीह में परमेश्वर 'शरीर में प्रकट हुआ'।

बाइबल सिखाती है कि मनुष्य का मनुष्यत्व स्थायी है। देहधारण के समय उसे जो शरीर मिला उसी शरीर में वह मारा, गाड़ा गया तथा फिर जीवित हो उठा। उसके पुर्नजीवित शरीर को महिमा मिली तथा वह बदल गया, परन्तु फिर भी वह उसी का शरीर था। चेलों ने उसे पहचान लिया (यूहन्ना 20:20)। उसी शरीर में वह आकाश में उठा लिया गया (प्रेरितों के काम 1:9)। अब वह उसी शरीर में स्वर्ग में है (फिलिप्पियों 3:20-21)। उसी शरीर में वह वापिस आएगा (प्रेरितों के काम 1:11)।

मसीह की मृत्यु मनुष्य के रुप में हुई, परमेश्वर के रुप में नहीं। यदि वह मनुष्य नहीं होता तो क्रूस पर उसकी मृत्यु वास्तविक नहीं होती। परन्तु मृत्यु पर उसकी विजय इस सत्य में निहित है कि वह परमेश्वर था। यदि वह परमेश्वर नहीं होता तो उसकी मृत्यु पर्याप्त नहीं होती। दोनों स्वभावों के व्यक्तिगत मिलाप के कारण, जो बात दोनों में से किसी भी स्वभाव के लिए सच है वह मसीह के लिए भी सच है। इसीलिए पृथ्वी पर मसीह निर्बल और सर्वशक्तिमान दोनों था। वह सर्वज्ञानी होते हुए भी 'ज्ञान में बढ़ता गया'। परमेश्वर के प्रेरणा से दिए गये सुसमाचार मसीह के विकास के वर्षों का विस्तृत वर्णन नहीं देते। उसका अलौकिक जन्म, बारह वर्ष की आयु में उसकी ईश्वरीय चेतना की एक झलक (लूका 2:46-47), अपने घर मे स्वेच्छा से आज्ञा पालन (लूका 2:51), जो कार्य वह करने आया था उसकी पृष्ठभूमि हैं।

प्रभु यीशु के गुणः

सर्वशक्तिमता,सर्वज्ञता तथा सर्वोपस्थिति परमेश्वरत्व के वह गुण हैं जो मनुष्य बनने पर प्रभु यीशु में बने रहे। वह उनको छोड़ नहीं सकता था, क्योंकि तब वह परमेश्वर नहीं बना रहता-जो कि एक असम्भव बात है। परमेश्वर, परमेश्वर बने रहने से रुक नहीं सकता। परन्तु जब वह मनुष्य था, उसने जानबूझकर अपने आपको इन गुणों के प्रयोग में सीमित किया। उसका परमेश्वरत्व उसमें अपने पूर्ण सामर्थ के साथ था, परन्तु उसने अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताओं के लिए उसका प्रयोग नहीं किया। मसीह ने स्वयं को मानव मात्र के भौतिक बन्धनों के अधीन किया। उदाहरण के लिए जब उसे भूख लगी, तब उसने अपने लिए आश्चर्यजनक रुप से भोजन नहीं प्राप्त किया-जबकि वह ऐसा कर सकता था। उसकी वह स्वयं सीमितता शैतान द्वारा उसकी परीक्षा लिए जाने में दिखती है। वह पत्थरों को रोटियां बना सकता था, परन्तु क्योंकि ऐसा करने से लगता कि वह शैतान की आज्ञा मान रहा है, उसने ऐसा नहीं किया। उसकी स्वयं सीमिता उसके परमेश्वरत्व का एक और प्रमाण है। परन्तु इस सब की समझ प्राप्त करना उतना आवश्यक नहीं जितना कि उस पर विश्वास करना।

फिर भी यूहन्ना 6 में, यीशु ने एक व्यक्ति के लिए पर्याप्त भोजन से पांच हजार से अधिक लोगों को खिलाया। वह उस भीड़ से जो उसे मार डालना चाहती थी (लूका 4: 29-30) तथा उन लोगों से जो उसे

Creation Autonomous Academy

पत्थरवाह करना चाहते थे (यूहन्ना 5:59) बच निकला क्योंकि अभी उसके जान देने का समय नहीं आया था, परन्तु बाद में उसने स्वयं को लोगों द्वारा पकड़ने और क्रूस पर चढ़ाने दिया। (यूहन्ना 18:4-11)

1-पवित्रता :-

यीशु एक मात्र बालक था जो जन्म से ही पवित्र था। दूसरे बालक प्रिय व सुन्दर हो सकते हैं परन्तु पवित्र नहीं, क्योंकि प्रत्येक बालक एक पापी स्वभाव के साथ पैदा होता है।

परमेश्वर और मनुष्य के रुप में यीशु में कोई पापी स्वभाव नहीं था। उसके सामने जो भी परीक्षाएं आयीं वह बाहर से थीं, भीतर से नहीं। पवित्र शास्त्र बताता है कि वह परखा गया। (इब्रानियों 4:15) उसका मनुष्य स्वभाव परखा जा सकता था, ईश्वरीय नहीं। अब प्रश्न उठता है कि क्या वह परखा जा सकता था जब उसके पाप करने की कोई सम्भावना ही नहीं थी? हां क्योंकि परखे जाने का अर्थ पाप करना या पाप के आगे घुटने टेक देना नहीं।

कुछ लोग प्रश्न कर सकते हैं कि यीशु की परीक्षाएं वास्तविक थीं या नहीं। इसका उत्तर शैतान द्वारा उसकी परीक्षा किए जाने में मिला है। पत्थरों को रोटी बना देना उस व्यक्ति के लिए कोई परीक्षा नहीं जो ऐसा कर ही नहीं सकता- परन्तु मसीह तो ऐसा कर सकता था- इसलिए उसके लिए यह एक परीक्षा थी।

मसीह की मानवीय इच्छा हमेशा उसकी ईश्वरीय इच्छा के अधीन थी। यह बात गतसमने में, उसकी प्रार्थना से स्पष्ट है,‘यदि हो सके, तो यह कटोरा मुझसे टल जाए, तौभी जैसा मैं चाहता हूं वैसा नहीं परन्तु जैसा तू चाहता है वैसा ही हो।’ (मत्ती 26:39) ईश्वरीय रुप में तो परमेश्वर के साथ समानता थी, परन्तु मानवीय रुप में परमेश्वर के सम्मुख समर्पण था। धर्मविज्ञान का जो शब्द मसीह को पाप रहित बताने के लिए प्रयोग किया जाता है वह है ‘त्रुटिहीन’ (निर्दोष)। सिर्फ इतना ही नहीं कि मसीह ने पाप करने से इन्कार किया परन्तु वह पाप कर ही नहीं सकता था। संक्षेप में यह सत्य इस प्रकार है:

परमेश्वर की परीक्षा नहीं हो सकती और न ही परमेश्वर पाप कर सकता है। (याकूब 1:13)

मनुष्य की परीक्षा हो सकती है और मनुष्य पाप कर सकता है। (रोमियों 3:23) प्रभु यीशु की परीक्षा हो सकती थी क्योंकि वह मनुष्य है (मत्ती 4:3-10)

प्रभु यीशु पाप नहीं कर सकता था क्योंकि वह परमेश्वर है । (लूका 4:12, 1 पतरस 2:22)

उसका पाप रहित स्वभाव उद्धारकर्ता के रुप में उसके कार्य का एक आवश्यक अंग है। मनुष्य के रुप में वह मर सकता था, परमेश्वर के रुप में उसकी मृत्यु का अनन्त मूल्य था।

Creation Autonomous Academy

2-प्रेम:-

यह एक ऐसा गुण है जिसके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह स्वयं ही प्रमाण है। मनुष्य जाति के लिए उसका प्रेम क्रूस पर उसकी मृत्यु के द्वारा प्रदर्शित हुआ। (रोमियों 5:6-8)

3-दयाः-

'उसको लोगों पर तरस आया।' (मत्ती 9:36) वह शब्द है जो प्रभु यीशु का चित्रण करते हैं। इसका अर्थ है कि उसने लोगों के साथ दुख उठाया मनुष्य के रुप में, वह उनकी भूख, बीमारी तथा दुख को समझ सकता था। इसलिए उसने भूखों को खिलाया (मरकुस 8:1-9), बीमारों को चंगा किया (मरकुस 1:30-34), दुखियों की सहायता किया (लूका 7:11-15)

4-दीनताः-

प्रभु यीशु दीनता का परम उदाहरण हैं। पृथ्वी पर थका और भूखा होने के लिए उसने स्वर्ग की महिमा और ऐश्वर्य छोंड़ दिए। स्वर्गदूत उसकी सेवा कर सकते थे, परन्तु पृथ्वी पर उसने आत्म रक्षा के लिए अपनी शक्ति को प्रयोग करने से इन्कार कर दिया। जीवन के बनाने वाले ने अपने आपको उन लोगों के हाथों में मारने के लिए सौंप दिया जिन्हें उसने स्वयं बनाया था।

5-मृत्यु

प्रभु यीशु मसीह की मृत्यु मसीही विश्वास को अन्य धर्मों से अलग करती है। मसीहत नैतिक नियमों का कोई समूह नहीं है और न ही बहुत से अच्छे धर्मों में से एक है। यह उद्धार का एकमात्र मार्ग है। प्रभु यीशु की मृत्यु के द्वारा ही उद्धार मिलता है। मसीहत का यह एक ऐसा पहलू है जो अन्य किसी धर्म में नहीं पाया जाता। जैसा कहा गया है मसीह ही मसीहियत है।

प्रभु यीशु समय के आरम्भ, अर्थात 'जगत की उत्पत्ति के पहले ही से' जानता था, जैसा कि 1 पतरस 1:18-20 तथा प्रकाशित वाक्य 13:8 में लिखा है कि वही मनुष्य के पाप के लिए बलिदान होने इस संसार में आएगा। अन्य धर्म तो उनके संस्थापकों की शिक्षाओं के कारण जाने जाते हैं। यीशु ने जो कुछ कहा वह महत्वपूर्ण था, तौभी उसकी मृत्यु और पुनरुत्थान ही उसकी शिक्षाओं को सिद्ध करते हैं।

Creation Autonomous Academy

पुराने नियम की भविष्यद्वाणियांः-

पुराने नियम में भविष्यद्वक्ता अपनी भविष्यद्वाणियों में 'मसीह के दुखों की और उसके बाद होने वाली महिमा' (1 पतरस 1:11) के स्पष्ट प्रतिवाद से स्वयं चकित थे। मसीह की मृत्यु की दो मुख्य भविष्यद्वाणियां भजन संहिता 22 तथा यशायाह 53 में मिलती हैं। इनमें से पहली भविष्यवाणी को 'क्रूस का भजन' कहा गया है। यह प्रभु यीशु द्वारा क्रूस पर कहे गए वचनों से प्रारम्भ होता है, 'हे मेरे परमेश्वर, तूने मुझे क्यों छोंड़ दिया?' (मत्ती 27:46) यह भजन जिसमें अनेक विवरण ऐसे हैं जो क्रूस पर चढ़ाए जाने के समय पूरे हुए, इस घटना के एक हजार वर्ष पूर्व लिखा गया था।

नए नियम में यशायाह की पुस्तक का अनेक बार उल्लेख हुआ है। प्रेरितों के काम 8:32-35 यशायाह 53 की भविष्यवाणी का सम्बन्ध मसीह से दिखाता है। नए नियम में मेमने के रुप में मसीह के जितने विवरण हैं वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से यशायाह के इस अध्याय से जुड़े हुए हैं।

पुराने नियम के प्रतीकः-

प्रतीक, परमेश्वर द्वारा दिए गए एक ऐसे चिन्ह को कहते हैं जो आने वाले समय में पूरा होगा। पुराने नियम में मसीह के अनेक प्रतीक हैं, जिसमें से कुछ उसकी मृत्यु से सम्बन्धित हैं। नए नियम में इब्रानियों की पुस्तक दर्शाती है कि पुराने नियम के बलिदान मसीह के प्रतीक थे। इब्रानियों 10 लैव्यव्यवस्था की पुस्तक में वर्णित मुख्य भेंटों का उल्लेख करता है तथा दिखाता है कि मसीह में यह सब पूरी हुई। फसह (निर्गमन 12) मसीह की मृत्यु का एक प्रतीक या चित्र है। 1 कुरिन्थियों 5:7 मसीह को विशेष रुप से हमारा फसह कहता है।

नए नियम के संदर्भः-

1-मसीह की मृत्यु कितनी महत्वपूर्ण थी यह सुसमाचारों में इस घटना को दिए गए स्थान से साफ प्रतीत होती है। मत्ती के 28 अध्यायों में से 8 पृथ्वी पर उसके जीवन के अन्तिम सप्ताह के बारे में हैं, मरकुस के 16 में से 6 अध्याय, लूका के 24 अध्यायों में 5 तथा यूहन्ना के 21 अध्यायों में से 9 अध्याय। नए नियम की पत्रियों की सारी सैद्धान्तिक शिक्षा इसी ऐतिहासिक घटना पर आधारित हे।

2-प्रेरितों के काम की पुस्तक में आरम्भिक विश्वासियों ने मसीह की मृत्यु पर बल दिया।

3-पत्रियां उसकी मृत्यु का सैद्धान्तिक अर्थ बताती हैं।

4-प्रकाशितवाक्य मसीह को महिमा में 'मानो एक बध किया हुआ मेमना' के रुप में प्रस्तुत करता है। (प्रकाशितवाक्य 5:6) अनन्तकाल तक यह याद किया जाएगा कि उसकी मृत्यु के कारण ही हमें उद्धार मिला है।

Creation Autonomous Academy

मसीह की मृत्यु के कारणः-

1-मनुष्य की पापपूर्णताः-

मनुष्य जाति को पाप से छुटकारा दिलाने का दूसरा कोई उपाय न था। रोमियों 3:23, गलातियों 3:21-24, तथा इब्रानियों 9:22 इसको स्पष्ट करते हैं। अपने आप में कोई भी मनुष्य इतना अच्छा नहीं है कि वह एक पवित्र परमेश्वर से मिल सके।

2-परमेश्वर का चरित्रः-

परमेश्वर का सबसे महत्वपूर्ण गुण उसकी पवित्रता है, जिसके कारण वह पाप सहन नहीं कर सकता। अपने धर्मी स्वभाव के कारण ही वह पाप को अनदेखा या क्षमा नहीं कर सकता। परन्तु परमेश्वर प्रेम भी है, और इसीलिए उसने प्रभु यीशु को भेजा कि मनुष्यों के बदले दण्ड सहे। विश्व के सार्वभौमिक शासक ने पापी मनुष्य जाति के प्रति अपने प्रेम को अपने पुत्र की मृत्यु के द्वारा दिखाया। यह परमेश्वर पिता का एक ईश्वरीय कार्य था।

यह ध्यान देने योग्य बात है मसीह की मृत्यु ऐच्छिक थी। कुछ लोग दावा करेंगे कि दोषी की जगह निर्दोष को दण्ड देने में परमेश्वर अन्यायी था। परन्तु मसीह अपनी इच्छा के विरुद्ध बलिदान नहीं हुआ। वह जबरदस्ती क्रूस पर चढ़ाया हुआ शहीद नहीं था। परन्तु उसने स्वयं को, अपनी इच्छा से मनुष्य के बदले बलिदान होने के लिए दे दिया। जिसने पाप का दण्ड ठहराया उसी ने दण्ड चुकाया भी। गलातियों 1:4 कहता है कि उसी ने 'अपने आपको हमारे पापों के लिए दे दिया।'

मसीह की मृत्यु प्रतिनिधिक भी थी। वह अपने लिए नहीं मरा। पवित्र शास्त्र बताता है कि परमेश्वर ने 'जो पाप से अज्ञात था, उसी को हमारे लिए पाप ठहराया।' (2 कुरिन्थियों 5:21) इसकी सच्चाई क्रूस पर से मसीह की चिल्लाहट में दिखती है,'हे मेरे परमेश्वर, हे मेरे परमेश्वर तूने मुझे क्यों छोंड़ दिया?' परमेश्वर ने अपने पुत्र को इसलिए छोंड़ दिया था क्योंकि उसकी आंखें ऐसी शुद्ध हैं कि वह बुराई को देख नहीं सकतीं। (हबक्कूक 1:13)

मसीह की मृत्यु के परिणामः-

1-छुटकाराः-

छुड़ाने वाला उसे कहते हैं जो किसी वस्तु को, जो उसी की है, दुबारा खरीद लेता हैं। इसलिए परमेश्वर को मनुष्य को जिसे उसने सृजा और इस कारण परमेश्वर की सम्पत्ति है-पाप की गुलामी से दुबारा खरीदना पड़ा। मसीह ने यही कार्य अपनी मृत्यु के द्वारा किया। (2 कुरिन्थियों 7:23, इफिसियों 2:7, कुलुस्सियों 2:14, 2 पतरस 2:1) इब्रानियों 8:13 इसको अनन्त छुटकारा कहता है। मसीह को ग्रहण करने से विश्वासी पाप की गुलामी से स्वतंत्र हो जाता है तथा मसीह के साथ एक ऐसे रिश्ते में जुड़ जाता है जिसमें मसीह की सेवा करना उसका परम कर्तव्य हो जाता है। (1 कुरिन्थियों 6:18-20)

2-प्रायश्चितः-

इसका अर्थ है संतुष्टि। मसीह की मृत्यु ने, पाप को दण्डित करने की, धर्मी परमेश्वर की मांग को पूरी तरह संतुष्ट किया। मसीह की मृत्यु वह आधार है जिसके कारण एक धर्मी परमेश्वर, अपनी पवित्रता पर आंच आए बिना, पापियों को क्षमा कर सकता है। अब जब पवित्र परमेश्वर पापी मनुष्यों की ओर देखता है, वह उनके पापों को मसीह की मृत्यु से ढका हुआ पाता है। रोमियों 3:25-26 इस समस्या का उत्तर है कि

पापी मनुष्यों को एक पवित्र परमेश्वर कैसे ग्रहण कर सकता है। परमेश्वर की उद्धार की योजना में मसीह की क्रूस पूर्णतया आवश्यक है।

प्रायश्चित का अर्थ एक प्रतिरोधी परमेश्वर को संतुष्ट करना नहीं है। बाइबल में परमेश्वर के क्रोध पाप के प्रति ईश्वरीय रोष, पापी के प्रति कठोर गुस्सा नहीं। प्रायश्चित एक पवित्र धर्मी परमेश्वर की स्वयं संतुष्टि है, जिसने स्वयं उस माध्यम को दिया जिसके द्वारा वह संतुष्ट किया जा सकता है। यह संतुष्टि हमेशा के लिए है। (इब्रानियों 9:24-28)

3-मेलमिलापः-

यह मसीह का मनुष्य के लिए वह कार्य है जो परमेश्वर से मनुष्य का मेल मिलाप करवाता है। मनुष्य स्वयं अपने लिए यह नहीं कर सकता, क्योंकि वह स्वभाव से ही परमेश्वर का बैरी है। (रोमियों 5:10, 2 कुरिन्थियों 5:18) यह सच है कि मसीह की मृत्यु समस्त संसार के लिए थी। (2 कुरिन्थियों 5:14-19) जाना पहचाना यूहन्ना 3:16 हमें याद दिलाता है कि परमेश्वर संसार से प्रेम करता है। यद्यपि मसीह सब के लिए मरा, तथापि सब लोग स्वतः ही नहीं बच जाएंगे। मेल मिलाप केवल उनके लिए ही है जो मसीह को अपने व्यक्तिगत उद्धारकर्ता के रुप में स्वीकार करते हैं (रोमियों 5:10-11, 2 कुरिन्थियों 5:10) मेल मिलाप सबके लिए उपलब्ध है, परन्तु यह केवल उन्हीं के लिए लागू होता है जो मसीह में विश्वास करते हैं।

मसीह की मृत्यु भौतिक सृष्टि पर भी प्रभाव डालती है। रोमियों 8:21-23 दर्शाता है कि मसीह के मेल मिलाप के कार्य के कारण समस्त सृष्टि एक दिन नयी बनाई जाएगी।

यह सब कुछ -छुटकारा, प्रायश्चित, मेलमिलाप-मसीह की मृत्यु के द्वारा सब मनुष्यों के लिए मुफत दिया गया है, परन्तु इन्हें प्रभावकारी होने के लिए व्यक्तिगत रुप से स्वीकार करना आवश्यक है।

6-पुनरुत्थान और स्वर्गारोहण

पुनरुत्थान का दिनः-

Creation Autonomous Academy

(मत्ती 28:1-15, मरकुस 16:1-14, लूका 24:1-43, यूहन्ना 20:1-25)

इसमें आश्चर्य नहीं कि चारों सुसमाचारों में रविवार की भोर के पहले पहर यीशु के मुर्दों में से जी उठने के विषय में काफी विभिन्नताएं हैं। खाली कब्र और स्वर्गदूतों के दिखाई देने के कारण कुछ मिली -जुली प्रतिक्रियाएं जैसे उत्साह, प्रसन्नता, भय, जिज्ञासा और आश्चर्य सभी का मिश्रण हमें दिखलाई देता है। लोगों के बीच काफी उलझनें थीं क्योंकि वे एक दूसरे को इस विषय में बतलाने के लिए भाग-दौड़ करते रहे। एक लेखक ने वह लिखा जो उसने कुछ लोगों से सुना और उन कुछ लोगों ने जो अन्य दूसरे लोगों से सुना था, परन्तु खाली कब्र की मूल सत्यता और यीशु का मुर्दों में से जी उठना इस सम्बन्ध में कोइ्र दो मत नहीं है। संक्षेप में निम्न प्रकार से हम उस दिन की घटनाओं को निर्धारित करने का प्रयत्न करेंगे।-

1-सूर्योदय के पहले चिन्ह के साथ तीन महिलाएं (मरियम मगदलीनी, मरियम जो याकूब तथा योसेस की मां थी तथा सलोमी जो यूहन्ना प्रेरित की मां थी) तथा दूसरा समूह जिसमें और भी कई महिलाएं (योअन्ना तथा अन्य मित्र महिलाएं) सम्मिलित थीं वे अपने-अपने घरों से यीशु के शरीर में सुगन्धित मसाला लगाने के लिए बाहर निकलीं। (मत्ती 28:1, मरकुस 16:1-3,लूका 24:1)

2-तीन महिलाओं का समूह सबसे पहले कब्र पर पहुंचा और उन्होंने पत्थर को लुढ़का हुआ पाया। मरियम मगदलीनी स्वर्गदूत की आवाज सुने बिना तथा उसे देखे बिना ही दुखी होकर दौड़ते हुए पतरस और यूहन्ना से यह कहने गई कि यीशु का शरीर चुरा लिया गया है। (यूहन्ना 20:1-2) परन्तु दूसरी मरियम तथा सलोमी वहीं रुकी रहीं। वे कब्र के बाहर बैठे हुए एक स्वर्गदूत से मिलीं, एक और स्वर्गदूत कब्र के भीतर बैठा हुआ था। इस समाचार से उत्साहित होकर कि यीशु जी उठा है और अपने शिष्यों से गलील में मिलना चाहता है, वे भागकर उस घर में गईं जहां सभी शिष्य एकत्रित थे। (मत्ती 28:2-7, मरकुस 16:4-8)

3-इस समय रोमी पहरेदार डरते व कांपते हुए कब्र से भागकर नगर के उस पार याजकों को जो कुछ हुआ था उसे बताने के लिए गए। (मत्ती 28:11-15)

4-कुछ ही मिनटों के बाद योअन्ना तथा दूसरी महिलाओं का समूह कब्र पर पहुंचा। कब्र के भीतर जाने पर उन्हें दो स्वर्गदूत मिले, उनके द्वारा उन्हें यह समाचार मिला कि यीशु मृतकों में से जी उठा है और वे शीघ्रता से शिष्यों को इस विषय में बतलाने के लिए दौड़ पड़ीं। (लूका 24:2-8)

5-इन महिलाओं के कब्र के पास से जाने के बाद ही पतरस तथा यूहन्ना वहां पहुंचे, वे अंदर गए तथा उन्होंने कपड़े को अच्छी तरह लपेटा हुआ पाया। यूहन्ना विश्वास करते हुए तथा पतरस आश्चर्य के साथ वहां से लौट गया। (यूहन्ना 20:3-10, लूका 24:12)

6- मरियम मगदलीनी, पतरस तथा यूहन्ना के पीछे आ रही थी, उन दोनों के वापस लौट चुकने के बाद कब्र पर पहुंची। वह अकेले खड़ी होकर रो रही थी। तब उसने कब्र के अन्दर दो स्वर्गदूतों को देखा और पीछे घूमकर यीशु को खड़ा पाया। अत्यधिक प्रसन्न होकर उसने यीशु को पकड़ लिया परन्तु यीशु ने उसे चिताया कि वह उसके शारीरिक प्रारुप से अधिक लगाव न रखे क्योंकि कुछ ही सप्ताह के बाद पुनः सबसे अलग होकर वह अपने परमेश्वर पिता के पास चला जाएगा और उसे फिर निराश होना पड़ेगा। (मरकुस 16:9, यूहन्ना 20:11-17)

7-कुछ ही समय बाद मरियम मगदलीनी के समूह की अन्य महिलाएं (दूसरी मरियम तथा सलोमी) प्रभु यीशु से उस समय मिलीं जब वे शिष्यों को बताने जा रही थीं। (मत्ती 28:8-10)

8-दोनो समूहों की स्त्रियां लगभग एक ही समय में शिष्यों के घर पहुंचीं और उनके बाद मरियम मगदलीनी भी शीघ्र ही वहां पहुंची। उन्होंने शिष्यों को यीशु के पुनरुत्थान के विषय में बताया परन्तु शिष्यों ने न तो उन स्त्रियों की बात का न ही मरियम मगदलीनी की बात का विश्वास किया। (मरकुस 16:10-11, लूका 24:10-11, यूहन्ना 20:18)

उपरोक्त सभी घटनाएं सम्भवतः एक ही घंटे के भीतर घटी थीं।

9-उसी दोपहर को जब दो शिष्य इम्माउस गांव की ओर रास्ते में जा रहे थे तब यीशु भी उनके साथ हो लिया परन्तु उन्होंने उसे न पहिचाना। यात्रा के दौरान यीशु ने उन्हें मसीह के दुख उठाने तथा महिमा से सम्बन्धित पुराने नियम की शिक्षाओं के विषय में समझाया। (मरकुस 16:12, लूका 24:13-27) जब वे इम्माउस गांव के निकट पहुंचे तब संध्या का भोजन करने के लिए वे एक सथान पर रुके। उसी समय उन्होंने यह जाना कि उनका अनजान साथी और कोई नहीं परन्तु स्वयं यीशु था। अपने जी उठे हुए रहस्यमय स्वभाव के कारण वह शीघ्र ही उनकी दृष्टि से ओझल हो गया। फिर वे रात में आराम करने के लिए परन्तु शीघ्र ही दस किलोमीटर की दूरी तय करके व यरुशलेम तक पहुंचने के लिए निकल पड़े ताकि वे अन्य शिष्यों को भी अपनी इस महान खोज के विषय में बता सकें। (मरकुस 16:13, लूका 24:28-35)

10-इसी समय यीशु ने अपने आपको पतरस के सामने प्रगट किया। (लूका 24:34, 1 कुरिन्थियों 15:5)

11-जब शिष्य यीशु के आश्चर्यजनक प्रगटीकरण के विषय चर्चा कर ही रहे थे तब ही अचानक बंद कमरे में उनके बीच यीशु प्रगट हुआ। इसलिए शिष्यों ने सोचा कि वे किसी आत्मा को देख रहे हैं क्योंकि आत्मा ही दीवारों को पार करके आ सकता है परन्तु यीशु ने उन्हें अपना मांस तथा हड्डीयुक्त शरीर दिखाकर उनके भय को दूर किया यहां तक कि उनके शरीर पर क्रूस पर चढ़ाए जाने के कारण पड़े हुए चिन्ह भी देखे जा सकते थे। तब उसने एक बार फिर अपनी वह आज्ञा दोहराई कि सभी लोगों तक उसका उद्धार का संदेश पहुंचाया जाए। उसकी आत्मा से भरपूर प्रतिनिधियों की तरह उन्हें सुसमाचार प्रचार करते हुए ऐसा साधन बनना था जिससे विश्वासी क्षमा प्राप्त कर सकें तथा उसका 1 कुरिन्थियों 15:42-50 (आत्मिक देह) तथा फिलिप्पियों 3:21 (महिमामय देह) की तुलना करें। इनकार करने वाले अपने पापों में ही पड़े रहें। (मरकुस 16:14, लूका 24:36-43, यूहन्ना 20:19-25)

एक सप्ताह के बाद (यूहन्ना 20:26-31):-

जब अगले रविवार को यीशु पुनः शिष्यों को ऊपरी कोठरी में दिखलाई दिया तब थोमा का अविश्वास भी दूर हो गया। परन्तु वह विश्वास जो केवल यीशु के शरीर को देखने पर आधारित था उतना अच्छा नहीं था कयोंकि शीघ्र ही उसे अपने पिता के पास वापस चला जाना था और तब मनुष्यों के लिए यह सम्भव नहीं होगा कि उसे फिर देख सकें। परन्तु फिर भी मनुष्य जाति शिष्यों के प्रचार तथा उनके द्वारा लिखे हुए लेखों को पढ़कर यीशु को मसीह तथा परमेश्वर के पुत्र के रुप में ग्रहण करने के द्वारा अनन्त जीवन पा सकेंगे (यूहन्ना 20:26-31)

टिप्पणीः यीशु के समय में दिनों को गिनने का तरीका ऐसा था कि इसमें क्रमशः वे दोनों दिन सम्मिलित किए जाते थे जिसमें कार्य आरम्भ हुआ तथा जिसमें कार्य समाप्त हुआ। अतः आज जब हम 'एक सप्ताह बाद' (यूहन्ना 20:26) कहते हैं तब यीशु के समय के लोग कहेंगे 'आठ दिन बाद' क्योंकि वे दोनों रविवारों को

Creation Autonomous Academy

गिनते थे। इसी गणना के अनुसार यीशु तीन दिन (शुक्रवार, शनिवार, रविवार) कब्र में रहा, जबकि सही अर्थें में वह शायद 36 घंटे (शुक्रवार 6 बजे शाम से रविवार 6 बजे भोर तक) ही कब्र में था।

तिबिरियास की झील के पास (यूहन्ना 21:1-25):-

तब जैसा कि शिष्यों को कहा गया था कि वे गलील वापस जाकर यीशु के लिए रुके रहें। उनमें से सात शिष्यों ने तिगिरियास झील में मछली पकड़ते हुए असफल रहकर रात बिताई। उसी समय यीशु उन्हें दिखाई दिया और उसने उन्हें एक मछलियों के भण्डार के विषय में बताया जिसे वे बड़े चाव से पकड़ने लगे। यह उनके लिए अन्तिम व्यवहारिक कार्य था जिससे उनके प्रति यीशु के प्रेम का पता चलता है, बिना यीशु के वे कुछ भी नहीं कर सकते थे। (यूहन्ना 21:1-14)

एक बार पतरस ने इस बात पर घमण्ड किया कि वह अन्य चेलों से कहीं अधिक यीशु से प्रेम रखता है और चाहे दूसरे शिष्य यीशु को छोंड़ दें परन्तु वह उसे कभी नहीं छोंड़ सकता है। इसके बाद भी वह अपने स्वामी के नाम का तीन बार इनकार करता है। यही कारण था कि उससे सभी के सामने तीन बार यह पूछा गया कि क्या वह अपने प्रभु से प्रेम रखता है, यह बात उसे यह स्मरण दिलाने के लिए कही थी कि अपने ऊपर विश्वास रखकर आश्वस्त होने का क्या परिणाम हो सकता है। यीशु की सार्वजनिक बातचीत अन्य लोगों के सामने यह प्रगट कर देती है कि उसने पतरस को क्षमा कर दिया है तथा उसके ऊपर कलीसिया के आरम्भिक दिनों में आने वाली कठिनाइयों के समय लोगों को संभालने की जिम्मेदारी भी सौंपी गयी है। उस प्रारम्भिक समूह का अगुवा होने के नाते जब यहूदी सताव का जोर रहेगा तब उसे अन्य लोगों से कहीं बढ़कर प्रभु से प्रेम करना पड़ेगा। (यूहन्ना 21:15)

यीशु के पीछे चलने का अर्थ पतरस के लिए एक ऐसा जीवन नहीं जैसा उसके मछुवारे होने के समय जवानी का समय था, परन्तु लगातार मसीही होने के लिए। (मरकुस 14:28, 16:7, 14:29, लूका 22:31-32) बलिदान तथा कठिन परिश्रम करते रहना पड़ेगा। तथा अंत में वह मसीह के लिए पकड़ा जाएगा तथा मार डाला जाएगा। (यूहन्ना 21:18-19 तुलना करें 13:36)

यूहन्ना के पार्थिव जीवन के अन्त के विषय में यीशु ने कुछ भी स्पष्ट नहीं कहा, कुछ लोगों ने इसका गलत अर्थ लगाया और सोचा कि यूहन्ना की मृत्यु नहीं होगी, अतः यूहन्ना ने अपनी पुस्तक के अन्त में एक टिप्पणी जोड़ दी ताकि लोगों की गलतफहमी दूर हो सके। (यूहन्ना 21:20-25)

Creation Autonomous Academy

गलील की एक पहाड़ी पर (मत्ती 28:16-20, मरकुस 16:15-18):-

यह शीघ्र ही स्पष्ट हो गया कि यीशु अपने शिष्यों से क्यों मिलना चाह रहा था। गलील के बाद अगला चरण गैरयहूदियों के राज्य में प्रवेश करना था। यीशु की सांसारिक सेवा केवल इस्राएलियों तक ही सीमित थी। परन्तु जो सेवा पुनरुत्थित यीशु ने अपने शिष्यों को सौंपी वह बिना भेदभाव के सभी मनुष्यों के लिए की जाने

वाली सेवा थी। मसीह की सामर्थ्य ही उनमें कार्य करेगी तथा उन्हें मृत्यु से छुड़ाकर आश्चर्यजनक कार्यों को करने की योग्यता प्रदान करेगी। (मत्ती 28:19-20, मरकुस 16:15-18) उनकी हर सेवा तथा कार्य का उद्‌देश्य लोगों को बपतिस्मे द्वारा प्रभु यीशु के मार्ग पर चलने की शिक्षा देना था जिससे कलीसियाओं की स्थापना तथा उनकी वृद्धि हो। इस तरह सभी देशों के लोग यीशु के शिष्य बनकर दूसरों तक भी उसी प्रभु यीशु का संदेश पहुंचा सकेंगे। (मत्ती 28:18-20)

यीशु का स्वर्गारोहण (मरकुस 16:19-20, लूका 24:44-53):-

अपने जी उठने तथा स्वर्गारोहण के बीच के चालीस दिनों में वह अपने शिष्यों को विभिन्न शिक्षाएं देता रहा। उदाहरण के लिए उसने इम्माऊस के मार्ग पर जाते हुए अपने दो शिष्यों को यह बताया कि किस प्रकार उसके दुख उठाने तथा महिमा में प्रवेश करने से पुराने नियम की शिक्षाओं को एक नया अर्थ मिल गया। इन्हीं वचनों की स्पष्ट समझ प्रभु यीशु की मृत्यु तथा जी उठने के प्रत्यक्ष गवाहों को दूसरों के पास सुसमाचार पहुंचाने के लिए निश्चयता प्रदान करेगी। इस कार्य के लिए आत्मिक सामर्थ्य पवित्र आत्मा के द्वारा से प्राप्त होगी। अतः यीशु जब उन्हें छोंड़कर अपने पिता के पास जा रहा था तब शिष्यों को यरुशलेम में उस समय तक रुकना पड़ा जब तक कि आत्मा उन पर भेजा न गया। (लूका 24:44-49, प्रेरितों के काम 1:3-8)

तब यीशु अपने शिष्यों को जैतून पहाड़ की ढलान पर बैतनिय्याह गांव में ले गया जहां से वह अपने पिता के पास स्वर्ग पर चढ़ा लिया गया। इस बार यीशु से बिछुड़ते समय शिष्यों के हृदय में उनके क्रूस पर चढ़ाए जाने के समय की तरह दुख तथा उलझन नहीं परन्तु प्रसन्नता व समझदारी थी। तब शिष्य यरुशलेम को लौट आए जहां कुछ दिनों के बाद उन्हें पवित्र आत्मा मिला। फिर उन्होंने यीशु मसीह के सुसमाचार के प्रचार का अपना कार्य आरम्भ किया। तब लोगों के विशाल जनसमूंह ने प्रभु पर विश्वास किया क्योंकि प्रभु स्वयं अपने शिष्यों में होकर कार्य कर रहा था। (मरकुस 16:19-20, लूका 24:50-53, प्रेरितों के काम 1:9-12)

Creation Autonomous Academy

7-पुनरागमन

बाइबल बार बार घोषणा करती है कि प्रभु यीशु मसीह पृथ्वी पर वापिस आने वाला है। पुराने नियम में पृथ्वी पर आने वाले एक ऐसे राज्य की भविष्यवाणियां है, जिसमें मसीह राज्य करेगा। नया नियम इसमें एक अन्य सत्य जोड़ता है, जो पहले छिपा था, कि इससे पहले कि प्रभु अपना राज्य स्थापित करने आए, वह अपनी कलीसिया को पृथ्वी पर से उठा लेने के लिए बादलों पर आएगा।

मसीह का दुबारा आना बाइबल की भविष्यवाणी का एक विशिष्ट विषय है, क्योंकि परमेश्वर के विश्व में अब तक घटी या भविष्य में घटने वाली घटनाओं में, यह सर्वोच्च घटना है।

पुराने नियम की भविष्यवाणियां मसीह के दोनों आगमनों के बीच भेद को स्पष्टता से नहीं बताती। मसीह के दुख तथा उसकी महिमा (1 पतरस 1:10-11) कभी-कभी एक ही भविष्यवाणी में मिला दी गयी है। परमेश्वर ने जो उन पर प्रगट किया उसमें से कुछ के बारे में भविष्यद्वक्ता स्वयं उलझन में थे, क्योंकि दोनों घटनाओं के बीच का समय (अर्थात आज का युग) सफाई से नहीं प्रकट किया गया था। यह ऐसे ही है जैसे कोई दूर से पहाड़ों की दो चोटियों को देखे जो देखने में एक ही चोटी प्रतीत होती है, जबकि वास्तव में उनके बीच में एक घाटी भी है। हम इस प्रकार, भविष्यवाणी की घाटी में खड़े हैं जहां से पीछे देखने पर 'मसीह के दुखों को' तथा आगे देखने पर 'उनके बाद होने वाली महिमा' को देखते हैं।

कलीसिया का स्वर्ग पर उठाया जाना (rapture):-

पवित्र शास्त्र में मसीह के अपने लोगों को लेने के लिए आने (उसका द्वितीय आगमन) तथा उसके सामर्थ्य और महिमा के साथ पृथ्वी पर अपना राज्य स्थापित करने के लिए आने (उसका तृतीय आगमन) के बीच में भेद बताया गया है। पहली घटना को कलीसिया का स्वर्ग पर उठाना (**rapture**) कहा गया है, जिसका अर्थ है ऊपर उठा लेना। उस समय मसीह वास्तव में पृथ्वी को नहीं छुयेगा परन्तु विश्वासियों को पृथ्वी पर से ले जाने के लिए बादलों पर आएगा। यह सत्य पुराने नियम के भविष्यद्वक्ता नहीं जान सकते थे, क्योंकि उस समय तक कलीसिया नहीं बनी थी। पौलुस कलीसिया के उठाए जाने को एक भेद बताता है। (1 कुरिन्थियों 15:1-52) यह बात कलीसिया के जन्म जो प्रेरितों के काम की पुस्तक में बताया गया है, जब पिन्तेकुस्त के दिन पवित्र आत्मा आया, से पहले नहीं जाना जा सकता था।

प्रभु का अपने लोगों के लिए आना निकट है, अर्थात कभी भी हो सकता है। यह एक ऐसा महान सत्य है, जिसे पवित्र शास्त्र में सफाई से जोर देकर बताया गया है। हमें उत्सुकता से बाट जोहने को कहा गया है। (फिलिप्पयों 3:20-21, तीतुस 2:13, 1 यूहन्ना 2:28) अब कलीसिया के उठाए जाने से पहले कुछ भी पूरा होना बाकी नहीं है। (तीतुस 2:12-13, प्रकाशित वाक्य 3:3-10)

1 थिस्सलुनीकियों 4:16-17 स्पष्टता से बताता है कि सभी मुर्दे एक साथ, एक ही समय नहीं जीवित हो उठेंगे। प्रभु के दुबारा आने के समय, जो विश्वासी मर चुके हैं वह पहले जिलाए जाएंगे। उसके बाद जीवित विश्वासी उससे हवा में मिलने के लिए उठाए जाएंगे। यह इसलिए सम्भव होगा क्योंकि हमारे शरीरों में एकाएक परिवर्तन होगा। (1 कुरिन्थियों 15:51-52) तब सब विश्वासी मसीह के न्याय सिंहासन के सामने खड़े होंगे। (रोमियों 14:10, 2 कुरिन्थियों 5:9-10) यह न्याय उद्धार के लिए नहीं होगा, क्योंकि केवल उद्धार प्राप्त लोग ही वहां होंगे। यह विश्वासयोग्य सेवा के लिए पुरस्कार देने हेतु होगा। (2 तीमुथियुस 4:7-8) पवित्र शास्त्र बताता है कि सब मसीहियों ने 'अच्छी कुश्ती' नहीं लड़ी है और पुरस्कार नहीं पाएंगे। जिन्होंने अच्छी कुश्ती लड़ी है वही पुरस्कार पाएंगे। (1 कुरिन्थियों 3:11-15)

Creation Autonomous Academy

अध्याय-7

पवित्र आत्मा

(Holy Spirit)

उसका व्यक्तित्व

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें:

पवित्र आत्मा एक व्यक्ति है। इस वास्तविकता को स्पष्ट करना भी कठिन है और समझना भी, क्योंकि हमें यह समझने की आदत नहीं है कि आत्मा और व्यक्तित्व एक दूसरे के पूरक होते हैं: जब हम किसी व्यक्ति के विषय में सोचते है तो प्रायः हमें उसके शरीर के प्रति चेतना होती है, उसकी आत्मा हमारे लिए वे असार होती है परन्तु धर्मशास्त्र का वक्तव्य पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व के सम्बन्ध में सुस्पष्ट है। वह मात्र एक प्रभाव या संसार में कार्यरत व्यक्तित्वहीन शक्ति नहीं हैं, वह एक व्यक्ति है, और परमेश्वरत्व का एक महत्वपूर्ण सदस्य है।

कलीसिया की शिक्षा में पवित्र आत्मा और उसकी सेविकाई की उपेक्षा की जाती रही है, इसलिए बहुत से मसीही उसके विषय में अज्ञान हैं, वे नहीं जानते हैं कि वह क्या करता है। सम्भवतः इसका एक कारण यह भी है कि पुराने नियम में त्रिएकत्व के सिद्धान्त को सुस्पष्ट रूप में प्रस्तुत नहीं किया गया है। आत्मा के सिद्धान्त की स्पष्ट शिक्षा नए नियम में ही दिखती है। अनेक लोगों की इसके विषय में विचारधारा कुछ इसलिए गड़बड़ है कि अंग्रेजी भाषा के कुछ अनुवादों में इसको 'होली गोस्ट' भी कहा गया है। परन्तु गोस्ट शब्द का अर्थ वही है जो आत्मा अनुदित किया गया है। आधुनिक युग में तान्त्रिकवाद तथा प्रेतात्मवाद पर बहुत अधिक बल दिया जाता है, इसलिए यह याद रखना जरूरी है कि शरीर से पृथक हो कर मानवीय आत्मा प्रेत बनकर इस पृथ्वी पर तंग करने नहीं आती है।

अनेक लोगों को यह वास्तविकता व्याकुल कर देती है कि पवित्र आत्मा का कोई शरीर नहीं है, इसलिए उनके विचार में वह व्यक्ति नहीं हो सकता। परन्तु धर्मशास्त्र इस विषय पर स्पष्ट है कि परमेश्वर पिता आत्मा है। इसका अर्थ यह नहीं है कि उसका शरीर नहीं है। (यूहन्ना 4:24) परमेश्वर पुत्र का भी उस समय तक शरीर नहीं था जब तक उसने बैतलहम में बालक के रूप में जन्म नहीं लिया। ठीक वैसे ही जैसे परमेश्वर पिता, परमेश्वर पुत्र व्यक्ति है, वैसे ही पवित्र आत्मा भी व्यक्ति है।

मनुष्य के लिए परमेश्वर के आकार की परिभाषा करना सदा ही एक समस्या बनी रहेगी, क्योंकि मानवीय स्तर पर परमेश्वर का मापदण्ड करने का कोई उपाय या साधन नहीं है। वह मानवीय परिज्ञान की सीमा से कहीं ऊंचा और अपरिमित है। परन्तु एक चेतना है जिसके द्वारा हम अनुभव करते हैं कि परमेश्वर एक व्यक्ति है, जब हम सृष्टि में उसकें हाथों के कार्य देखते हैं। धर्मशास्त्र उसे पिता के रूप में चित्रित करता है, यह एक ऐसी धारणा है जिसे हम समझ सकते हैं। परमेश्वर पुत्र, प्रभु यीशु का व्यक्तित्व, उसके देहधारी होने और पृथ्वी पर उसके जीवन से प्रमाणित है, परन्तु पवित्र आत्मा को एक व्यक्ति के रूप में समझ लेना अधिक कठिन है, क्योंकि उसकी सेविकाई की परिभाषा अधिक कठिन है। ऐसा विशेष रूप में इसलिए है क्योंकि धर्मशास्त्र उसे वायु और सांस व्यक्त करता है। (यूहन्ना 3:8, प्रेरितों के काम 2:1-2) और उसे तेल (लूका 4:18), आग (प्रेरितों के काम 2:1-4) तथा पानी (यूहन्ना 7:37-39) भी बताता है। व्यक्तित्व को शारीरिक देह द्वारा निर्धारित नहीं किया जा सकता है। शरीर मर जाता है, परन्तु व्यक्ति नहीं मरता, क्योंकि उसका जो भाग उसे एक व्यक्ति बनाता है – उसकी आत्मा -वह जीवित रहती है। व्यक्तित्व को ज्ञान -शक्ति , इच्छा और मनोभाव निर्धारित करते है। हमारे अन्दर देह के खोल में ये विद्यमान रहते हैं परमेश्वर -पिता, पुत्र, तथा पवित्र आत्मा के लिए शारीरिक देह आवश्यक नहीं है।

पवित्र आत्मा मात्र परमेश्वर की एक विशेषता या निर्गम नहीं है। उसके वचन और विलक्षणताएं स्पष्ट कर देती हैं कि वह एक सुनिश्चित व्यक्ति है। धर्मशास्त्र में परमेश्वर के सन्दर्भ में पवित्र आत्मा भी सम्मिलित है। (मत्ती 28:19, 2 कुरिनिथों 13:14) । पवित्र आत्मा के प्रति ऐसी विचारधारा अनुपयुक्त तथा विचित्र होगी कि वह एक व्यक्तित्वहीन शक्ति है जब कि उसे त्रिएकत्व के दूसरे दो व्यक्तियों के साथ समान आधार पर सम्मिलित किया गया है।

उसके व्यक्तित्व के प्रमाण

पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व की वास्ताविकता को कैसे प्रमाणित किया जा सकता है? हम एक दूसरे के लिए जो स्तर निर्धारित करते है; उसके द्वारा अपने आप हमें इसका ज्ञान हो जाता है, परन्तु परमेश्वर को इस प्रकार नहीं मापा जा सकता। हमें परमेश्वर के स्वरूप में बनाया गया है। फिर भी व्यक्तित्व के कुछ ऐसे स्तर हैं ; जिनको यह प्रगट करने के लिए प्रयोग किया जा सकता है कि पवित्र आत्मा वास्तव में एक व्यक्तित्व है।

Creative Autonomous Academy

1-उसके नाम हैं जिससे उसके व्यक्तित्व का संकेत मिलता है : इनमें सबसे प्रमुख नाम है सहायक। यीशु ने उसके लिए यहून्ना 14:16 में इसका प्रयोग किया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि पवित्र आत्मा के लिए व्यक्तिगत सर्वनाम प्रयोग किए गए हैं- 'वह सर्वदा तुम्हारे साथ रहेगा' (यहून्न 14:16) और 'वह आ कर संसार को पाप और धार्मिकता और न्याय के विषय में निरूत्तर करेगा (यहून्ना 16:8)। यूनानी व्याकरण के नियमों के अनुसार इसका प्रयोग अकर्मक सर्वनाम में होना चाहिए था। परन्तु बाइबल के लेखकों ने पवित्र आत्मा के मार्गदर्शन में पुरूषवाचक सर्वनाम का प्रयोग किया, और इस प्रकार पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व पर विशेष बल दिया। जब कि मूल भाषा में धर्मशास्त्र में किसी प्रकार की गलती नहीं है, तो हम निश्चित रूप में कह सकते हैं कि यह भूल नहीं, वरन परमेश्वर के अचूक वचन के द्वारा पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व का एक जान बूझ कर किया गया चित्रण है।

2- उसकी व्यक्तिगत विशिष्टताएं हैं : कुछ ऐसे गुण होते हैं जो केवल व्यक्तियों में ही विद्यमान होते हैं। उनमें ज्ञान और तर्क की मनोवृति क्रिया के प्रति इच्छा , अनुभव तथा प्रतिक्रिया की भावना आदि सम्मिलित हैं। धर्मशास्त्र इस विषय में सुस्पष्ट है कि पवित्र आत्मा में ये गुण विद्यमान हैं।

रोमियों 8:27 में आत्मा की मनोवृति स्पष्ट की गई है। वही है जो विश्वासियों को ज्ञान सिखाता है (1 कुरिन्थियों 2:13) । वह परमेश्वर की गहरी बातें जानता है। (1 कुरिन्थियों 2:10 -11)

उसकी इच्छा 1 कुरिन्थियों 12:11 में स्पष्ट की गई है, जब कि वह आत्मिक वरदानों के वितरण का निर्देशन करता है। अनेक बार उसने विशेष लोगों को विशेष निर्देशन दिए जैसे फिलिप्पुस को प्रेरितों के काम 8:29 और कलीसिया को प्रेरितों के काम 13:1-4 में।

उसके व्यक्तित्व का प्रमाण धर्मशास्त्र में उसकी अनुभूतियों के गुण को स्पष्ट करके दिया है। पौलुस रोमियों 15:30 में पवित्र आत्मा के प्रेम का वर्णन करता है, ऐसी अनुभूति केवल व्यक्ति को होती है। केवल व्यक्ति ही शोकित हो सकता है (इफिसियों 4:30) या उसी से झूठ बोला जा सकता है (प्रेरितों के काम 5:3)

Creation Autonomous Academy

3-उसके कार्य प्रकट करते हैं कि वह एक व्यक्ति है : वह बोलता है (गलातियों 4:6) । शिक्षा देता और मार्गदर्शन करता है (यूहन्ना 14:26,16:13), नेतृत्व करता है (प्रेरितों के काम 12:6,7) सान्तवना देता है (यूहन्ना 14:16;16:7) आज्ञा देता है, (प्रेरितों के काम 8:29)

4-व्यक्ति के समान उसमें प्रतिक्रिया होती है : उसे शोकित किया जा सकता है (इफिसियों 4:30), विरोध किया जा सकता है (1 थिस्सलूनीकियों 5:19), निन्दा की जा सकती है (मत्ती 12:32), उससे झूठ बोला जा सकता है (प्रेरितों के काम 5:3), उसकी आज्ञा का पालन हो सकता है (प्रेरितों के काम 10:19-21), उसके विरोध मे बोला जा सकता है (मत्ती 12:23)। यदि वह वास्तव में व्यक्ति न होता तो ऐसी प्रतिक्रियाएं सम्भव न होती

उसके व्यक्तित्व का महत्व -

एक विश्वासी के लिए पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व का उपयुक्त ज्ञान और उस पर विश्वास बहुत अधिक महत्व रखता है।

इसका हमारी उपासना में बहुत महत्व है। यदि पवित्र आत्मा व्यक्ति नहीं है तो उसकी उपासना नहीं की जानी चाहिए। परमेश्वर ने किसी वस्तु की उपासना न करने के कठोर आदेश दिए हैं। उसने चेतावनी दी है, ‘तू अपने लिए कोई मूर्ति न गढ़ना’, (व्यवस्थाविवरण 5:8) और जब लोगों ने सोने के बछड़े की पूजा की तो उनको परमेश्वर ने दण्ड दिया। (निर्गमन 32) परन्तु परमेश्वर की आज्ञा में यह तथ्य सम्मिलित था कि उसको छोंड़ कर अन्य किसी भी व्यक्ति या वस्तु की उपासना न की जाए। (व्यवस्थाविवरण 5:7, यशायाह 45:22)। त्रिएकत्व के सदस्य के रूप में पवित्र आत्मा परमेश्वर पिता और परमेश्वर पुत्र से बंधा हुआ है (मत्ती 28:19) और उसकी समान रूप में उनके साथ ही आराधना की जानी चाहिए। इसका हमारे सेवकाई में भी बहुत महत्व है। पवित्र आत्मा वही है जो सेवकाई के लिए शक्ति और बल प्रदान करता है। वह ऐसी व्यक्तित्वहीन शक्ति नहीं है, जिसको हम चालाकी से प्रभावित कर सकें, परन्तु एक व्यक्ति है जो प्रत्येक विश्वासी को शिक्षा देता है। उसका मार्गदर्शन करता है।

इसका हमारे अनुभवों में भी बहुत महत्व है। पवित्र आत्मा विश्वासी के धर्मशास्त्र के ज्ञान की वृद्धि करने में सहायक होता है। 1 कुरि० 2:9-11 और प्रभु यीशु मसीह की साक्षी देने की योग्यता में भी वृद्धि करता है। (प्रेरितों के काम 1:8)

उसका ईश्वरत्व

आपके अध्ययन के लिए कुछ बाते :

परमेश्वर को परमेश्वर कौन सी बातें बनाती हैं? धर्मशास्त्र में उसका अनेक रुपों में वर्णन किया गया है। बाइबल बताती है कि वह स्वयं विद्यमान है, अनन्त, व्यक्तिगत आत्मा है , जो संसार पर प्रभुसत्ता सम्पन्न है, और संसार से पूर्णतया भिन्न है वह सर्वज्ञानी , सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है। उसका कोई आकार

नहीं है। वह अदृश्य, अपरिवर्तनीय, समय और स्थान की सीमाओं से पूर्णतया मुक्त है। परमेश्वर के चरित्र और अस्तित्व की अन्य परिभाषाएं भी की जा सकती हैं। यदि पवित्र आत्मा परमेश्वर है, तो इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उसमें भी वही गुण विद्यमान होने चाहिए।

पवित्र आत्मा के परमेश्वर होने के प्रमाणः

धर्मशास्त्र में उसको परमेश्वर के बराबर माना गया है। बाइबल पुराने नियम के यहोवा को पवित्र आत्मा का ही रुप मानती है। पुराने नियम में ऐसे अनुच्छेद हैं जो परमेश्वर के कार्यों का वर्णन करते हैं, और इन अनुच्छेदों में उसके गुण व्यक्त किए गए हैं । नया नियम इसका संकेत देता है कि इनमें से कुछ कार्य या शब्द पवित्र आत्मा के है। उदाहरण के लिए यशायाह 6:1-13 की तुलना प्रेरितों के काम 28:25-27 से और यिर्मयाह 31:31-34 की तुलना इब्रानियों 10:15-17 से कीजिए।

मत्ती 28:19 में प्रभु यीशु ने बपतिस्मे के नियम में पवित्र आत्मा को परमेश्वर के नाम में सम्मिलित किया है। उसने तीन व्यक्तियों को एक नाम दिया है। 2कुरिन्थियों 13:14 में दिए गए आर्शीवाद में भी ऐसा ही किया गया है। पवित्र आत्मा के ईश्वरत्व का दृढ़ शब्दों में प्रभु यीशु ने प्रमाण प्रस्तुत किया है, वह मरकुस 3:28-29 में पाया जाता है, जब कि उसने उन लोगों को चतावनी दी जो पवित्र आत्मा की निन्दा करते हैं और जिनका यह अपराध क्षमा नहीं किया जाएगा। ईश-निन्दा केवल परमेश्वर के विरुद्ध पाप है, किसी दूसरे व्यक्ति के विरुद्ध नहीं ।

धर्मशास्त्र बताता है कि जिस विश्वासी के अन्तर में पवित्र आत्मा वास करता है, उसमें परमेश्वर वास करता है (1 कुरिन्थियों 3:16,6:19; इफिसियों 2:22) आत्मा का नाम भी स्वयं भी उसके ईश्वरत्व का संकेत है, क्योंकि एकमात्र परमेश्वर ही पवित्र है।

धर्मशात्र पवित्र आत्मा को परमेश्वर के गुण प्रदान करता हैः सर्वशक्तिमान (अय्यूब 33:4, प्रेरितों के काम 1:8), सर्वज्ञानी (1 कुरन्थियों 2:10-12), सर्वव्यापक (भजन 139:7-10), उसमें अन्य गुण भी हैं, जो कि केवल परमेश्वर में पाए जाते हैं, जैसे सत्य (1 यूहन्ना 5:6) जो कि यीशु मसीह की विशिष्टता है (यूहन्ना 14:6) प्रेम तथा पवित्रता।

Creation Autonomous Academy

वह वही कार्य करता है जो परमेश्वर करता है।

1-सृष्टि की रचना में उसका भी भाग था। यह वास्तविकता कि पवित्र आत्मा परमेश्वर है, और जैसे कि परमेश्वर सर्वत्र विद्यमान है, और परमेश्वर ने उसे सृष्टि की रचना के कार्य में सम्मिलित किया, तो उसका यह कार्य स्वयं में उसके ईश्वरत्व का एक प्रमाण है, धर्मशास्त्र बताता है, परमेश्वर का आत्मा जल के ऊपर मंडराता था' (उत्पत्ति 1:2)। सृष्टि की रचना में पवित्र आत्मा का विशेष कार्य जीवन प्रदान करना (भजन

104:30; अय्यूब 27:3(33:4) और व्यवस्था क्रम स्थापित करना था। यशायाह 40:12-15 में इसको सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर का आत्मा बताता गया है, जो सृष्टि का एकमात्र पालनकर्ता है।

2-वह धर्मशास्त्र का लेखक है। पतरस की दूसरी पत्री हमें याद दिलाती है कि वे लोग जो परमेश्वर की ओर से बोलते थे (मानव लेखक) वे ‘ पवित्र आत्मा के चलाए चलते थे ’, जिससे परमेश्वर का सन्देश सही सही रुप में अंकित किया गया जैसा वह चाहता था। यही बात पुराने नियम के लेखकों के विषय में भी सत्य ठहराती है। उन्होंने बार बार इस बात का दावा किया कि उनके शब्द पवित्र आत्मा के शब्द हैं जो उनके द्वारा संसार तक पहुॅच रहे हैं। (2 शमूएल 23:2; यहेजकेल 2:2; मीका 3:8)। नये नियम के लेखक पवित्र शास्त्र के निर्माण कार्य में पवित्र आत्मा के कार्य का वर्णन करते हैं। (प्रेरितों के काम 1:16; 1 कुरिन्थियों 2:13)। प्रभु यीशु ने अपने शिष्यों को बताया कि जब पवित्र आत्मा आएगा तो उनको ये बाते स्मरण कराएगा, जिनकी शिक्षा यीशु ने उनको दी है (यूहन्ना 14:26)।

धर्मशास्त्र को देने का उसका कार्य पवित्र आत्मा के ईश्वरत्व का प्रमाण है, क्योंकि परमेश्वर का वचन वास्तव में परमेश्वर का वचन होने के लिए- किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा नहीं दिया जा सकता था, जो परमेश्वर न हो।

3-वह आश्चर्यकर्म करता है। आश्चर्यकर्म अस्थाई रुप में परमेश्वर के प्राकृतिक नियम को एक ओर उठा कर रख देता है। केवल परमेश्वर ही उस प्रकृति के नियम को बदल सकता है, जो उसने मानवीय क्षेत्रों में निर्धारित किया है। यद्यपि पुराने नियम में आत्मा के आश्चर्यकर्मो के विवरण कहीं ही मिलते है (उदाहरण के लिए देखिए, यहेजकेल 3:12)। परन्तु नये नियम में सुस्पष्ट है। देहधारी होने का कार्य पवित्र आत्मा ने किया, जब कि उसने प्रभु यीशु का मानवीय स्वभाव उत्पन्न किया (लुका 1:35 मत्ती 1:20)। उसने प्रभु यीशु को आश्चर्यकर्म करने की शक्ति प्रदान की (मत्ती 12:28; लूका 4:14-18)। उसने प्रारम्भिक कलीसिया की घटनाओं के द्वारा आश्चर्यजनक रुप में कार्य किए (प्रेरितों के काम 8:39)।

Creation Autonomous Academy

पवित्र आत्मा के समस्त कार्य यह स्पष्ट कर देते हैं कि वह परमेश्वर है, यद्यपि उसके कार्य परमेश्वर पिता और परमेश्वर पुत्र के बदले सम्पन्न होते हैं (यूहन्ना 16:13-15)।

ईश्वरत्व में क्रम -

चूंकि हमारा ज्ञान सीमित है इसलिए ईश्वरत्व के व्यक्तियों में परस्पर सम्बन्ध हमारे लिए एक उलझन पैदा कर देते हैं। हमारी आदत बन गई है कि हम इनको परमेश्वर पिता, परमेश्वर पुत्र, और परमेश्वर पवित्र

आत्मा का क्रम देते हैं, जैसे कि इनका महत्व एक, दो, तीन क्रमों में हो। परन्तु ऐसी बात नहीं है। धर्मशास्त्र में व्यक्तियों को एक निश्चित क्रम दिया गया है। यूहन्ना 3:16 कहता है पिता ने पुत्र को जगत में भेजा। फिर पिता और पुत्र ने पवित्र आत्मा को भेजा (यूहन्ना 14:26) यह उनके अधिकार या महिमा या महत्व में भेद उत्पन्न नहीं करता, यह केवल एक क्रम है। इन तीन समान व्यक्तियों में जो अनन्त सम्बन्ध स्थापित है, उसको पूर्णतया स्पष्ट कर देना असम्भव है।

पुराने नियम में पवित्र आत्मा -

पुराने नियम के युग में पवित्र आत्मा संसार में कार्यशील था। वह जिस पर चाहता था आता था और जब चाहे उतर जाता था। वह अभी तक 'दिया' नहीं गया था (यूहन्ना 7:39)। इसलिए वह परमेश्वर पर विश्वास रखने वालों के अन्दर वास नहीं करता था, जैसे कि वह आज के अनुग्रह के इस युग में करता है। पुराना नियम उसको प्रभुसत्ता-सम्पन्न के रुप में प्रकट करता है, जो कि मनुष्यों के कार्य-व्यवहार में अपनी प्रभुसत्ता -सम्पन्न इच्छा के अनुसार कार्य करता था। धर्मशास्त्र उसके पिछले युगों के कार्यों को इस रुप में व्यक्त करता है।

मनुष्यों से विवाद करता था (उत्पत्ति 6:3)
योग्य मनुष्यों को निपुणता प्रदान करता था (निर्गमन 28:3; 31:3)
शारीरिक बल प्रदान करता था (न्यायियों 14:6,19)
बुद्धिमता और योग्यता प्रदान करता था (न्यायियों 3:10; 6:34)
समझने की शक्ति देता था (अय्यूब 32:8)
मनुष्यों को ईश्वरीय प्रकाशन प्रदान करता था (गिनती 11:17, 25; 24:2; 2 शमूएल 23:1-2)
मनुष्यों को परमेश्वर के संदेश लिखने की प्रेरणा देता था (2 पतरस 1:21)

पुराने नियम के युग में जहां तक मनुष्यों की आत्मिकता का सम्बन्ध था, पवित्र आत्मा की उपस्थिति उसके लिए आवश्यक नहीं थी (जैसा कि शिमशोन के जीवन से स्पष्ट है)। पुराने नियम के युग में पवित्र आत्मा की उपस्थिति अस्थाई होती थी। यह सर्वव्यापक नहीं थी, क्योंकि सभी परमेश्वर के विश्वासियों में पवित्र आत्मा का वास नहीं होता था। साधारणतया उसकी उपस्थिति लोगों पर किसी विशेष अभिप्राय के लिए ही होती थी। परन्तु यद्यपि समस्त अतीत के युगों में पवित्र आत्मा स्थाई रुप में संसार में विद्यामान नहीं था, तो भी वह मनुष्यों के कार्य व्यवहार में सदा ही कार्यशील था और अपने ईश्वरीय अभिप्राय के लिए कार्य करता था।

Creation Autonomous Academy

आधुनिक युग में पवित्र आत्मा-

अनुग्रह के इस आधुनिक युग में पवित्र आत्मा की सेवकाई बहुत शक्तिशाली है। इस युग के संसार में वह उपस्थित है और परमेश्वरत्व का कार्यशील व्यक्ति है। वह यहां शैतान के कार्य को रोकने और अपने प्रतिदिन के अनुभव में विश्वासी की सहायता करने के लिए उपस्थिति है। वह सत्य का प्रगटकर्ता है (यूहन्ना 16:13), वही विश्वासी पर धर्मशास्त्र का सच्चाई का भेद प्रगट करता है और उस पर परमेश्वर की इच्छा स्पष्ट करता है (1 कुरिन्थियों 2:11-12)। वह ऐसा इसलिए कर सकता है, क्योंकि वह परमेश्वर है। परमेश्वर होने के नाते वह हमसे बिना शर्त आज्ञापालन और उपासना चाहता है।

उसकी सेवकाई
रोक लगाना और दोषी ठहराना

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें :

पवित्र आत्मा, त्रिएकत्व का वह तीसरा व्यक्ति है जिसके द्वारा संसार पर परमेश्वर की शक्ति प्रमाणित होती है। एक प्रणाली के रुप में संसार दुष्ट है और यह शैतान के अधीन है, जो कि संसार का राजकुमार है। (यूहन्ना 12:31; 14:30) और यह संसार का ईश्वर है (2 कुरिन्थियों 4:4)। इफिसियों 6:12 में संसार में दुष्टता की शक्तियों का विवरण देते हुए उनको 'इस संसार के अंधकार की और दुष्टता की आत्मिक सेनाएं' कहा गया है। जो भी हो आज संसार में पवित्र आत्मा अनेक प्रकार से कार्यरत है। उसका प्रमुख कार्य दुष्टता पर रोक लगाना है।

पवित्र आत्मा की रोक लगाने वाली सेवकाई :

2 थिस्सलुनीकियों 2:3:7 में इस विषय पर कुछ वास्तविकताएं प्रस्तुत की गई है :
पाप संसार में कार्यरत है।
रोक लगाने वाली शक्ति पाप को अपना पूर्ण प्रदर्शन करने से रोकती है।
रोक लगाने वाली शक्ति भविष्य में किसी समय हटा दी जाएगी।

Creation Autonomous Academy

पवित्र शास्त्र की यही पूर्ण साक्षी है कि शैतान पाप का बनाने वाला है। यह उत्पत्ति 3 से स्पष्ट है और यूहन्ना 8:44 में इस पर अधिक बल दिया गया है, इसमें यीशु शैतान को 'आरम्भ से ही हत्यारा, और झूठा और झूठ का पिता', कहता है। परन्तु रोकने वाले के लिए शैतान से अधिक शक्तिशाली होना आवश्यक है, क्योंकि यह पाप को उस सीमा तक बुराई करने से रोक देने में सक्षम है, जिस सीमा तक पाप में बुराई करने की क्षमता है। केवल परमेश्वर ही शैतान से अधिक शक्तिशाली है। जब कि पवित्र आत्मा परमेश्वरत्व का एक व्यक्ति है जो संसार में अतीत के युगों में क्रियाशील रहा है (उत्पत्ति 6:3) और आज भी है, तो यह वही होना

चाहिए जिसका 2 थिस्सलुनीकियों के अनुच्छेदों में वर्णन पाया जाता है। जब कि पवित्र आत्मा इस संसार में उपस्थित है और वह प्रत्येक विश्वासी के अन्दर में वास करता है, तो यह मसीहियों द्वारा ही बड़े पैमाने पर अपनी रोकने वाली शक्ति का प्रयोग करता है। जब विश्वासी जो कलीसिया की स्थापना करते हैं, हवा में अपने प्रभु से करेंगे भेंट तो पवित्र आत्मा का वर्तमान सुस्पष्ट कार्य समाप्त हो जाएगा इसका अर्थ यह नहीं कि वह पूर्णतया संसार से विश्वासियों को हटा लेने के बाद अनुपस्थित हो जाएगा जैसा पिन्तेकुस्त से पहले अनुपस्थित था। उसकी भविष्य में भी सेवकाई होगी जैसा की पुराने नियम के युग में था, परन्तु उसकी उपस्थिति और उसकी शक्ति विभिन्न रुप में दृष्टिगोचर होगी।

समस्त पवित्र शास्त्र में पवित्र आत्मा की उपस्थिति स्पष्ट है। यहॉ तक कि मानव अव्यवस्था में भी वह उपस्थित था। वह उत्पति 6में अपनी रोकने वाली शक्ति के साथ उपस्थित था, जब की पाप बहुत बढ़ गया था, यहॉ तक की ''मनुष्यों के मन के विचार में जो कुछ उत्पन्न होता था, वह निरन्तर ही बुरा होता था।'' तब परमेश्वर ने बुराई को मिटा देने के लिए जल- प्रलय भेजा। न्यायियों के युग में जब कि ''प्रत्येक व्यक्ति वही करता था जो उसे अच्छा लगता था,'' उनको तब सांत्वना प्राप्त हुई जब पवित्र आत्मा ने कुछ चुने हुए व्यक्तियों के माध्यम से कार्य किया। (न्यायियों 21:25)

पवित्र आत्मा की रोक लगाने वाली सेवकाई का समस्त पुराने नियम में स्पष्ट वर्णन पाया जाता है। यह भविष्यद्वक्ताओं के माध्यम से पाप के विरुद्ध दण्ड की घोषणा करता है, और पवित्र शास्त्र की रचना का कार्य सम्पन्न करता। उस युग में पृथ्वी पर पवित्र आत्मा स्थाई रुप में वास नहीं करता था, और इस अवस्था में भी वह पाप को पृथ्वी पर बढ़ने से रोकने का कार्य कर रहा था।

अब कलीसिया के इस युग में, जब कि वह प्रत्येक विश्वासी के अन्तर में उपस्थित है, उसकी रोक लगाने वाली शक्ति भी अधिक प्रभावशाली और सुस्पष्ट है। यद्यपि अव्यवस्था तथा दुष्टता सर्वत्र दिखाई देती है, बे -लगाम पाप निरंकुश नहीं है। संकट काल में भी संसार की यही दशा होगी, जब कि कलीसिया और रोक लगाने वाली पवित्र आत्मा की शक्ति उपस्थित नहीं रहेगी। अब पवित्र आत्मा मसीहियों, धर्मशास्त्र, और यहॉ तक की शासको को भी उन लोगों की स्वभाविक चरित्रहीनता को रोकने में उपयोग कर रहा है, जो मसीह से वंचित है।

Creation Autonomous Academy

पवित्र आत्मा की दोषी ठहराने वाली सेवकाई :

पवित्र शास्त्र पाप की वास्तविकता के विषय में सुस्पष्ट है और मनुष्य की जन्मजात पाप की मनोवृत्ति को भी व्यक्त कर देता है कि वह परमेश्वर को छोड़कर अपनी लालसाओं का अनुसरण करता है (रोमियों 3:12, 23) परमेश्वर की दृष्टि में प्रत्येक जन मृतक है, वह पाप के कारण उससे पृथक हो गया है। शैतान अपने गतिशील आन्दोलन द्वारा मनुष्यों को परमेश्वर के निकट आने और पाप से मुक्त किए जाने से रोक देता है (2 कुरिन्थियों 4:4) यही कारण है कि बाइबल यह कहती है कि मनुष्य अपने प्रयासों द्वारा परमेश्वर

के पास नहीं आ सकता। एक मृतक कुछ नहीं कर सकता। वह व्यक्ति जो पाप में मरा हुआ है, अपने उद्धार के लिए कुछ नहीं कर सकता उसके लिए सभी कुछ करना आवश्यक होता है। इसलिए पवित्र आत्मा की दोषी ठहराने वाली सेवकाई, लोगों के उद्धार के लिए बहुत आवश्यक है। (1 कुरिन्थियों 12:3) चूंकि त्रिएकत्व के तीनों व्यक्ति एक हैं और वही परमेश्वर हैं इसलिए पवित्र शास्त्र पवित्र आत्मा के दोषी ठहराने वाले कार्य को परमेश्वर द्वारा किया जाने वाला कार्य (यूहन्ना 3:44) और पुत्र द्वारा किया जाने वाला कार्य बताता है (प्रेरितों के काम 16:14)।

पवित्र आत्मा मनुष्यों को पाप, न्याय और धार्मिकता के विषय में दोषी ठहराता है (यूहन्ना 16:8-11)। दोषी ठहराए जाने का अर्थ बचाया जाना नहीं है। दोषसिद्धि सुसमाचार के संदेश का प्रमाण है। पवित्र आत्मा सुसमाचार की सच्चाई को मनुष्यों के आगे प्रस्तुत करता है ताकि वे उसकी सच्चाई को स्वीकार करें चाहें वे उसे ग्रहण करें या न करें। इस दोषी ठहराने वाली सेवकाई को अस्वीकार किया जा सकता है। फेलिक्स, पौलुस का संदेश सुन कर अपने को दोषी मानने लगा था, परन्तु उसने विश्वास नहीं किया (प्रेरितों के काम 24:24-25)। सुसमाचार को स्वेच्छा से स्वीकार किया जाना चाहिए, क्योंकि पवित्र आत्मा स्वीकार करने के लिए कभी बाध्य नहीं करता। फिर भी उद्धार होने से पहले दोष-सिद्धि का कार्य होना आवश्यक है।

इसलिए पवित्र आत्मा पाप के लिए दोषी ठहराता है। यहॉ पाप के विभिन्न कार्यों का उल्लेख नहीं किया गया है। हम साधारणतया स्वीकार कर लेते हैं कि दोनों ही कार्य पाप होते हैं, जैसे हत्या और चोरी ; और जिनकी हम बहुधा उपेक्षा कर देते है, जैसे ईर्ष्या और क्रोध। मनुष्य का आधार भूत पाप अविश्वास है और इसकी दोष-सिद्धि होनी चाहिए। पवित्र आत्मा पाप के विषय में दोषी ठहराता है, ''क्योंकि उन्होंने मुझ पर विश्वास नहीं किया '' (यूहन्ना 16:9)

पवित्र आत्मा धार्मिकता के विषय में दोषी ठहराता है यहॉ मनुष्य के दंभ का उल्लेख नहीं किया गया है, परन्तु यह मसीह की धार्मिकता है। उसके संदेश का प्रमाण उसकी मृत्यु, उसके पुर्नजीवित हो उठने और उसके स्वर्ग पर उठाए जाने से मिल चुका है। परमेश्वर के सन्मुख अन्य किसी प्रकार से मनुष्य निर्दोष नहीं ठहर सकता है, इसका एक मात्र उपाय मसीह की धार्मिकता को स्वीकार करना है। यह स्वीकृति मसीह पर विश्वास करने पर आधारित है, यद्यपि हम उसे देख नहीं सकते हैं। पवित्र आत्मा धार्मिकता के विषय में इसलिए दोषी ठहराता है कि ''मैं पिता के पास जाता हूँ और तुम मुझे नहीं देखोगे'' (यूहन्ना 16:10)।

अन्त में पवित्र आत्मा न्याय के विषय में दोषी ठहराता है, अविश्वासियों पर परमेश्वर का न्याय निश्चित है। यह आने वाला है, और इससे बचने का कोई उपाय नहीं है। पाप का दण्ड पहले ही यीशु मसीह की मृत्यु में सम्पन्न हो चुका है और जो मसीह को स्वीकार कर लेते हैं, पूर्ण क्षमा प्राप्त करते हैं। मसीह की मृत्यु के द्वारा शैतान की शक्ति को तोड़ा जा चुका है। पवित्र आत्मा न्याय के विषय में इसलिए दोषी ठहराता है क्योंकि , ''संसार का सरदार दोषी ठहराया गया है (यूहन्ना 16:11)।

मत्ती 12:22-30) में दिए गए विवरण में मसीह पर फरीसियों ने शैतान की शक्ति से दुष्टत्माओं को निकालने का जो अभियोग लगाया, वह ईश -निन्दा का क्षमा न किया जाने वाला पाप था-वे मसीह के

Creation Autonomous Academy

अन्दर पवित्र आत्मा के गुणों को शैतान का बता रहे थे। यह पाप आज नहीं किया जा सकता क्योंकि मसीह यहॉ नहीं है। परन्तु पवित्र आत्मा की सेवकाई की स्थाई अस्वीकृति एक क्षमा न किया जाने वाला पाप है।

कोई मनुष्य मसीह के निकट नहीं आता जब जक कि पवित्र आत्मा द्वारा प्रेरित न किया जाए, क्योंकि यह एक ऐसा कार्य है, जिसमें पाप के लिए उसे दोषी ठहराना और मुक्ति के प्रति उसकी आवश्यकता को प्रगट करना आवश्यक है। धर्मशास्त्र में 1 कुरिन्थियों 12:3 का यही अर्थ है, ''कोई मनुष्य पवित्र आत्मा के बिना यह नहीं कह सकता कि यीशु प्रभु है।'' चाहे कोई मनुष्य पवित्र शास्त्र पढ़कर मसीह के पास आए, या दुसरे मनुष्य की साक्षी द्वारा आए या अन्य किसी भी साधन द्वारा मसीह को स्वीकार करे, ये सब कार्य पवित्र आत्मा दोषी ठहराने वाली सेवकाई द्वारा सम्पन्न करता है, वही है जो मनुष्य के अन्दर परमेश्वर के मुक्ति के उपहार को स्वीकार करने की इच्छा उत्पन्न करता है।

उसकी सेवकाई
नवजीवन प्रदान करना और अन्तर में निवास करना

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें :

नवजीवन प्रदान करना -जीवित कर देना -एक ऐसा कार्य है जो केवल परमेश्वर कर सकता है। मनुष्य किसी प्रकार स्वयं को नवजीवन प्रदान नहीं कर सकता (यूहन्ना 1:13) ऐसा इसलिए है कि नवजीवन देना या अनन्त जीवन प्रदान करना मनुष्य के लिए एक नितान्त असम्भव कार्य है। पवित्र शास्त्र यह घोषणा करता है कि मनुष्य अपने पापों और अपराधों के कारण मरा हुआ है (इफिसियों 2:1); यह वास्तविकता सभी पर स्पष्ट है कि मृतक अपने को जीवित नहीं कर सकता। अनन्त जीवन एक ऐसा उपहार है जो केवल परमेश्वर ही दे सकता है।

नवजीवन एक रचना सम्बन्धी कार्य है। यह एक नया जन्म है। 2 कुरि० 5:27 में लिखा है जब मनुष्य उद्धार प्राप्त कर लेता है तो वह एक नया प्राणी बन जाता है, वह एक नई सृष्टि होता है। नवजीवन देने का कार्य पवित्र आत्मा का एक विशेष दायित्व है (यूहन्ना 3:3-6; तीतुस 3:5) ईश्वरत्व की एक अन्य पुष्टि है, क्योंकि जीवन केवल परमेश्वर ही दे सकता है।

Creation Autonomous Academy

नवजीवन प्रदान करना तत्काल हो जाता है। मुक्ति की ओर अग्रसर करने वाली प्रतिक्रिया धीमी गति से बढ़ सकती है, और इसमें बहुत लम्बा समय लग सकता है परन्तु परमेश्वर के परिवार में वास्तविक जन्म एक क्षण में हो जाता है। यह एकाकी, अतिशीघ्र होने वाला, निर्णायक कार्य है, यद्यपि इसके परिणाम लम्बे समय तक स्थिर रहते हैं।

नवजीवन प्रदान करने के परिणाम :

1-**इससे नया जीवन प्राप्त होता है, अनन्त जीवन।** यद्यपि हो सकता है कि नवजीवन प्राप्त मनुष्य इसे अनुभव न करे और वह अपने को भिन्न न समझे, परन्तु उसको पहले से भिन्न कार्य करने चाहिए, क्योंकि उसे परमेश्वर द्वारा जीवन का उपहार प्राप्त हो गया है। वह पाप में मृतक नहीं है, वरन मसीह में जीवित है।

2- **इससे नया स्वभाव प्राप्त होता है।** यह मनुष्य को निष्पाप या पूर्ण नहीं बनाता; परन्तु इससे नवजीवन प्राप्त व्यक्ति में मसीह की सेवा करने की एक प्रवृत्ति, एक इच्छा उत्पन्न हो जाती है, जो पहले उसमें नहीं थी। पवित्र आत्मा की शक्ति द्वारा उसमें परमेश्वर की सेवा करने की क्षमता आ जाती है। विश्वासी को '' आत्मा के चलाए '' चलना होता है (गलातियों 5:6) इसका अर्थ यह है कि उसे पवित्र आत्मा की शक्ति में चलना होता है, जिसके द्वारा उसे नया जीवन प्राप्त हुआ।

3- **इससे एक नया अनुभव प्राप्त होता है।** वह व्यक्ति जो पाप में मर चुका था, और उसमें प्रार्थना, परमेश्वर का वचन पढ़ने और विश्वासियों की संगति में कोई रुचि नहीं थी, परन्तु अब यही बातें उसके जीवन का आवश्यक अंग बन जाती हैं। विश्वासी में आत्मिक सच्चाईयों को समझने की सम्भावना बढ़ जाती हैं (1 कुरि० 2:9-10) जो उस पर वही आत्मा स्पष्ट कर देता है, जिसके द्वारा उसे नया जीवन प्राप्त हुआ है।

नवजीवन प्रदान करने का कार्य केवल एक बार होने वाला कार्य है। इसको दोहराए जाने की कभी आवश्यकता ही नहीं होती है। जिस प्रकार कोई मानव परिवार में जन्म लेता है और रक्त -सम्बन्धी होने के कारण उस परिवार का सदा तक सदस्य बना रहता है, इसी प्रकार आत्मिक रीति से विश्वासी परमेश्वर के परिवार का अंग बन जाता है, और फिर उसे परिवार से कभी निकाला नहीं जाता (यूहन्ना 10:28-29)। नया जन्म इस विषय को अन्तिम रुप दे देता है।

अन्तर में पवित्र आत्मा का वास :

पवित्र आत्मा की विश्वासी के लिए जो सेवकाई है, उनमें यह आधारभूत कार्य है। जब मनुष्य को नवजीवन प्रदान किया जाता है, तो तत्काल ही उसके अन्दर पवित्र आत्मा वास करने लगता है। यह एक अन्य क्षणिक अर्थात् केवल एक ही बार होने वाला और फिर कभी न दोहराया जाने वाला परमेश्वर का कार्य है। प्रत्येक विश्वासी के अन्दर पवित्र आत्मा वास करता है, क्योंकि पवित्र आत्मा परमेश्वर का एक उपहार है जो परमेश्वर उस व्यक्ति को देता है जो यीशु मसीह को अपना व्यक्तिगत मुक्तिदाता स्वीकार करता है और यह उपहार उससे वापिस नहीं लिया जाता। यहॉ तक कि जो मसीही पाप में जीवन व्यतीत करता है, उसके अन्दर भी पवित्र आत्मा का वास होता है।

इस वास्तविकता को समझना कठिन है; इसको केवल विश्वास से स्वीकार किया जा सकता है। पवित्र शास्त्र से यह तथ्य स्पष्ट है कि किसी विश्वासी के विश्वास के कारण पवित्र आत्मा उसके अन्दर वास नहीं

Creation Autonomous Academy

करता या एक पवित्र जीवन व्यतीत करने की उसकी योग्यता के कारण या आत्मा की उपस्थिति के प्रति उसकी मान्यता के कारण भी पवित्र आत्मा उसके अन्दर वास नहीं करता है। पवित्र आत्मा परमेश्वर का एक उपहार है। कोई भी किसी उपहार को अर्जित नहीं करता या उपहार का अधिकारी नहीं होता है। जब कोई मसीह को स्वीकार कर लेता है, तो तत्काल ही पवित्र आत्मा, उस व्यक्ति की दशा की उपेक्षा करके उसके अन्तर में वास करने लगता है। इसका एक प्रमाण कुरिन्थियों के नाम लिखा गया पत्र है, जो मसीहियों को लिखा गया था। उनमें से बहुत से दुर्बल मसीही थे और कुछ भयानक पापपूर्ण जीवन व्यतीत कर रहे थे। फिर भी पौलुस उनसे कहता है, ‘‘तुम्हारा शरीर पवित्र आत्मा का मन्दिर है जो तुम्हारे अन्दर वास करता है’’ (1 कुरिन्थियों 6:19)

पवित्र आत्मा विश्वासी के अन्तर में निरन्तर उपस्थित रहने के लिए आता है। वह स्थाई रुप में निवास करने के लिए आता है। ऐसा विश्वास करना कि व्यक्ति के पाप करने पर पवित्र आत्मा उसे छोड़ देता है का अर्थ यह विश्वास करना होगा कि एक बार उद्धार -प्राप्त कर लेने के बाद भी मनुष्य बिना उद्धार प्राप्त मनुष्य बन सकता है। ऐसा सम्भव नहीं है। बाइबल की शिक्षा यह है कि जो मसीह को स्वीकार कर लेता है, वह अनन्त -काल तक सुरक्षित है (यूहन्ना 10:28-29)। एक बार जब अनन्त जीवन दे दिया जाता है तो परमेश्वर फिर उसे वापिस नहीं लेता। परमेश्वर कहता है कि यदि किसी के अन्दर पवित्र आत्मा वास नहीं करता है तो वह बिना उद्धार -प्राप्त मनुष्य है (रोमियों 8:9)। बाइबल में ऐसे उदाहरण है कि पवित्र आत्मा अस्थाई रुप में लोगों के अन्तर में वास नहीं करता था, परन्तु ये पिन्तेकुस्त से पहले के अनुभव थे, पुराने नियम के युग में पवित्र आत्मा आता जाता रहता था, क्योंकि उस काल में उसकी सेवकाई भिन्न थी। पिन्तेकुस्त से प्रत्येक विश्वासी को वह स्थाई रुप में दे दिया गया है। एक विश्वासी का अनन्त जीवन और अन्तर में पवित्र आत्मा की वास करने वाली उपस्थिति एक अविच्छेद्य सत्य है।

इसका अर्थ यह नहीं है कि विश्वासी को बिना परिणामों की चिन्ता किए पाप करते रहना चाहिए। रोमियों 6 में मसीहियों को याद दिलाया गया है कि उनको पाप से स्वतंत्र कर दिया गया है, और उनको फिर पाप में जीवन व्यतीत नहीं करना चाहिए। जब विश्वासी पाप करता है तो पवित्र आत्मा शोकित होता है। पाप पवित्र आत्मा के नियंत्रण कार्य में बाधा उत्पन्न कर देता है, परन्तु विश्वासी पवित्र आत्मा को अपने जीवन से बाहर नहीं धकेल सकता। समय -समय पर जानबूझकर या अनजाने पाप करते रहने से विश्वासी के जीवन में पवित्र आत्मा के उन महत्वपूर्ण कार्यों में बाधा उत्पन्न हो जाती है जो वह करना चाहता है। परमेश्वर की बिना शर्त प्रतिज्ञा है कि ‘‘ पवित्र आत्मा सदा तुम्हारे साथ रहेगा’’ (यूहन्ना 14:16)।

Creation Autonomous Academy

पवित्र आत्मा अन्तर में वास करता है ऐसे ज्ञान से निम्न लाभ प्राप्त होते हैं :

1- यह आश्वासन प्राप्त होता है कि हम परमेश्वर की सन्तान हैं (रोमियों 8:16; 1 यूहन्ना 3:23,24)। पवित्र आत्मा की उपस्थिति यह निश्चय दिलाती है कि हमारे पाप क्षमा कर दिए गए हैं, और हम सदा के लिए परमेश्वर के परिवार के सदस्य हैं।

2- इससे पवित्र जीवन व्यतीत करने की सम्भावना बढ़ती है (1 पतरस 2:1-5,9) यह पवित्र आत्मा की ही अन्तर में वास करने वाली शक्ति होती है जिससे विश्वासी को 1 पतरस 1:16 में दी गई परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने का बल प्राप्त होता है, ‘‘तुम पवित्र बनो’’।

3- इससे निश्चय होता है कि परमेश्वर बहुत अधिक आशिषें प्रदान करेगा (1 कुरिन्थियों 2:9)। पवित्र आत्मा एक प्रतिज्ञा है (‘‘ एक बयाना’’ इफिसियों 1:13-14) यह मसीह में हमारी मीरास है। इसकी उपस्थिति हमें आश्वासन देती है कि परमेश्वर अपनी सभी प्रतिज्ञाओं को पूरी करेगा।

उसकी सेवकाई - बपतिस्मा देना और छाप लगाना

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें :

अनेक मसीही पवित्र आत्मा की विभिन्न सेवकाईयों से चकरा जाते हैं, इसका कारण उनकी अपर्याप्त शिक्षा होती है, इनको पवित्र आत्मा के सम्बन्ध और अभिप्राय समझाए नहीं जाते। बाइबल की पवित्र आत्मा के विषय में सच्चाई उनके सन्मुख सही रुप में व्यक्त की जानी चाहिए।

पवित्र आत्मा की बपतिस्मा देने की सेवकाई :

यह क्या है :-

1- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा देने का कार्य पिन्तेकुस्त के काल से मसीह के दोबारा आगमन के काल तक ही है, हम इसी काल में रहते हैं। यीशु ने अपने शिष्यों से कहा था कि वे पवित्र आत्मा के आने की प्रतीक्षा करें।(प्रेरितों के काम 1:4, देखिए यूहन्ना 14:16) और उसका बपतिस्मा (प्रेरितों के काम 1:5)। पवित्र आत्मा पिन्तेकुस्त से पहले बपतिस्मा देने नहीं आ सकता था। इसका कारण पवित्र आत्मा के बपतिस्मे के अभिप्राय में स्पष्ट दिखाई देता है, जिससे विश्वासी मसीह में मिलकर एक हो जाता है और इस प्रकार कलीसिया का निर्माण होता है (1 कुरिन्थियों 12:12,13)। कलीसिया उन लोगों से मिल कर बनती है जो मसीह की मृत्यु को अपने प्रायश्चित के रुप में स्वीकार करते हैं। इसलिए जब कि कलीसिया मसीह की मृत्यु, पुर्नजीवित हो उठने और स्वर्ग पर चढ़ने से पहले स्थापित नहीं हो सकती थी, सो पवित्र आत्मा का बपतिस्मा

Creation Autonomous Academy

भी इन घटनाओं से पहले क्रियान्वित नहीं हो सकता था। पवित्र आत्मा को कलीसिया के साथ जोड़ा गया है (प्रेरितों के काम 2:47)।

जब कि पिन्तेकुस्त के दिन से आने के बाद पवित्र आत्मा विश्वासियों में स्थाई रुप से रहता है, इसलिए उसके आने को बार बार दोहराना आवश्यक नहीं है, जैसे कि मसीह का देहधारी होना बार-बार आवश्यक नहीं है। पवित्र आत्मा प्रत्येक विश्वासी के अन्तर में वास करता है और उसे मसीह में बपतिस्मा देता है। यह एक पूरा किया गया सत्य है।

2- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा सभी विश्वासियों के लिए है। पवित्र शास्त्र स्पष्टता से बताता है कि जो लोग विश्वास से मसीह के पास आते हैं वह उनको स्वीकार करता है। (“ जो मेरे पास आएगा, मै उसे कभी न निकालूंगा ” यूहन्ना 6:37)। जब कि पवित्र आत्मा का बपतिस्मा एक ऐसा कार्य है जो विश्वासी को मसीह में मिला देता है, तो यह उस प्रत्येक व्यक्ति के लिए किया जाता है जो उसे स्वीकार करता है, पवित्र आत्मा का बपतिस्मा कुछ चुने हुए लोगों को विशेष पवित्रीकरण प्रदान नहीं करता। यह अनुग्रह का कोई विशिष्ट कार्य नहीं है, जो कि परमेश्वर उद्धार करने के बाद सम्पन्न करता है। पवित्र आत्मा में बपतिस्मा उद्धार का एक अविच्छेद्य अंग है जिसका कोई बाहरी स्वरुप या विशिष्ट चिन्ह नहीं है, जिससे यह प्रगट हो जाए कि ऐसा हो गया है। पवित्र आत्मा के बपतिस्में का प्रमाण प्रतिदिन के परिवर्तित जीवन में मिलना चाहिए।

3- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा जब विश्वासी प्राप्त करता है तो उसे किसी प्रकार की चेतना या अनुभूति नहीं होती। बाइबल कहीं भी पवित्र आत्मा में मसीहियों को बपतिस्मा लेने की आज्ञा नहीं देती। इसमें हमारे लिए चुनने वाली जैसी कोई बात नहीं है, इसे हम अपनी इच्छानुसार लें या न लें वाली जैसी बात नहीं है। प्रत्येक विश्वासी जिस क्षण मसीह को अपना व्यक्तिगत मुक्तिदाता स्वीकार कर लेता, उसे पवित्र आत्मा का बपतिस्मा दे दिया जाता है, चाहे इसके फलस्वरुप वह अपने को भिन्न अनुभव करे या न करे।

4- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा एक बार होने वाला अनुभव है। किसी भी मनुष्य के लिए पवित्र आत्मा में दोबारा बपतिस्मा पाना असम्भव है। यदि ऐसा होता तो इसका अर्थ यह होता कि कोई भी मनुष्य मसीह के शरीर से पृथक हो सकता और फिर उसका अंग बन सकता है। पवित्र शास्त्र ऐसी सम्भावना का निषेध करता है। ‘‘हम सब ने एक ही आत्मा के द्वारा एक होने के लिए बपतिस्मा लिया परन्तु सचमुच परमेश्वर ने अंगों को अपनी इच्छानुसार एक-एक करके देह में रखा है’’ (1 कुरिन्थियों 12:13,18)। बपतिस्मा पवित्र आत्मा के नवजीवन प्रदान करने की सेवकाई और अन्तर में वास करने के कार्य के साथ ही सम्पन्न होता है। व्यक्ति तत्काल ही पापी से सन्त में परिणित हो जाता है। यह तत्कालिक और केवल एक बार होने वाला पवित्र आत्मा का कार्य है।

Creation Autonomous Academy

यह क्या करता है :-

1- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा प्रत्येक विश्वासी को मसीह की देह का एक अंग बना देता है, उसे एक नई स्थिति में लाकर रखता है; वह मसीह में है (2 कुरि० 5:17; गलातियों 3:26-27)। परमेश्वर की दृष्टि में, उसकी यह नई स्थिति, दोष और पाप की शक्ति से स्वतंत्र है। यही वह स्थिति है जिसके विषय में रोमियों 8:1 में बताया गया, जो प्रभु यीशु में है, उन पर दण्ड की आज्ञा नहीं क्योंकि वे शरीर के नहीं वरन आत्मा के अनुसार चलते है''। पवित्र आत्मा का बपतिस्मा विश्वासी को पाप में मृतक और परमेश्वर में जीवित बना देता है (रोमियों 6:1-4)

पानी का बपतिस्मा तो केवल पवित्र आत्मा के बपतिस्मे का प्रतीक मात्र है। यह मनुष्य द्वारा सम्पन्न किया जाता है जो कि मनुष्य का उद्धार नहीं करता; पवित्र आत्मा का बपतिस्मा ऐसा कार्य है जो उद्धार करने के लिए परमेश्वर सम्पन्न करता है। जल का बपतिस्मा एक बाहरी चिन्ह है, और वह पवित्र आत्मा के भीतरी बपतिस्मे का एक प्रतीक है।

2- पवित्र आत्मा का बपतिस्मा प्रत्येक विश्वासी को दूसरे विश्वासियों से मिला कर एक कर देता है (1 कुरि० 12:12-13)। मसीह की देह का प्रत्येक अंग महत्वपूर्ण है, और उसको देह में रहते हुए कोई काम अवश्य करना है। इफि० 4:16 में कहा गया है, ''सारी देह हर एक जोड़ की सहायता से एक साथ गठ कर एक बनती है'' ; प्रत्येक अंग दूसरे अंग पर निर्भर है, और सभी देह के सिर पर निर्भर हैं, जो मसीह है (कुलु० 1:18)।

एक चेतावनी :

पवित्र आत्मा का बपतिस्मा अपने आप ही पवित्र जीवन नहीं निश्चित कर देता। विश्वासी बहुधा पाप करता है क्योंकि उसका प्रतिदिन का अनुभव मसीह में अपनी उन्नत स्थिति के समान नहीं पहुॅच पाता। इफिसियों की पत्री हमें शिक्षा देती है कि ''विश्वासी जो मसीह यीशु में उठाए गए और स्वर्गीय स्थानों में उसके साथ बिठाए गए'' (इफि० 2:6) उनके लिए '' उसके योग्य चाल चलनी भी आवश्यक है''(इफि० 4:1)। फिर भी यह पवित्र आत्मा ही होता है जो विश्वासी के अन्दर वास करके उसे पवित्र जीवन व्यतीत करने की शक्ति देता है (1 कु० 6:9-11; गलातियों 5:16, 22-23)।

Creation Autonomous Academy

उसकी छाप लगाने वाली सेवकाई :

यह भी मुक्ति के अंग का एक अविच्छेद भाग है। यह पवित्र आत्मा का एक और कार्य है जो प्रत्येक विश्वासी के लिए है, किसी को छाप लगवाने या अपनी इच्छा के अनुसार चुनाव करने की आज्ञा नहीं दी गई है, **व्यक्ति जैसे ही मसीह को अपना व्यक्तिगत मुक्तिदाता स्वीकार करता है, उस पर छाप लगा दी जाती है।**

यद्यपि पवित्र आत्मा का छाप लगाने वाला कार्य, नवजीवन प्रदान करना, अन्तर में वास करना और बपतिस्मा देने के कार्य के साथ ही सम्पन्न होता है, पर यह उनसे एक कदम आगे बढ़ जाता है। **पवित्र आत्मा की उपस्थिति इस बात का चिन्ह है कि विश्वासी परमेश्वर की सम्पत्ति है।** अन्तर में पवित्र आत्मा का वास यह प्रगट करता है कि विश्वासी परमेश्वर का है, और उसे परमेश्वर ने ‘‘मुल्य देकर खरीदा है’’ (1 कुरि० 6:20)। प्रत्येक मसीही परमेश्वर की सम्पत्ति है चाहे उसे परमेश्वर के स्वामित्व का अपने दिन प्रतिदिन के आचार-व्यवहार में इसका ज्ञान हो या न हो, पवित्र आत्मा की छाप मुक्ति का आश्वासन है जिससे किसी को यह सन्देह करने की आवश्यकता नहीं है कि उसका उद्धार किया जा चुका है।

पवित्र आत्मा की छाप यह निश्चय दिलाती है कि विश्वासी के लिए परमेश्वर ने प्रतिज्ञाएं की हैं, वह उनको पूरी करेगा। उद्धार इस समय केवल कहानी का एक भाग है, अभी और अधिक शेष है। कोई मनुष्य उन बातों की कल्पना तक नहीं कर सकता, ‘‘जो परमेश्वर ने उनके लिए तैयार की है जो उससे प्रेम रखते हैं’’ (1 कुरि० 2:9)। परमेश्वर केवल पाप से ही नहीं छुड़ाता, वह विश्वासी को आश्चर्यजनक अनन्तकाल के लिए सुरक्षित रखता है। पवित्र आत्मा भविष्य में होने वाली बातों का बयाना है (2 कुरि० 1:22; इफिसियों 1:13,14)।

पवित्र आत्मा ही छाप लगाने का कार्य करता है, और वह स्वयं छाप है। विश्वासी पर, ‘‘छुटकारे के दिन तक के लिए छाप लगाई गई है’’ (इफि० 4:30) जब कि वह सदा के लिए परमेश्वर की उपस्थिति में रहेगा।

उसकी सेवकाई - परिपूर्ण करना

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें :

पवित्र आत्मा की जिस शिक्षा के विषय में बहुत भ्रान्ति पाई जाती है यह है पवित्र आत्मा में परिपूर्ण होना। इस भ्रान्ति का आंशिक कारण यह है कि पवित्र आत्मा के दूसरे कार्यों -नवजीवन प्रदान करना,अन्तर में वास करना, बपतिस्मा और छाप लगाने के विषय में गलतफहती है, ये सब व्यक्ति के उद्धार से सम्बन्धित हैं। ये प्रत्येक विश्वासी के लिए पवित्र आत्मा की सेवकाई है, और जिस क्षण वह मसीह को अपना व्यक्तिगत मुक्तिदाता स्वीकार कर लेता है और उसे नया जन्म प्राप्त हो जाता है तो वह मसीह में नई सृष्टि होता है। ये सभी कार्य हृदय परिवर्तन पर तत्काल एक साथ होते हैं। इनको अनुभव नहीं किया जाता, परन्तु विश्वास द्वारा स्वीकार करना होता है, ये आत्मा के एक ही बार होने वाले कार्य हैं और इनको दोहराना कभी आवश्यक नहीं होता। परन्तु पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होना यह दूसरे कार्यों से भिन्न है। यह उद्धार के बाद होता है और इसका सम्बन्ध व्यक्ति के मसीही अनुभव से है।

यह क्या है :

यह नियन्त्रण है। मसीही को बताया जाता है कि वह पाप में मरा हुआ है, उसे धार्मिकता का जीवन व्यतीत करना चाहिए (1 पतरस 2:24)। ऐसा जीवन पवित्र आत्मा की सहायता से ही व्यतीत करना सम्भव है जो उसके अन्तर में वास करता है। पवित्र आत्मा का अन्तर में वास और पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होने में अन्तर है। जब मनुष्य मसीह को अपना मुक्ति दाता स्वीकार कर लेता है तो पवित्र आत्मा का समस्त व्यक्ति उसके अन्तर में वास करने लगता है। पवित्र आत्मा मनुष्य के अन्दर में आंशिक या अपूर्ण रुप में नहीं आ सकता क्योंकि वह एक व्यक्ति होने के कारण ऐसा नहीं कर सकता। इसलिए पवित्र आत्मा में भर जाने का अर्थ यह नहीं है कि विश्वासी को पवित्र आत्मा का अधिक भाग मिलता है। परन्तु पवित्र आत्मा विश्वासी को अधिक नियन्त्रण में ले लेता है। परिपूर्ण होना, अन्तर में वास करने से पहले नहीं हो सकता, जब तक मनुष्य के अन्तर में पवित्र आत्मा का वास नहीं होता, यह उससे परिपूर्ण नहीं हो सकता। परन्तु अनेक मसीही जिनमें पवित्र आत्मा का वास होता है, यह नहीं जानते कि उससे परिपूर्ण हो जाना उनको पवित्र जीवन व्यतीत करने की शक्ति देता है।

पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होना केवल एक ही बार होने वाला अनुभव नहीं हैं, यह बार बार दोहराया जा सकता है और दोहराया जाना चाहिए। इफि० 5:18 एक आज्ञा है जो प्रत्येक विश्वासी के लिए है, ''आत्मा से परिपूर्ण होते जाओ''। याद रखिए, मसीही को नवजीवन प्रदान करना, अन्तर में वास करना, बपतिस्मे या छाप लगवाने की आज्ञा कभी नहीं दी गई, क्योंकि यह कार्य नए जन्म के अवसर पर परमेश्वर सम्पन्न करता है। विश्वासी इनके प्रति जिम्मेदार नहीं है। परन्तु उसे आत्मा से परिपूर्ण होने की आज्ञा दी गई है।

पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होना एक ''दूसरी आशीष'' नहीं है, या ''अनुग्रह का दूसरा काम'' नहीं है,वरन यह पवित्र आत्मा द्वारा दी जाने वाली एक शक्ति है, जो विश्वासी का परमेश्वर की इच्छा के अनुरुप जीवन व्यतीत करना सम्भव बना देता है, उसको पवित्र जीवन परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारी जीवन व्यतीत करने की शक्ति प्राप्त होती है। परिपूर्ण होते जाने की आज्ञा का दोहरा कारण है। प्रथम, पाप निरन्तर पवित्र आत्मा का नियन्त्रण समाप्त करने का प्रयत्न करता है। उसकी शक्ति उस दुष्ट पर विजय प्राप्त करने लिए आवश्यक होती है जो परमेश्वर के सिंहासन के सन्मुख दिन - रात विश्वासियों पर दोष लगाता रहता है (प्रकाश० 12:10)। दूसरा, पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होने की विश्वासी को आवश्यकता तब होती है, जब परमेश्वर की सेवा करने का नया अवसर उसके सामने आता है और कोई नई समस्या आ खड़ी होती है, जिसके लिए बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है (याकूब 1:5)।

Creation Autonomous Academy

इसको कैसे प्राप्त किया जा सकता है :

1-परमेश्वर की आज्ञापालन द्वाराः जब कि पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होने में पवित्र आत्मा का नियन्त्रण निहित है, तो स्पष्ट है कि व्यक्ति को परमेश्वर की आधीनता स्वीकार करके उसका नियन्त्रण स्वीकार कर लेना चाहिए। इसके लिए परमेश्वर के आगे गिड़गिड़ना और विनती करना आवश्यक नहीं है। केवल इसे स्वीकार करना होता है। जैसा कि परमेश्वर के वचन से स्पष्ट है परमेश्वर की इच्छा की आज्ञापालन से मनुष्य पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होता है।

2- जान बूझ कर पाप विमुख होने के द्वाराः विश्वासी के जीवन में से पाप के कारण पवित्र आत्मा को धकेल कर बाहर नहीं निकाला जा सकता, परन्तु निश्चय ही पाप उसके नियन्त्रण को खण्डित कर देता है। विश्वसियों का पाप पवित्र आत्मा को शोकित अवश्य करता है (इफि० 4:30)। 1 यूहन्ना 1:9 विश्वासियों के लिए लिखा गया : ''यदि हम अपने पापों को मान लें, तो वह हमारें पापों को क्षमा करने, और हमें सब अधर्म से शुद्ध करने में विश्वास योग्य और धर्मी है'' जब ऐसा अंगीकार किया जाता है तो पवित्र आत्मा का नियन्त्रण फिर स्थापित हो जाता है।

3- पवित्र आत्मा के प्रतिदिन के मार्गदर्शन पर निर्भर रहने के द्वाराः केवल पवित्र आत्मा के नियन्त्रण द्वारा ही विश्वासी परमेश्वर की दूसरी आज्ञाओं का पालन कर सकता है। आत्मा को बुझा देने या शोकित करने के द्वारा यह सम्भव नहीं है, ''सदा आनन्दित रहो . . . और हर एक बात में धन्यवाद करो,'' (1 थिस्स० 5:13,18)। पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होने में अनेक आश्चर्यजनक वरदान सम्मिलित हैं। वह सत्य की ओर अग्रसर करता है (यूहन्ना 16:13); ''वह पवित्र लोगों के लिए परमेश्वर की इच्छानुसार प्रार्थना करता है'' (रोमियों 8:27)।; ''वह परमेश्वर की गूढ़ बातें प्रगट करता है'' (1 कुरि० 2:20); वह यह दान देता है कि विश्वसी आत्मा से अपने भीतरी मनुष्यत्व में सामर्थ्य पाकर बलवन्त होता जाता है'' (इफि० 3:16)।

उसको प्रमाणित कैसे किया जाता है :

Creation Autonomous Academy

1- मसीही जीवन द्वाराः पवित्र आत्मा से परिपूर्ण जीवन का वर्णन गलातियों 5:22,23 में पाया जाता है। जिस व्यक्ति पर परमेश्वर के पवित्र आत्मा का नियन्त्रण होता है, वह इस नियंत्रण को अपने प्रतिदिन के जीवन को प्रेम , आनन्द, मेल, धीरज, कृपा, भलाई, विश्वास, नम्रता और संयम द्वारा प्रगट करता है। जब किसी व्यक्ति में इन सद्गुणों की वृद्धि होती जाती है, तो यह एक स्पष्ट प्रमाण होता है कि वह पवित्र आत्मा से परिपूर्ण है, ये गुण जिनको फल के रुप में व्यक्त किया गया है, फल के ही समान बढ़ने चाहिए - भीतर से बाहर की ओर। यह क्रिसमस ट्री पर उपहारों के समान बाँधे नहीं जा सकते हैं।

2- मसीही मनोंवृत्ति प्रदर्शित करने के द्वारा : पवित्र शास्त्र पवित्र आत्मा द्वारा परिपूर्ण होने के फल की प्रशंसा करता है (इफि० 5:19)''सभी कुछ में'' धन्यवादी बना रहना उस व्यक्ति के लिए असम्भव है जिस पर पवित्र आत्मा का नियंत्रण नहीं है।

उसकी सेवकाई

आत्मिक वरदान देना

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें:

पवित्र आत्मा द्वारा आत्मिक वरदान देने की उसकी सेवकाई व्यापक है, परन्तु वे लोग भ्रान्ति में पड़े हुए हैं जो इस सेवकाई को केवल दो वरदानों में विभक्त कर देते हैं और तब बहुधा यह एक विवाद का विषय बन जाता है - ये हैं भाषाएं बोलना और चंगाई का काम करना। वास्तविकता यह है कि पवित्र आत्मा के दूसरे अनेक वरदान हैं जो अधिक स्थाई और महत्वपूर्ण हैं।

पवित्र आत्मा ही आत्मिक वरदानों का वितरण करता है। (1 कुरि० 12:7-11) ये वरदान योग्यताएं हैं, जिनको विश्वासियों की, कलीसिया की उन्नति के लिए सुदृढ़ और विकसित करनें में प्रयोग करना चाहिए। इसलिए पवित्र शास्त्र व्यक्तिगत रुप में मसीहियों की शरीर के अंगो से तुलना करता है, जिसमें प्रत्येक अंग अपना कार्य करता है - अपने वरदान का प्रयोग करता है - जिससे सबकी उन्नति होती है।

वरदानों की विशिष्टताएं:

1- प्रत्येक वरदान परमेश्वर की सर्वश्रेष्ठ इच्छा के अनुसार कम या अधिक मात्रा में जिसे वह चाहता है, दिया जाता है। 1 कुरि० 12:11 स्पष्ट कर देता है कि आत्मा ''जिसको चाहता है'', यह वरदान देता है।

2- दूसरों के साथ मसीही सम्बन्ध स्थापित करने के द्वारा: पवित्र आत्मा से परिपूर्ण विश्वासी में दूसरों के साथ विनम्र सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता होती है। वह व्यक्ति जो असंयमी होता है उस पर वास्तव में शैतान का नियंत्रण होता है। मनुष्य केवल आत्मा द्वारा कैसे सम्बन्ध दूसरों के साथ स्थापित कर सकता है, जिनका वर्णन इफि० 5:21-6:9 में किया गया है।

Creation Autonomous Academy

3- मसीही सेवकाई द्वारा: जैसा कि इफि० 2:8-9 से स्पष्ट है, उद्धार अपने भले कामों द्वारा अर्जित नहीं किया जा सकता, परन्तु भले काम उद्धार के फल होते हैं (इफि० 2:10)। वह विश्वासी जो पवित्र आत्मा में परिपूर्ण है, वह यूहन्ना 7:38-39 में कहे गए यीशु के शब्दों की पूर्ति करता है, ''उसमें जीवन-जल की नदियाँ बहेंगी, और वह जल दूसरों तक पहुँचेगा''।

ऐसा परिपूर्ण होना अस्वभाविक है, यह मानवीय पाप पूर्ण स्वभाव के विपरीत है। सम्भवतः इसके लिए यह कहना उचित होगा कि ऐसा नियंत्रण आलौकिक है, यद्यपि परमेश्वर इसकी यह परिभाषा करता है कि यह

विश्वासी का मसीह में सामान्य अनुभव होता है। परमेश्वर का स्तर उन लोगों के लिए जो उद्धार के लिए उसके पास आते हैं, यह है कि उनका अनुभव मसीह में अपनी स्थिति के अनुरुप होना चाहिए, और केवल पवित्र आत्मा द्वारा परिपूर्ण होकर ऐसा होना सम्भव है।

शारीरिक विकास धीरे -धीरे है, जिसमें समय लग जाता है। ऐसा आत्मिक विकास के लिए पूर्णतया सच नहीं होता है क्योंकि यह विश्वासी पर निर्भर होता है कि वह अपने को कितना पवित्र आत्मा से परिपूर्ण होने देता है, एक नए, अनुभवहीन मसीह के लिए जो अपने जीवन में सांमजस्य करते हुए अपने को अर्पित कर देता है, एक पुराने मसीही से जो वर्षो से मसीही है, अधिक परिपक्व होना सम्भव है। निसन्देह परिपक्वता के लिए कुछ गुणों की आवश्यकता होती है, इसलिए पवित्र शास्त्र हमें चेतावनी देता है कि कलीसिया में नवदीक्षित को नेतृत्व नहीं दिया जाना चाहिए (1 तीमु० 3:6)।

2- प्रत्येक मसीही को एक या अधिक वरदान प्राप्त होता है। प्रत्येक में उस कार्य को सम्पन्न करने की क्षमता है जो मसीह के शरीर के अंग के रुप में उसे करने होते हैं (इफि० 4:7)। परमेश्वर अपने लोगों से उन कामों की मांग नहीं करता जो वे करने के योग्य नहीं होते वह जो कार्य उनको सौंपता है, उनको उसको करने की शक्ति भी प्रदान करता है।

3- सभी वरदानों का महत्व समान नहीं है, क्योंकि कुछ का महत्व दूसरों से अधिक है। 1 कुरि० 12:28 आत्मा के विभिन्न वरदानों को एक -दो तीन के क्रम में प्रस्तुत करता है।

4- प्रत्येक मसीही को सभी वरदान प्राप्त नहीं होते हैं (1 कुरि० 12:8-10)।

5- प्रत्येक वरदान को प्रेम से, परमेश्वर की महिमा के लिए प्रयोग किया जाना चाहिए, और उससे अपनी प्रशंसा नहीं,वरन विश्वासियों को प्रोत्साहन मिलना चाहिए (1 कुरि० 13)

6- कुछ वरदान स्थाई होते हैं और विशेष आवश्यकता या विशेष अवसर पर दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए, पौलुस रोमियों को चंगा करने में समर्थ था (प्रेरितों 14:8-10) प्रगट है कि यह उसके लिए परमेश्वर की पुकार का एक प्रमाण था। बाद में उसने इस वरदान का आवश्यकता में पड़े हुए लोगों के लिए प्रयोग नहीं किया (फिलि० 2:27; 2 तीमु० 4:20) कुछ वरदान अस्थाई रुप में सुसमाचार के संदेश की पुष्टि तथा स्थापना के उद्देश्य से दिए गए थे।

Creation Autonomous Academy

अस्थाई वरदानः

पुराने नियम में ऐसे बहुत से प्रमाण हैं, जिनमें परमेश्वर ने आश्चर्यजनक रुप में कार्य करके अपने अभिप्राय सम्पन्न किए। सम्भवतः इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण आश्चर्यकर्म परमेश्वर ने मिस्र में सम्पन्न किए। परमेश्वर ने भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा भी आश्चर्यजनक कार्य सम्पन्न किए जिसका उदाहरण दूसरे राजा के 4 अध्याय में पाया जाता है। जब प्रभु यीशु मसीह इस पृथ्वी पर था, तो उसने जो आश्चर्यकर्म किए वे आश्चर्य चकित करने के लिए नहीं वरन अपने दावो को प्रमाणित करने के लिए किए,कि वह परमेश्वर है।

(मत्ती 12:28; मरकुस 2:3-12) पतरस, यूहन्ना, पौलुस तथा दूसरों को जो आश्चर्यकर्म सम्पन्न करने का वरदान दिए गए, उसका एक कारण यह भी था कि मसीह में उद्धार से सम्बन्धित किए जाने वाला उनका प्रचार सत्य प्रमाणित हो जाए। इब्रा० 2:1-4 से यह संकेत मिलता है कि ये आश्चर्यकर्म विश्वासियों की दूसरी पीढ़ी सम्पन्न नहीं कर सकती थी। प्रारम्भिक कलीसिया को ऐसे आश्चर्यजनक चिन्हों की एक प्रमाण के रुप में अविश्वासियों के लिए आवश्यकता थी ताकि वे सुसमाचार के सत्य पर विश्वास कर सके। जब कलीसिया स्थापित हो गई और नया नियम लिखा जाना पूरा हो गया, तो आश्चर्यकर्मों की आवश्यकता नहीं रही। अब सुसमाचार का प्रमाण पवित्र शास्त्र में विद्यमान है, और वे लोग भी इस वास्तविकता का प्रमाण थे। जिनका हृदय पवित्र आत्मा की परिवर्तन करने वाली शक्ति ने बदल दिया था।

ऐसे अनेक अस्थाई वरदान हैं,जिन पर वाद -विवाद चलता रहता है। कुछ लोग अपने ज्ञान को इसका आधार मानते हैं, या दूसरों के अनुभवों को आधार बना लेते हैं। इस विषय में केवल बाइबल का दृष्टिकोण अन्तिम और अधिकृत है।

एक अधिक सुस्पष्ट अस्थाई वरदान प्रेरिताई है। यह तब अधिक सुस्पष्ट होता है कि हम याद करते हैं कि प्रेरित की एक योग्यता यह मानी गई थी कि वह व्यक्ति मसीह के साथ रहा है, उसने मसीह को देखा है, और उसके पुनरुत्थान के बाद भी उसे देखा है। (प्रेरितों के काम 1:22) स्पष्ट है ऐसा उन लोगों में ही हो सकता था, जो उस समय जीवित थे। यहाँ तक कि इन योग्यताओं के उपरान्त भी सभी प्रेरित नहीं बने। पौलुस को विशेष प्रेरिताई सीधे ही जीवित मसीह के दर्शन द्वारा प्रदान की गई, (प्रेरितों के काम 9:1; 1 कुरि० 9:)।

भविष्यवाणी का वरदान एक अन्य अस्थाई उपहार है जो प्रारंभिक काल की उन छोटी-छोटी कलीसियाओं को प्राप्त था। अगबुस इसका एक असाधारण उदाहरण है (प्रेरितो ं के काम 11:27-28, 21:10-11) प्रेरितों के युग में भविष्यवाणी की आवश्यकता इसलिए थी कि पुराने और नए नियम के बीच की खाई को परमेश्वर के स्पष्ट तथा अधिकारपूर्ण शब्द के द्वारा पाटा जा सके । उस युग में कलीसिया में अनेक प्रकार के भ्रष्टाचार व्याप्त होंगे जब कि वचन की अधिकाँश शिक्षा मौखिक रूप में दी जाती थी । नया नियम लिख लिये जाने के बाद भविष्यवाणी की आवश्यकता बन्द हो गई। आज परमेश्वर हमें नए प्रकाशन नहीं दे रहा है। उसने ''अन्तिम दिनों में हमसे अपने पुत्र के द्वारा बात चीत की''। (इब्रा० 1:2) प्रकाशितवाक्य की पुस्तक गम्भीर चेतावनी देती है कि इस संदेश की पुस्तक में न कुछ जोड़ें और न घटाएं-यह चेतावनी समस्त पुस्तक के लिए है। कोई भी कल्पित प्रकाशित वाक्य जो इस युग में दिया जाता है, वह परमेश्वर की ओर से नहीं है, परन्तु उसकी ओर से है जिसको पवित्र शास्त्र ''झूठ वरन झूठों का पिता कहता है (यूहन्ना 8:44)।

Creation Autonomous Academy

आज के युग में मनुष्यों को आश्चर्यकर्मो का वरदान नहीं दिया जाता है, यद्यपि परमेश्वर मनुष्यों की प्रार्थना के उत्तर में चंगाई का काम करता है (याकूब 5:15) जब चंगाई का कार्य सम्पन्न होता है, तो इसको करने वाला परमेश्वर होता है, मनुष्य नहीं, और उसी की महीमा की जानी चाहिए।

भाषाओं का वरदान पिन्तेकुस्त का ही एक निश्चित भाग था, यह एक प्रमाण था कि विश्वासियों पर पवित्र आत्मा आने वाला है। अब प्रश्न यह है कि यह अस्थाई वरदान है या नहीं, क्योंकि आज बहुत से लोग इसको प्राप्त करने का दावा करते हैं। प्रेरितों के काम अध्याय दो में पवित्र शास्त्र स्पष्ट शब्दों में बताता है कि प्रेरित विभिन्न भाषाएं बोल रहे थे। यह अनुभव प्रेरितों के काम 10:44-46 और 19:6 में भी दोहराया गया। दूसरे नए नियम की पुस्तकों में भाषाओं को वरदान बताया गया है (1 कुरि० 12:10 ; 28:30 ;14:1-40)। प्रेरितों के काम 10 वें अध्याय में जो विवरण है, वह एक विशेष अवसर का संकेत देता है, जिसमें परमेश्वर अन्य जातियों को कलीसिया में सम्मिलित कर रहा था। प्रेरितों के काम 19:6 में एक दूसरा विशेष मामला था। पवित्र शास्त्र के अनुसार अन्य भाषाएं बोलने का वरदान, एक ऐसी भाषा बोलने की योग्यता प्रदान करता था, जो उसकी भाषा नहीं होती थी और इसका अभिप्राय यह होता था कि इस भाषा का जानने वाला सुसमाचार का संदेश सुन सके। आज यही जाँच लागू की जानी चाहिए। क्या आज जो लोग अन्य भाषाएं बोलने, का दावा करते हैं, वे कोई ऐसी भाषा बोलते हैं जो किसी दूसरे सुनने वाले के लाभ के लिए होती है ? साधारणतया ऐसा नहीं होती है, वे लोग जो इस वरदान प्राप्त होने का दावा करते हैं, कोई ऐसी भाषा नहीं बोलते हैं।

यह दावा कि अन्य भाषाएं बोलने वाला पवित्र आत्मा के बपतिस्मे का प्रमाण है, पवित्र शास्त्र पर आधारित नहीं है। बाइबल यह सिखाती है कि प्रत्येक विश्वसी, विश्वास करते ही पवित्र आत्मा का बपतिस्मा प्राप्त करता है। पवित्र आत्मा का बपतिस्मा किसी का पुण्यफल नहीं है। जब कि प्रत्येक विश्वासी को मसीह में बपतिस्मा मिलता है और प्रत्येक विश्वासी अन्य भाषाएं नहीं बोलता है, इसलिए यह पवित्र आत्मा के बपतिस्मे का प्रमाण नहीं है।

न ही अन्य भाषाएं बोलना पवित्र आत्मा से परिपूर्ण जीवन का पवित्र शास्त्र के अनुसार प्रमाण है। (इफि० 5:18) अफसोस की बात है कि नए नियम के युग की एक कलीसिया जो अन्य भाषाएं बोलने का दावा करती थी, अत्यधिक सांसारिक थी (देखिए 1 कुरि० 1:10-11; 3:1-14 ; 6:5-8 ; 11:18)।

स्थाई वरदानः

Creation Autonomous Academy

सम्भवतः, मसीहियों द्वारा इन वरदानों को अधिक महत्व न दिए जाने का करण है कि ये उन अस्थाई वरदानों की अपेक्षा कम भव्य होते हैं जिनकी किसी विशेष समय और अभिप्राय के लिए ही आवश्यकता होती थी।

स्थाई वदान आज भी उतने ही प्रभावशाली हैं जितने उस युग में थे, जब कि पवित्र आत्मा द्वारा प्रारम्भिक कलीसिया को दिए जाने के समय थे। वे चिन्ह नहीं होते, वरन पूर्ण वरदान होते हैं।

सुसमाचार प्रचार का कार्य एक वरदान है जो पवित्र आत्मा द्वारा सुसमाचार को स्पष्ट तथा प्रभावशाली रुप में प्रचार करने के लिए प्रदान किया जाता है (इफि० 4:11)। यह सच है कि प्रत्येक मसीही को जिम्मेदारी और विशेषाधिकार प्राप्त है कि वह मसीह पर अपने विश्वास में दूसरों को भी सहभागी बनाए।

परन्तु सुसमाचार प्रचार का वरदान बहुत कम लोगों को दिया है, यह पवित्र आत्मा का वरदान है। इसका प्रमाण यह है कि बहुधा प्रचारक और उसके संदेश को सामान्य से कहीं अधिक आशीष प्राप्त होती।

शिक्षा देना एक अन्य स्थाई वरदान है, यह परमेश्वर द्वारा दी गई योग्यता है जिससे सत्य को स्पष्टता से प्रकट किया जा सके, रोमि० 12:7 ; इफि० 4:11 ।

पुरोहिताई सेवकाई एक अन्य स्थाई वरदान है, जिसमें शिक्षा देना भी सम्मिलित है (इफि० 4:11)। इसको चरवाहे की संज्ञा दी जाती है जो अपने झुण्ड की रखवाली करता है (प्रेरितों के काम 20:28 ; 1 पतरस 5:2)।

नेतृत्व, उपदेश, दया भाव प्रगट करना, दान देना, विश्वास करना (रोमियों 12:8 ; 1 कुरि० 12:8-10) ऐसी योग्यताएं हैं जो पवित्र आत्मा के द्वारा प्रदान की जाती हैं। हो सकता है कि कोई व्यक्ति यह न समझ पाए कि उसको कोई विशेष वरदान प्राप्त है, परन्तु उसके अन्दर **दूसरों कि सहायता प्रदान करने** का वरदान विद्यमान हो सकता है (1 कुरि० 12:28)।

परमेश्वर अपनी सन्तान से केवल इतना ही चाहता है कि वह सत्यनिष्ठा से उन वरदानों का प्रयोग करे, जो उसे प्रदान किए गए हैं।

उसकी सेवकाई - वर्तमान और भविष्य में

आपके अध्ययन के लिए कुछ बातें:

इस वर्तमान युग में पवित्र आत्मा की सेवकाई में से एक कार्य **बुराई को रोकना** भी है। वह आँशिक रुप में इस कार्य को मसीही के अन्दर अपनी उपस्थिति द्वारा सम्पन्न करता है। दूसरे शब्दों में इसको मत्ती 5:13 में कहे गए यीशु के शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है, जहां वह विश्वासियों की तुलना नमक से करता है, जिसके प्रभाव को अनुभव किया जा सकता है। विश्वासी को ज्योति भी होना है, जिसे मनुष्य देख सकें और इसके फलस्वरुप वे ‘‘तुम्हारे पिता की जो स्वर्ग में है, महिमा करें ’’(मत्ती 5:16)।

परमेश्वर की दूसरी आज्ञाओं,‘‘ अभक्ति और सांसारिक अभिलाषाओं से मन फेर कर संयम और धर्म भक्ति’’ (तीतुस 2:12) से जीवन व्यतीत करना सम्भव न होता, यदि पवित्र आत्मा विश्वासी के अन्तर में वास न करता। प्रत्येक विश्वासी परमेश्वर की वयस्क सन्तान है, और परमेश्वर का आत्मा जो उसके अन्तर में वास करता है, उसको नियंत्रित करता है (गलातियों 4:6-7)। मसीह के योग्य चाल चलना, पवित्र आत्मा में चलना,पवित्र आत्मा के नेतृत्व में चलना -पवित्र आत्मा के ही कार्य हैं जो वह अन्तर में वास करते हुए सम्पन्न करता है और जिसके फल स्वरुप वे फल उत्पन्न होते हैं जिनका विवरण गलातियों 5:22-23 में दिया गया है।

Creation Autonomous Academy

जिस विश्वासी को पवित्र आत्मा इस संसार में बुराई को रोकने में प्रयोग करता है, उसे आत्मा को शोकित करने के प्रति चौकस रहना चाहिए। पवित्र शास्त्र केवल एक ही बात के विषय में बताता है जिससे पवित्र आत्मा शोकित होता है और वह है विश्वासी के जीवन में पाप, और यदि जीवन पापपूर्ण है तो उसका बुराई रोकने में प्रयोग नहीं किया जा सकता है। जब पाप के कारण आत्मा शोकित होता है, तो वह विश्वासी के अन्दर से निकल नहीं जाता, परन्तु उसके नेतृत्व और नियंत्रण में बाधा उत्पन्न हो जाती है। जीवन का वह स्रोत जिसके द्वारा मनुष्य परमेश्वर के साथ बंधा होता है, उसको कभी नहीं तोड़ा जा सकता। परन्तु पाप के कारण मसीही की परमेश्वर से संगति का बंधन टूट जाता है।

पवित्र शास्त्र निष्पाप पूर्णता की शिक्षा नहीं देता। रोमियों 7 अध्याय विश्वासी के अपने पुराने पापपूर्ण स्वभाव के साथ संघर्ष का चित्र प्रस्तुत करता है। पहला यूहन्ना उन कदमों की रुपरेखा प्रस्तुत करता है, जिनके द्वारा विश्वासी को क्षमा प्रदान की जाती है, जब कि वह अपने पापों का अंगीकार करके परमेश्वर के पास आता है।

मसीही विश्वासी को आत्मा को बुझाने के प्रति भी सतर्क रहना चाहिए। यहां पवित्र आत्मा को शोकित करने वाले किसी विशेष पाप का उल्लेख नहीं किया गया है। पवित्र आत्मा तब शोकित होता है जब विश्वासी परमेश्वर की इच्छा पूरी नहीं करता जो उस पर वह प्रकट कर देता है। फिर भी पवित्र आत्मा विश्वासी द्वारा बुझाने पर भी उससे पृथक नहीं होता, परन्तु इससे उसके प्रभावशाली रुप में काम करने में बाधा पड़ जाती है।

रोमियों 23:1-2 इस विषय में बताता है। विश्वासी के लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि वह परमेश्वर के आधीन हो जाए यह समर्पण व्यक्ति का स्वैच्छिक कार्य है, यह वह अपनी स्वेच्छा से करता है। तब उसे ''बदलना'' होता है। यह पवित्र आत्मा का कार्य है, और यह निरन्तर की जाने वाली क्रिया है। यह उस दिन तक कभी पूरी नहीं होती जब, ''हम भी उसके समान होंगे, क्योंकि उसको वैसा की देखेगे, जैसा वह है'' (1 यूहन्ना 3:2)।

विपत्ति काल में पवित्र आत्मा का कार्यः

Creation Autonomous Academy

पवित्र आत्मा वर्तमान युग में इस प्रकार करता है, जैसा कि उसने पुराने नियम के युग में नहीं किया। अब वह प्रत्येक विश्वासी के अन्दर में वास करता है और वह कलीसिया का निर्माण कर रहा है जो मसीह की देह है। जब यह उद्देश्य पूरा हो जाएगा, कलीसिया, सभी विश्वासी पृथ्वी पर विपत्ति -काल के आने से पहले ही हटा लिए जाएँगे। तब पवित्र आत्मा की उपस्थिति भी, जैसी कि वर्तमान युग में प्रगट है, हटा ली जायेगी। परन्तु वह उसी रुप में अपना कार्य करता रहेगा, जैसा कि पुराने नियम के युग में करता था।

पवित्र शास्त्र बताता है कि विपत्ति काल में लागों के हृदय परिवर्तित हो जाएँगे। विपत्ति काल के आरम्भ में 1,44,000 यहूदियों का एक समूह उद्धार प्राप्त करके विद्यमान रहेगा (प्रका० 7:4)। इसके मध्य काल में, ''हर एक जाति, और कुल और लोग और भाषा बोलने वालों की भारी भीड़'', मसीह के पास

आएगी। (प्रका० 7:9) और विपत्ति काल के अन्त में जीवित बचे इस्राएली उद्धार पाएंगें (रोमियों 11:25-26; जकर्याह 13:1)।

जब कि दोषी ठहराने और नव जीवन प्रदान करने का कार्य अब पवित्र आत्मा कर रहा है, तो अनुमान लगाया जा सकता है कि यह कार्य उस समय भी होगा जब कि महान आत्मिक अन्धकार व्याप्त होगा। यद्यपि पवित्र शास्त्र विपत्ति काल में पवित्र आत्मा के कार्य के विषय में विशेष रुप में बहुत कम बताता है, हमें पवित्र शास्त्र के इस कथन का निश्चय होना चाहिए कि वह उस समय विश्वासियों की सहायता करेगा और उनको साक्षी देने की शक्ति देगा। योएल 2अध्याय में दिया गया विवरण विपत्ति काल पर लागू होता है, क्योंकि जब पतरस ने प्रेरितों के काम के दूसरे अध्याय में इसका उल्लेख किया था तो वह केवल आँशिक रुप में ही पूरा हुआ था।

पवित्र आत्मा का विश्वासियों को बपतिस्मा देने का कार्य विपत्ति काल में सम्पन्न नहीं होगा, कलीसिया उस काल तक पूरी बन चूकी होगी, और विपत्ति काल के आरम्भ से पहले ही उठा ली जा चुकी होगी।

उत्पत्ति 6:5 में जल प्रलय से पहले मानव की दशा व्यक्त की गई है - उनके मन में जो कुछ उत्पन्न होता है सो निरन्तर बुरा ही होता है''। विपत्ति काल में इससे भी कहीं अधिक बुरी परिस्थितियाँ होंगी, पवित्र आत्मा हटा लिया जाएगा और शैतान को खुला मार्ग मिल जाएगा (प्रका० 13)। परन्तु पवित्र आत्मा लोगों को हजार वर्ष के राज्य में प्रवेश करने के लिए तैयार करने का काम करता रहेगा।

हजार वर्ष के राज्य में पवित्र आत्मा का कार्यः

केवल उद्धार प्राप्त लोग ही हजार वर्ष के राज्य में प्रविष्ट होंगे सभी परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करने वालों का न्याय हो चुका होगा, और ये इस हजार वर्ष के युग की समाप्ति पर अन्तिम दण्ड की प्रतिक्षा कर रहे होंगे। फिर भी इन हजार वर्ष के काल में, जब कि मसीह का धर्मी राज्य का काल चल रहा होगा, सन्तान उत्पन्न होती रहेगी जो निश्चित रुप में अपनी मुक्ति के लिए व्यक्तिगत रुप में मसीह को स्वीकार करेगी। पवित्र आत्मा उनको नया जीवन प्रदान करने का कार्य करेगा जो मसीह को अपना मुक्तिदाता स्वीकार करेंगी। (यिर्म० 31:33,34 ; योएल 2:28-29,32)। जब कि मसीह धर्मी शासक का राज्य होगा, तो यह समझना कठिन है कि कैसे व्यक्ति उसे अस्वीकार कर सकता है। फिर भी यह सच ठहरेगा क्योंकि मानव स्वभाव में परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करने की जन्मजात प्रवृत्ति है। मनुष्य शैतान के साथ मिलकर हजार वर्ष के राज्य के अन्त में परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करेंगे।

पुराने नियम में यहेज० 36:27; 37:14 में मसीह के राज्य से सम्बन्धित यह संकेत मिलता है कि हजार वर्ष के राज्य - काल में पवित्र आत्मा विश्वासियों के अन्तर में वास करेगा। वह विश्वासियों को परिपूर्ण भी करता रहेगा जिससे इस युग में धार्मिकता एक विशिष्टता बनी रहेगी।

Creation Autonomous Academy

निष्कर्ष:

वर्तमान युग के विश्वासी जो कि असीमित शक्ति से परिचित हैं, इसका कारण यह है कि पवित्र आत्मा उनके अन्तर में बसा हुआ है, यह उनकी जिम्मेदारी और विशेषाधिकार है कि “ अपने शरीरों को जीवित, और पवित्र और परमेश्वर को भावता हुआ बलिदान करके चढ़ाओंः यही तुम्हारी आत्मिक सेवा है और इस संसार के सदृश्य न बनो; परन्तु तुम्हारी बुद्धि के नए जाने से तुम्हारा चालचलन भी बदलता जाए, जिससे तुम परमेश्वर की भली, भावती और सिद्ध इच्छा अनुभव से मालूम करते रहो” (रोमियों 12:1-2)।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-8

त्रिएक परमेश्वर

(Trinity)

1. सिद्धान्त का महत्व

मसीही कहता है,"मैं एक ही परमेश्वर पर विश्वास रखता हूँ"। यहूदी और मुसलमान उत्तर देते हैं, "आप पिता और पुत्र और पवित्रात्मा को मानते हैं, इसलिये आप तीन ईश्वरों को मानते हैं।" इसके प्रतिउत्तर में हम त्रिएक ईश्वर के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं, अर्थात् यह सिद्धान्त कि एक ही परमेश्वर में तीन व्यक्तित्व हैं। यह सिद्धान्त कठिन है,परन्तु प्रारम्भ ही से हमें समझना चाहिए कि प्रभु यीशु मसीह में परमेश्वर के प्रकाशन को यथार्थ रीति से समझने के लिए वह अत्यन्त आवश्यक है। इसे माने बिना हम मसीही प्रकाशन के अनुसार परमेश्वर को नहीं समझ सकते हैं। (देखिये इफि० 2:18)

स्वयं मसीही लोगों में ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं, विशेषकर वे जो आध्यात्मिक विद्या में अधिक रुचि नहीं लेते हैं,जो इस सिद्धान्त के प्रति बहुत कम सहिष्णुता दिखाते हैं। उन्हें ऐसा प्रतीत होता है कि आध्यात्मवेत्ता सरल सुसमाचार को ऐसे विकृत और काल्पनिक रुप में परिवर्तित करते हैं जिससे कुछ लाभ नहीं होता। यह सत्य नहीं है। इस सिद्धान्त को प्रतिपादित करने में प्राचीन मसीही मण्डली के आध्यात्मिक शिक्षक मिथ्यावादी नहीं थे । वे पवित्र शास्त्र और मसीही अनुभव के कुछ मुख्य तथ्यों को योग्य रीति से समझने का प्रयत्न कर रहे थे जब उन्होंने माना और सिखाया कि परमश्वर के एक ही सत्य में तीन ऐसे व्यक्तित्व हैं जिनमें कुछ भेद तो है किन्तु वे एक दुसरे से वियुक्त नहीं हैं।

हम इस बात की जांच पवित्र शास्त्र ही की कसौटी पर कर सकते हैं । इम सिद्धान्त को माने बिना हम ऐसे पदों को किस प्रकार से समझ सकते है,जैसे मत्ती 28:19 और 2 कुरि० 13:14? आप मत्ती 3:16,17 ; लुका 10:21; यूह० 14:8-11; 15:26; प्रका० 2:32 , 33; रोम० 8:11; 1 कुरि० 12:4-6; इफि० 3:14-19 और 1 पत० 1:2 को फिर से पढ़िये । ये पद या तो स्पष्ट करते हैं या इशारा करते हैं कि पिता परमेश्वर है, यीशु मसीह परमेश्वर है, और पवित्रात्मा परमेश्वर है; तौभी तीन परमेश्वर नहीं है, एक ही है। इसलिये हम पवित्र त्रिएक परमेश्वर को मानते हैं।-तीन व्यक्तित्वों में एक ही परमेश्वर, एक ही परमेश्वर में तीन व्यक्तित्व । इतना ही विचार स्पष्ट करता है कि यह सिद्धान्त प्रत्येक विश्वासी के लिये व्यावहारिक महत्व का है।

त्रिएकत्व का सिद्धान्त वही सिद्धांत है जो सम्पूर्ण मसीही शिक्षा और अनुभव को संगठित करता है। उसका घनिष्ठ सम्बन्ध बाइबल के प्रकाशन , मसीही मण्डली के जीवन, तथा मसीहियों की आराधना से है। बाइबल के साथ इसका सम्बन्ध अधिक स्पष्ट होगा यदि हम इस पुस्तक की कुछ पूर्व उल्लिखित बातों पर

फिर दृष्टिपात करें। पहले अध्याय में यह कहा गया कि ‘‘हम परमेश्वर पर विश्वास रखते हैं जैसे वह प्रभु यीशु मसीह में पवित्रात्मा के द्वारा विश्वासी मनुष्य पर प्रकट होता है।’’ दूसरे, तीसरे, और चौथे अध्यायों में यह मूल विश्वाास कुछ विस्तार के साथ समझाया गया। प्रभु यीशु मसीह के विषय में हमने इस पर विचार किया कि पृथ्वी पर उसके जीवन के समय में भी उसके अनुचर अधिकाधिक समझते जाते थे कि वह परमेश्र का पुत्र होकर परमेश्वर के साथ एक अतुलनीय घनिष्ठ सम्बन्ध में रहता था (मरकुस 1:10 ,11; 2:5-12; 3:11; 4:41; 9:7)। प्रभु के जी उठने और स्वर्गारोहित होने से यह विश्वास और अधिक दृढ़ हो गया। यह स्पष्ट है कि प्रभु ने अपने विषय में ऐसा ही विश्वास रखा (मत्ती 11:27; मरकुस 12:6; 35-37 ; 13:37; 13:32; 14:61, 62)। जैसे जैसे प्रथम मसीही विश्वासी परमेश्वर के उस नये अनुभव को जो उन्हें मसीह में प्राप्त हुआ समझने का प्रयत्न करते थे वैसे वैसे वे परमेश्वर के साथ मसीह का सम्बन्ध अधिकाधिक घनिष्ठ समझने के लिये बाध्य हुए, यहॉ तक कि वे मसीह के लिये सब अन्य उपाधियों से अधिक उस उपाधि को प्रयुक्त करते थे जो पुराने नियम में परमेश्वर के लिये विशेष रुप में आता था, अर्थात ‘‘प्रभु ’’ (यूहन्ना 1:1-5; 8:42,58,10:30; 14:11; रोम० 1:4; 9:5; 2 कुरि० 5:19; फिलि० 2:5-11; कुल० 1:15-20 ;2:9 तीतुस 2:13; इब्रा० 1:1-5)। फिर भी वे यीशु मसीह को परमेश्वर पिता के बराबर नहीं समझते थे । जो कुछ वे पुत्र के सनातन से होने के विषय तथा जी उठे मसीह के स्वर्गीय महायाजक के पद के विषय में कहते थे वह स्पष्ट करता है ईश्वरत्व में कुछ स्थायी भेद हैं ।

पवित्रात्मा के विषय हम ने यह देख लिया है कि प्राचीन मसीहियों का ऐसा विश्वास था कि यह सब विश्वासियों को परमेश्वर की देन है और उसका दिया जाना मसीह के स्वार्गारोहित होने से सम्बन्ध रखता है । उन्होंने शीघ्र ही पहचान लिया कि इस बात में उनकी एकेश्वरवादी विश्वास के लिये समस्या है, और उन्होंने इस समस्या को हल करने का कुछ प्रयत्न भी किया (प्रेरितों० 5:31 , 32; इब्रा० 9:14 ; 1 पतरस 1:2; यहूदा 20,21; प्रका० 1:4;5)। मत्ती 28:19 से यह सिध्द है कि कम से कम सन् 80 ईस्वी तक यहूदी मसीही अपने विश्वास के साथ कि परमेश्वर एक है यह भी मानते थे कि वह त्रिएक हैं।

हम ने यह भी देख लिया है कि पौलुस अन्तर्यामी मसीह और पवित्रात्मा का अति घनिष्ठ सम्बन्ध बताता है परन्तु साथ ही उनमें कुछ पृथकता भी मानता है (1 कुरि० 12:4-6; इफि० 4:4-16)। वह सिखाता है कि पिता और पवित्रात्मा एक है,और साथ ही उन में कुछ अन्तर मानता है (1 कुरि० 2:10,11; 15 :24 ; गला० 4:6)। वह यह भी सिखाता है कि पवित्रात्मा विश्वासी के लिये परमेश्वर से प्रार्थना करता है (रोमि० 8:26, 27)।

सारांश में हम कह सकते हैं कि पौलुस के अनुसार (रोमि० 5:1-5; 15:15,16, 1 कुरि० 2:2-4 ,12:4-6, 2 कुरि० 13:14; गला० 4:3-6 ; इफि० 2:18; 3:14-17; 4:4-6) तथा यूहन्ना के अनुसार (14 से 16 यध्याय) परमेश्वर का अनुभव जो मसीही को होता है वह एक ही रुप में सार्थक है, अर्थात् इस रुप में कि परमेश्वर साथ ही साथ एक है और तीन भी है । जितने मनुष्य परमेश्वर को

Creative Autonomous Academy

मसीह में पवित्रात्मा के द्वारा जान गये हैं उनके लिये बाइबल के अनुसार परमेश्वर पर विश्वास रखने का अर्थ है त्रिएक परमेश्वर को मानना । यह सिद्धान्त परमेश्वर के विषय बाइबल में प्रकाशित सब तथ्यों को सुरक्षित रखता है; इस कारण समस्त कठिनाइयों के होते हुए भी ,मसीही मण्डली उसे प्राचीन काल से मानती आई है । यह एकमात्र साधन है जिसके द्वारा परमेश्वर के विषय बाइबल की सब शिक्षाएं संगठित रुप में समझी जा सकती हैं ।

त्रिएकत्व का सिद्धान्त मसीही मण्डली में व्यावहारिक महत्व भी रखता है। मण्डली का इतिहास स्पष्ट रीति से सिखाता है कि जितने लोग इस सिद्धान्त के प्रति अविश्वस्त या निश्चिन्त रहते हैं वे बहुत ही शीघ्र मसीह और पवित्रात्मा के साथ जीवित सम्पर्क खो देते हैं तथा वे परमेश्वर को पिता के रुप में वास्तविक रीति से नहीं जानते । जान वेस्ली ने कहा कि ''मेरी दृष्टि में यह असम्भव है कि किसी व्यक्ति का जीवित विश्वास रह सकता है जो नहीं मानता कि तीनों एक ही हैं '' वर्तमान भारतीय मण्डली से भी इस बात का उदाहरण दिया जा सकता है। कुछ वर्ष हुए दक्षिणी भारत के एक जिले में मसीही मण्डली अत्यन्त अशक्त और निर्जीव थी। इसके कारणों की विस्तृत जांच पड़ताल करने पर यह ज्ञात हुआ कि उन लोगों की समस्या मूल में आध्यात्मिक समस्या थी । सब ने वैसा ही मान तो लिया कि परमेश्वर ने अपने को पिता और पुत्र और पवित्रात्मा के रुप में प्रकट किया ,परन्तु व्यावहारिक रुप में वे या तो पिता या पुत्र या पवित्रात्मा पर विश्वास रखते थे । कुछ थे जो परमेश्वर को पिता के रुप में मानते थे, परन्तु इस प्रकार से परमेश्वर उनके लिये वर्तमान, क्रियाशील उद्धारकर्ता नहीं था। अन्य ऐसे थे जिन्होंने, विशेषकर आत्मजाग्रति के सम्मेलनों के समय, यीशु मसीह को अपन उद्धारकर्ता मान लिया, परन्तु ऐसे रुप में माना कि उनकी भक्ति में प्रभु यीशु ने परमेश्वर पिता का स्थान ले लिया। और भी थे जो नित्य पवित्रात्मा के बपतिस्मे की धुन में ऐसे रहते थे कि वे परमेश्वर पिता और पुत्र को भूल कर आत्मिक आवेग में मग्न रहना चाहते थे, जिस कारण से उनका विश्वास विकृत और अशक्त रहा । सभों का विश्वास इस कारण से दुर्बल रहा कि वास्तव में ऐसे परमेश्वर पर विश्वास नही रखते थे जो साथ ही पिता और पुत्र और पवित्रात्मा के रुप में प्रगट है।

परिणाम यह है कि जो मण्डली त्रिएक परमेश्वर पर जीवित विश्वास नही रखती उसके भविष्य के लिये अधिक आशा नहीं हो सकती है। आत्मिक जाग्रति के किसी स्थायी प्रभाव के लिये आवश्यक है कि वह त्रिएक परमेश्वर के दृढ़ विश्वास पर आधारित हो । वैसे ही मण्डली के प्रचलित जीवन में भी इस सिद्धान्त का नित्य ज्ञान रखना जरुरी है। प्रत्येक आराधना में त्रिएक परमेश्वर पर हमारा दृढ़ विश्वास प्रति -बिम्बित होना चाहिये । मसीहियों के लिये इस विश्वास को दृढ़तापूर्वक पकड़े रहना आवश्यक है क्योंकि यह सिद्धान्त परमेश्वर के विषय बाइबल का सम्पूर्ण प्रकाशन सुरक्षित करता है, अर्थात् कि एक ही परमेश्वर विश्व का महान सृजनहार और पालनहार है, कि वह यीशु मसीह में देहधारी हुआ, और कि वह विश्वसियों में अन्तर्यामी होकर रहता है।

त्रिएक परमेश्वर पर मसीहियों का विश्वास सच्ची मसीही आराधना में भी प्रकाशित होता है। अति प्राचीन काल से यह पैत्रिक स्तोत्र मण्डली में गाया जाता है -

Creation Autonomous Academy

हो पिता की स्तुति ,और पुत्र और पवित्रात्मा की ।
जैसी आरम्भ ही में हुई, है अभी ,और रहेगी
युगानुयुग, आमीन ,आमीन
मण्डली की सर्वप्रिय गायनों में ऐसे गीत है ,जैसे ये दो -
पिता और पुत्र और आत्मा की
हो स्तुति स्वर्ग और जग में भी ।
जय उसकी करें मनुष्य जात
और दूतगण सारे दिन ओ रात ।

प्रशंसा हो और स्तुति भी
पिता और पुत्र और आत्मा की ,
पराक्रम राज और महिमा
ईश्वर त्रिऐक की हो सदा।

मसीही मण्डली की पवित्र विधियॉ भी त्रिएक परमेूश्वर के विश्वास की साक्षी देती हैं। जल संस्कार ''पिता और पुत्र और पवित्रात्मा के नाम में '' दिया जाता है। पवित्र विवाह के समय दूल्हा ''पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा का नाम '' लेकर दुल्हिन को छल्ला पहिनाता है। साधारण आराधना में भी जब कभी हम प्रेरितों का विश्वास वचन या निकेआ का विश्वास वचन बोलते हैं हम गवाही देते हैं कि हम त्रिएक परमेश्वर को मानते हैं। प्रत्येक आराधना ऐसे आशीर्वचन से समाप्त की जाती है जिसमें पिता और पुत्र और पवित्रात्मा की आशीष पुकारी जाती है । इस प्रकार का बोलना केवल मन्त्र नहीं, इसका बहुत ही गहरा अर्थ है । हमारे लिये कल्याण की बात होगी यदि हम इस अर्थ को यथार्थ रीति से समझें।

जिस प्रकार त्रिएक परमेश्वर का विश्वास प्राचीन काल के विश्वास वचनों में व्यक्त किया गया है, उस प्रकार वह धर्मसुधार काल के विश्वास वचनों में भी स्पष्ट है। ''साधारण प्रार्थना '' की पुस्तक के धर्म सिद्धान्तों में यह प्रथम सिद्धान्त आता है -''एक ही जीवित, सत्य, और शाश्वत परमेश्वर है, जिसकी शक्ति, ज्ञान और अनुग्रह असीम है , जो सब वस्तुओं का सृजनहार और पालनहार है ...! इस एक ही परमेश्वर में तीन व्यक्तित्व हैं जो एक सत्य होकर शक्ति और सनातनत्व में सदृश हैं, अर्थात् पिता, पुत्र और पवित्रात्मा ।'' इसके समान ''वेस्टमिन्टर विश्वास वचन '' का एक मूल सिद्धान्त है -''परमेश्वर के सत्य में तीन व्यक्तित्व हैं, अर्थात् पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा। ये तीनों, एक सत्य होकर, शक्ति और महिमा में सदृश होकर, एक ही परमेश्वर हैं। '' यह सिद्धान्त सम्पूर्ण मसीही विश्वास के लिये आधार है। बाइबल का मूल सत्य यह है कि परमेश्वर सृजनहार है और कि वह अपनी सृष्टि पर सर्वशक्तिमान, न्यायशील, और पवित्र प्रभु है।

Creation Autonomous Academy

इसके साथ हम जानते हैं कि परमेश्वर अपने सृजे हुए संसार की चिन्ता करता है क्योंकि उसने अपने पुत्र को भेजा कि , वह मनुष्य होकर हमारे बीच में रहे । उसका देहधारी होना हमें पूरा विश्वास दिलाता है कि परमेश्वर हम सबसे प्रेम रखता है क्योंकि मसीह हमारे लिये मरा । फिर हम यह भी जानते हैं कि पवित्रात्मा का कार्य यह है कि वह हमें उस नवीन जीवन को प्रदान करे तथा उस जीवन में सुरक्षित रखे जो परमेश्वर के पुत्र के आने से सम्भव हुआ । इस विश्वास का प्रत्येक अंग तथा यह सम्पूर्ण विश्वास हम सब के लिये अत्यन्त आवश्यक है।

2.बाइबल में सिद्धान्त का आधार -

बाइबल में त्रिएकत्व की शिक्षा सैद्धान्तिक रुप में पाई नहीं जाती है, तौभी उसमें वे मूल तथ्य प्रकट होते हैं जिनके आधार पर सिद्धान्त का विकास हुआ। हम सबसे पहिले पुराने नियम की ओर दृष्टि करें ।

पुराने नियम के विश्वास का मूल सिद्धान्त यह कि ''हे इस्राएल, सुन, यहोवा हमारा परमेश्वर है, यहोवा एक है। '' (व्य० वि० 6:4)। इस वाक्य में मुख्य शब्द ''एक '' है। यह शब्द इतना सरल नहीं हैं जितना वह पहली दृष्टि पर मालूम होता है इस पर हम कुछ ध्यान दें। गणित में ''एक'' साधारण रीति से गिनने का सब से छोटा ऑकड़ा है, परन्तु वह परिपूर्णता के लिये भी प्रयुक्त हो सकता है। ''एक '' का अर्थ ''अद्वितीय '' भी हो सकता है। इस अर्थ का कुछ इशारा व्य० वि० 6:4 में हैं। फिर वह शरीर के विभिन्न अंगों की एकता के लिये प्रयुक्त हो सकता है, जैसे 1 कुरि० 12:12-27 में। इसके समान जिस प्रकार मनुष्य के सब अंग मिल कर एक ही देह है, उसी प्रकार से उसकी विभिन्न मानसिक वृत्तियॉ हैं परन्तु वह मनोविज्ञान की दृष्टि से एक ही व्यक्ति है। ''एक '' शब्द का प्रयोग किसी समाज की एकता के लिये भी हो सकता है जब उसमें एक ही विचार और एक ही अभिप्राय है, जैसे प्रेरितों० 4:32 में। अन्त में वह परमेश्वर और मनुष्य की आत्मिक एकता के लिये आ सकता है, जैसे 1 कुरि० 6:17 में । यह सब कुछ बताने का अभिप्राय यह नही है कि ये सब अर्थ परमेश्वर पर लगने वाले हैं जब हम कहते हैं कि पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा एक परमेश्वर हैं, परन्तु आवश्यक है कि हम विचार करें कि इनमें से कौन सा अर्थ या कौन से अर्थ परमेश्वर पर लागू हो सकते हैं । इन विचारों से हमें सहायता होगी जब हम परमेश्वर के विषय पुराने नियम की शिक्षओं पर विचार करेंगे।

Creation Autonomous Academy

त्रिएक परमेश्वर का सिद्धान्त पुराने नियम में नहीं मिलता है। इब्रानी भाषा में 'अलोहीम'' शब्द परमेश्वर के लिये प्रयुक्त होता है। यह बहुवचन का शब्द है 'परन्तु इससे सिद्ध नही होता कि ईश्वरत्व में विभिन्न व्यक्ति हैं । इसका अर्थ सम्भवतः यह है कि इस्राएल के परमेश्वर में ईश्वरत्व की परिपूर्णता है । पुराने नियम में सर्वनाम कभी बहुवचन के रुप में परमेश्र के लिये प्रयुक्त होते है, जैसे उत्पत्ति 1:26;3:22;11:7; यशा० 6:8 में , परन्तु ऐसा प्रयोग कुरान में भी पाया जाता है ,जहॉ त्रिएकत्व का प्रश्न नहीं हो सकता है , सुरा 2:38 में । इस प्रकार से यशा० 6:3 में सिद्ध नहीं किया गया है कि परमेश्वर

की एकता में तीन पवित्र व्यक्ति हैं परन्तु कि परमेश्वर अत्यन्त ही पवित्र है । त्रिएक परमेश्वर का सिद्धान्त पुराने नियम में सिद्ध नहीं है, तौभी इस सत्य की ओर कुछ इशारे पाये जाते हैं। हम इन पर संक्षिप्त रुप में विचार करें ।

सम्पूर्ण पुराने नियम में परमेश्वर व्यक्ति है और कार्यशील है। उसके कार्य उसकी सृष्टि से विशेष कर मनुष्य से, सम्बन्ध रखते हैं । पुराना नियम स्पष्ट करता है कि एक ही परमेश्वर में कार्य की विभिन्नता है। इन कार्यों के सम्बन्ध में वह कभी परमेश्वर की उंगली (निर्ग० 8:19), हाथ (अय्यूब 2:10), भुजा (यशा० 53:1), कान (भ०सं० 71:2), ऑख (भ०सं० 33:18), मुख (व्य० वि० 8:3; भ०सं० 102:2), और शब्द (भ०सं० 107:20; यशा० 55:10,11) की चर्चा करता है। इसका अर्थ नहीं है कि मनुष्य के समान परमेश्वर के भिन्न भिन्न अवयव है, किन्तु ये स्थल प्रकट करते हैं कि , विशेष कर मनुष्य के साथ सम्बन्ध रखने में , परमेश्वर की एकता में कुछ भिन्नता भी है। परमेश्वर अपने सब कार्यो में उपस्थित है , परन्तु वह अपने सब कार्यो से अत्यन्त बढ़कर है। इन बातों में त्रिएकत्व की ओर कुछ इशारे पाये जा सकते हैं। अधिक स्पष्ट संकेत परमेश्वर के आत्मा और परमेश्वर की बुद्धि के वर्णनों में मिलते हैं। परमेश्वर का आत्मा पुराने नियम में उसकी जीवित, कार्यशील सामर्थ है। कभी उसका वर्णन ऐसा किया जाता है मानो परमेश्वर स्वयं सामर्थ के साथ कार्य कर रहा है, जैसे भ०सं० 33:6;104:30 में और कभी वह एक विशेष वरदान है जो वह मनुष्यों को देता है जैसे उत्प० 41:38; निर्ग० 31:3; न्या० 3:10। यशायाह 11:2-4,61:1-3 में वह परमेश्वर की सामर्थ है जिसके द्वारा मसीह अपना महान कार्य करेगा । परमेश्वर अपने आत्मा द्वारा कार्य करता है, किन्तु परमेश्वर की परिपूर्णता उस आत्मा और उसके कार्य नें सीमित नहीं है । नीति० 8:22-31 में परमेश्वर की बुद्धि की चर्चा ऐसी की जाती है मानों वह परमेश्वर से कुछ अंश तक अलग और स्वतन्त्र है, तौभी वह परमेश्वर ही है जो बुद्धि के साथ कार्य करता है। पुराना नियम स्पष्ट सिखाता है कि परमेश्वर एक है, किन्तु इसके साथ वह यह भी व्यक्त करता है कि परमेश्वर की एकता में ऐसी विभन्न शक्तियों का समावेश है जो भिन्ना भिन्न प्रकार कें कार्यो को करती हैं ।

जो बात पुराने नियम में धुन्धली सी दिखाई देती है वह नये नियम में अत्यन्त स्पष्ट प्रकाशित की जाती है। नये नियम में निम्न बातें ऐसी स्पष्ट की जाती है कि उनके विषय में किसी प्रकार की शंका नहीं हो सकती है।

(अ) परमेश्वर एक है। यह विश्वास, जो पुराने नियम में मौलिक बात हैं, नये नियम के प्रत्येक अंश में भी मूल धारणा है। यह बहुत से स्थलों में अत्यन्त स्पष्ट किया जाता है, जैसे मरकुस 12:29-34 ; 1 कुर० 8:4; इफि० 4:6 ; 1 तीम० 1:17 ; यहूदा 25 में

Creation Autonomous Academy

(आ) पिता परमेश्वर है। जिस पिता से प्रभु यीशु प्रार्थना करता था, जिसके साथ वह नित्य घनिष्ठ संगति रखता था , जिसके प्रति वह सदा विश्वस्त और आज्ञाकारी रहता था, जिसके कार्य सिद्ध करने वह आया, तथा जिस पिता को वह स्वयं मनुष्यों पर प्रगट करता था, किसी प्रकार का सन्देह नही हो सकता है कि यह परम पवित्र और अनुग्रहमय पिता स्वयं परमेश्वर है। यह नये नियम के अनिगिनित स्थलों में स्पष्ट है,जैसे यूह० 8:54; 17:1-26; 1 कुर० 8:6; इफि० 4:6 में।

(इ)यीशु मसीह परमेश्वर है। यह सुसमाचारों से स्पष्ट है। प्रभु यीशु की शिक्षाएं , उसके कार्य , और उसका व्यक्तित्व सब इस बात को सिद्ध करते हैं । यह प्रेरितों के प्रचार और शिक्षा में मौलिक है। नये नियम के बहुत से स्थलों में ये स्थल विशेष ध्यान के योग्य हैं। -यूह० 1:1-14 ; फिल० 2:5-11; कुल० 1:15-20; इब्रा० 1:1-9 ।

(ई) पवित्रात्मा परमेश्वर है। पिन्तेकुस्त के समय तथा पिन्तेकुस्त के पश्चात् पवित्रात्मा और उसके कार्यो के विषय में जो कुछ नये नियम में वर्णित किया जाता है तथा इसके सम्बन्ध में जो शिक्षा दी जाती है , इससे और कोई नतीजा नहीं निकलता है केवल यह कि पवित्रात्मा परमेश्वर ही है। देखिये विशेष कर यूह० 14:25, 26 ; 15:26-27 ; 16:5-25; रोमि० 8:4-27 ; 2 कुरि० 3:16-18 ; 13:14 ।

(उ) पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा एक दूसरे से विभिन्न हैं। नया नियम सिखाता है कि पिता और पुत्र में अति घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है, किन्तु साथ ही यह स्पष्ट करता है कि उनके कार्य और उनके व्यक्तित्व में वास्तविक अन्तर भी है। यूह० 5:36, 37; 6:38 ; 8:42 ;12:49 ; गला० 4:4; 1 यूह० 4:9 में तथा अनेक अन्य स्थलों में यह प्रकट है। इस प्रकार से नया नियम इस बात की भी साक्षी देता है कि पिता और पुत्र के साथ पवित्रात्मा का अत्यन्त निकट सम्बन्ध रहता है, तौभी दोनों से विशेष अन्तर भी है, जैसे यूह० 14:16;14:25,26; इब्रा० 9:14 में । जब हम पूरे नये नियम की शिक्षा को देखते हैं तब हमें स्पष्ट है कि तीनों में अन्तर हैं।

(ऊ) पिता , पुत्र , और पवित्रात्मा तीनों व्यक्ति हैं । इस बात पर शंका कभी नहीं हुई कि नये नियम के अनुसार पिता और पुत्र व्यक्ति हैं। इसके साथ हमने ऊपर , तीसरे अध्याय में , देखा है कि पर्याप्त कारण है जिनसे हम समझ सकते हैं कि पवित्रात्मा भी वस्तु नहीं, किन्तु व्यक्ति है। देखिये विशेष कर यूह० 14:16 ,17 ;15:26 ;16:13,14 रोम० 8:4-27 ।

Creation Autonomous Academy

(ऋ) पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा तीनों एक हैं। नये नियम के सब लेखक , यद्यपि वे पहचानते हैं कि तीनों में भिन्नता है, तथापि वे सदा स्पष्ट करते हैं कि तीनों मूल में एक ही हैं ,जैसे यूह० 10:30 ; 14:8-11; 17:21-22 ; 1 कुरि० 2:9 -13; 2 कुरि० 3:17,18 में। जब परमेश्वर मनुष्यों के साथ व्यवहार करता है तो वह कभी पिता होकर, कभी पुत्र होकर , और कभी आत्मा होकर करता है , किन्तु नया नियम स्पष्ट करता है कि वह सदा एक ही परमेश्वर है जो ऐसे व्यवहार में अपने को प्रकाशित करता है ,जैसे मरकुस 13:11 ; यूह० 5:36 -44 ; 2 कुरि० 13:3 में । सम्पूर्ण नये नियम में पिता , पुत्र , और पवित्रात्मा की भिन्नता और साथ ही उनकी एकता प्रकट की जाती है।

इस प्रकार से नये नियम में त्रिएकत्व के सिद्धान्त का दृढ़ आधार पाया जाता है । यद्यपि उसमें त्रिएक परमेश्वर के विषय सैद्धान्तिक रुप से शिक्षा नहीं दी जाती है तथापि उसमें ऐसे तथ्य प्रकाशित किये गये हैं जिनके आधार पर इस सिद्धान्त का प्रतिपादन अनिवार्य था यदि मसीही विश्वासी परमेश्वर और उसके उद्धारात्मक कार्य की सच्ची साक्षी देना चाहते थे ।

3. मसीही अनुभव में सिद्धान्त का आधार -

बाइबल परमेश्वर के महान कार्यो का वर्णन करती है। साथ ही वह उन मनुष्यों के अनुभव का वर्णन करती है जिन पर परमेश्वर ने अपने को इन कार्यों के द्वारा प्रकाशित किया । नये नियम की किसी भी पुस्तक के लिखे जाने से पहले मसीही विश्वासियों ने त्रिएक परमेश्वर के प्रकाशन और उसके कार्यों का अनुभव किया । कोई कोई व्यक्ति ऐसा समझते हैं कि त्रिएकत्व की बात केवल ''सैद्धान्तिक '' या ''दार्शनिक '' बात है, किन्तु वास्तव में वह व्यावहारिक बात, अनुभव की बात भी है। वह -उन सब मनुष्यों का अनुभव है जिन्होंने परमेश्वर को पवित्रात्मा के द्वारा प्रभु यीशु मसीह में पहचानना सीख लिया है। इस अनुभव के आधार पर कुछ विशेष समस्याएं उन विश्वासियों के लिये उपस्थित हुईं ।

प्रारम्भ ही से सब मसीही सृजनहार परमेश्वर के विषय में जानते थे। उन में बहुत से यहूदी जाती के थे, जिन्होंने बचपन ही से पुराने नियम की शिक्षा पाई थी । अन्य ऐसे थे जिन्होंने यहूदियों के वातावरण में रह कर परमेश्वर के विषय में सीख लिया था। दूसरी ओर जितने अयहूदी थे उन्होंने मसीही मण्डली में आकर शीघ्र ही परमेश्वर के विषय में सीख लिया । प्रारम्भ ही से मसीही लोग ऐसे एक ही परमेश्वर को मानते थे, जो सृजनहार , पालनहार , और पिता के समान अनुग्रहमय है। किसी दूसरे की उपासना करना उनके लिये महापाप था।

स्वभाव में , और मानव में एकता के भीतर ही अंशमात्र विभिन्नता के लिये स्थान है । यह विशेष रुप में प्रेम के विषय सत्य प्रतीत होता है, जो मनुष्यों में श्रेष्ठ गुण है। परमेश्वर प्रेम -स्वरुप है। परमेश्वर अपने प्रकाशन में प्रकट करता है कि वह तीन विशेष प्रकार से कार्य करता है । इन कार्यों द्वारा , परमेश्वर के

Creation Autonomous Academy

साथ विश्वासी की संगति द्वारा , और विशेष कर नये नियम की स्पष्ट साक्षी द्वारा , हम परमेश्वर को त्रिएक मानने को बाध्य किये जाते है। यह विश्वास हमारी किसी कल्पना की बात नहीं है, वह परमेश्वर के स्वयं -प्रकाशन की बात है।

मुसलमान त्रिएक परमेश्वर का विश्वास ठुकरा देता हैं। हिंदू इसके विपरीत उसे अपने विश्वास में मिलाने को तैयार है। वह बता सकता है कि हिंदू धर्म एक नहीं वरन दो विशेष त्रिमूर्तियों को प्राचीन काल से मानता आया है। एक है ब्रह्मा, विष्णु,और शिव की त्रिमूर्ति। इस त्रिमूर्ति के विषय में प्रश्न उपस्थित है कि तीनों में कुछ वास्तविक एकता है अथवा नहीं। सम्भव प्रतीत होता है कि इस विश्वास का उत्थान ऐसे भिन्न सम्प्रदायों को जो पृथक् -पृथक ईश्वरों को मानते थे एक में संगठित करने के प्रयत्न से हुआ । उन में वास्तविक एकता बताने के लिये अलग अलग प्रयत्न अवश्य हुए हैं कुछ पुराणों में यह बताया गया है कि तीनों का समावेश विष्णु में है , और कुछ अन्य पुराणों में बताया गया है कि तीनों का समावेश शिव में है । वेदान्त दर्शन के अनुसार तीनों का ,जैसे अन्य सब नाम और रुपों का, समावेश निर्गुण ब्रम्ह में है ; परन्तु इस दर्शन के अनुसार अन्तिम परिणाम है कि तीनों विभूतियां मायायुक्त हैं। इन प्रयत्नों में से एक ने भी नहीं बताया कि तीन नित्यस्थायी व्यक्तित्वों में वास्तविक एकता है । ब्रह्मा, विष्णु और शिव की त्रिमूर्ति प्रायः आरियुस द्वारा प्रतिपादित त्रय के तुल्य रहती है , और हम देख चुके हैं कि यह शिक्षा परमेश्वर के वास्तविक प्रकाशन का यथार्थ और योग्य उल्लेख नहीं करती है। हिन्दू विश्वास में हम एक और त्रिमूर्ति को भी पाते हैं, अर्थात् महेश त्रिमूर्ति । शिल्पकला में इसके अनेक उदाहरण पाये जाते हैं, जैसे बम्बई के पास एलफांटा की गुफा में, और तन्त्रो में इस त्रय की शिक्षा का प्रतिपादन है। शिल्पकला में यह त्रय ऐसी प्रतिमा द्वारा प्रदर्शित किया जाता है जिसके तीन चेहरे हैं । बीच का चेहरा नित्य शांत, और निष्क्रिय है। यह सदा शिव की प्रतिमा है। एक और चेहरा है जो पौरुष, वीरता ,और अधिकार को दिखाता है। यह महादेव की प्रतिमा है। दूसरी ओर का चेहरा स्त्री के उचित रुप कान्ति , और लावण्य को दिखाता है। यह शक्ति या देवी का प्रतिरुप है। तन्त्रों के अनुसार यह पुरुष रुप और स्त्री रुप नित्यस्थायी नहीं हैं; वे काल और कार्य के अनुसार व्यक्त होते और फिर सदाशिव की नित्य शान्त एकता में लीन हो जाते हैं। उनके विषय की शिक्षा साबेलियुस की शिक्षा के तुल्य है, और हम देख चुके हैं कि यह भी परमेश्वर के वास्तविक प्रकाशन का यथोचित उल्लेख नहीं करती है। परिणाम यह है कि हिन्दू विश्वास वास्तविक त्रिएकत्व को नहीं जानता है, क्योंकि वह उस प्रभु यीशु को यथार्थ रीति से नहीं जानता जिसमें परमेश्वर का पूर्ण प्रकाशन है और उस पवित्रात्मा को नहीं जानता जिसके द्वारा परमेश्वर का सत्य मनुष्य पर प्रकाशित किया जाता है ।

प्रभु यीशु मसीह के बिना भारतवर्ष सच्चा त्रिएक परमेश्वर को नहीं जानता । उसे जानना अत्यन्त आवश्यक है। वह मनुष्य के व्यावहारिक जीवन के लिये आवश्यक है। हमारे दैनिक जीवन के लिये आवश्यक है कि हम सृजनहार परमेश्वर को जानें। यह संसार किसी निरभिप्राय माया या लीला की कृति नहीं है। वह ऐसे परमेश्वर की सृष्टि है जिसने सुबुद्धि से सब वस्तुओं का निर्माण किया। यह सृष्टि परमेश्वर के लिये स्वप्न नहीं, वह वास्तविक है। वह अपनी कृपा से उस सृष्टि को नित्य धारण करता है । वह प्रकृति के नियमों

को ऐसा स्थिर और विश्वसनीय करता है कि मनुष्य उनको सीख कर लाभ उठा सकता है । यह संसार हमारे लिए वास्तविक है, और परमेश्वर के लिए भी वास्तविक है। वह उनका संचालन अपने अनुग्रहमय अभिप्रायों के अनुसार नित्य करता रहता है। भारतवर्ष में वर्तमान समय सुधार और पुनर्निर्माण का समय है। सृजनहार परमेश्वर पर विश्वास रखे बिना हमें कुछ आशा नहीं हो सकती है कि ये प्रयत्न सफल हो सकेंगे। न तो भौतिकवाद न मायावाद हमें ऐसा आश्वासन दे सकता है। जब हम ऐसे परमेश्वर को जानते हैं जो अपने अनुग्रहमय अभिप्राय के अनुसार ऐसा कार्य नित्य करता है जिसमें मनुष्य का कल्याण समाविष्ट है तब हम दुर्बल मनुष्यों के प्रयत्न सार्थक और आशायुक्त हो सकते हैं।

भारतवर्ष को परमेश्वर के पुत्र प्रभु यीशु मसीह की आवश्यकता है। केवल उसी के द्वारा हम जानते हैं कि सृजनहार परमेश्वर जो हमारी दृष्टि से परे है, हमारा ऐसा प्रेमी पिता है जो प्रत्येक को जानता है और प्रत्येक की चिन्ता करता है । हमें उसकी आवश्यकता इस कारण से भी है कि उसमें परमेश्वर का उद्धार का कार्य वर्तमान और क्रियाशील है। यदि परमेश्वर हमारा उद्धार न करे तो अपने उद्धार के लिये हमारे स्वयं का सबसे कठिन प्रयास भी व्यर्थ और निष्फल रहेगा। मनुष्य में पाप का दोष ऐसा रहता है कि उस के सब से ऊँचे कार्य विकृत हो जाते हैं। प्रभु यीशु मसीह के द्वारा हम परमेश्वर को पिता के रुप में जानने है, तथा उसमें हमारा उद्धार वर्तमान और वास्तविक है।

भारतवर्ष में पवित्रात्मा को भी जानने की आवश्यकता है, क्योंकि वह परमेश्वर की ऐसी सामर्थ है जो विश्वासी में अन्तर्यामी होकर वह कार्य कराती है जो मनुष्य स्वयं नहीं कर सकता। मनुष्य दुर्बल है ,परमेश्वर सर्वशक्तिमान है। पवित्रात्मा परमेश्वर की ओर से ऐसी सामर्थ है जो मनुष्य को एक नवीन जीवन में प्रवेश कराती है और उसे उस जीवन में आगे बढ़ाती रहती है। जब हम अपना पूरा जीवन विश्वास के साथ परमेश्वर को समर्पित कर देते हैं तब परमेश्वर का यह आत्मा हममें अन्तर्यामी होकर हमें ऐसा विवश करता है कि पड़ोसियों के साथ और समाज के भीतर हमारा सारा बरताव परमेश्वर के पवित्र, कल्याणकारी अभिप्रायों के अनुकूल हो। भारतवर्ष ने अपने भविष्य के लिये ऐसे महान लक्ष्यों को निर्धारित किया है जिनको कार्य रुप में लाने के लिये परमेश्वर की यह पवित्र, सृजनात्मक शक्ति अत्यन्त आवश्यक है ।

भारतवर्ष को इन तीनों की आवश्यकता है, और यह भी जानना अत्यन्त आवश्यक है कि तीनों मूल में एक ही हैं। जो सृष्टि का निर्माता है और जो प्रकृति के नियमों का शासक है वही है जो मनुष्यों के प्रति ऐसा प्रेम रखता है कि वह क्रूस का दुःख उठानें तक उनके उद्धार के लिये क्रियाशील रहता है। प्रभु यीशु मसीह में उसने ऐसा कार्य किया जो अन्यथा नहीं हो सका, और जिसे फिर करने की आवश्कता नहीं, किन्तु इस पर भी उसने अपना उद्धार का कार्य नहीं छोड़ा । इस कार्य को सिद्धता तक पहुँचाने के लिये वह आत्मा के रुप में अपने विश्वासियों के साथ और उनमें वर्तमान और क्रियाशील रहता है। यह परमेश्वर, जो तीन है और साथ ही एक है, जो हमारे ऊपर सृजनहार और पालनहार है, जो प्रभु यीशु मसीह में हमारे लिये देहधारी हुआ, और जो हम में अन्तर्यामी होकर हमें सिद्धता की ओर बढ़ा रहा है -वह त्रिएक परमेश्वर हमारी सारी आशाओं का मूल है।

Creation Autonomous Academy

त्रिएकत्व का सिद्धान्त रहस्यमय सिद्धान्त है, परन्तु रहस्यमय भाषा में परमेश्वर का वर्णन करना भरतवर्ष के लिये कोई नवीन बात -नहीं है। उपनिषदों में परमेश्वर के विषय ऐसा लिखा है कि -

पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।

अर्थात्
वह पूर्ण है, यह पूर्ण है, पूर्ण से पूर्ण पूर्ण निकलता है।
पूर्ण की पूर्णता निकाल कर पूर्ण ही शेष रहता है।

निश्चित बात है कि वह चंचल मनुष्य के प्रेम पर अवलम्बित नहीं रह सकता है। फिर , मनुष्य की सृष्टि से पहिले क्या हो सकता था? आवश्यकता है कि परमेश्वर ही में नित्यस्थायी व्यक्तिगत भेद हों जिनके बीच पारस्परिक प्रेम सम्भव हो।

इन सब कारणों से मसीही मण्डली के आचार्यो ने त्रिएकत्व के सिद्धान्त के निरुपण का कार्य उठाया । यह कोई काल्पनिक सिद्धान्त नहीं है , यह मसीही विश्वास और अनुभव पर आधारित है। अब हम इस पर ध्यान दें कि मण्डली में इस सिद्धान्त का विकास किस प्रकार से हुआ।

4- मसीही मण्डीली में सिद्धान्त का विकास -

प्राचीन मसीही मण्डली के आचार्यो के सामने समस्या स्पष्ट थी । पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा तीनों परमेश्वर है, और उनमें कुछ विभिन्नता है; तौभी परमेश्वर अनेक नहीं, किन्तु एक ही है । पुराने नियम से उन्होंने सीख लिया था कि परमेश्वर अपने कार्यों को सम्पादित करने में अपने को विभिन्न प्रकारों से प्रकट करता है, परन्तु इतना ही उनके अभिप्राय के लिये पर्याप्त नहीं था। प्रभु यीशु में और पवित्रात्मा में परमेश्वर का प्रकाशन इसके परे गया था। वे किन शब्दों में इस सत्य को यथार्थ और योग्य रीति से स्पष्ट कर सकते थे ?

प्रारम्भ में मसीही शिक्षकों ने पिता और पुत्र के पास्परिक सम्बन्ध पर विशेष ध्यान दिया। जब वे इसके सन्तोषप्रद निर्णय तक पहुँचे थे, तब उन्होंने इन दोनों के साथ पवित्रात्मा का सम्बन्ध अधिकांश रुप में पिता और पुत्र के सम्बन्ध के सदृश समझाया।

प्रारम्भ ही से मसीही मण्डली ने यीशु मसीह को प्रभु माना। पुराने नियम में प्रभु उपाधि विशेष कर परमेश्वर को दी जाती है। जब मसीही यह उपाधि यीशु के लिये प्रयुक्त करते थे तो इसका तात्पर्य यह था कि वे उसकी महानता और उसका अधिकार परमेश्वर के सदृश मानते थे। इसके साथ सब मसीही मानते थे कि प्रभु यीशु परमेश्वर का पुत्र है, परन्तु कठिनाई यह हुई कि इस सम्बन्ध में पुत्र का अर्थ वास्तव में क्या है। क्या

Creation Autonomous Academy

ऐसा समय कभी हुआ जब पुत्र नहीं था ? क्या पुत्र पिता से कुछ कम है ? इन प्रश्नों का उत्तर देने में ओरिगेन ने महत्वपूर्ण कार्य किया। यूहन्ना के सुसमाचार के पहले अध्याय के आधार पर उसने सिखाया कि परमेश्वर का पुत्र परमेश्वर का शब्द है जो विश्व की सृष्टि से पहले परमेश्वर के साथ था। यह शब्द -रुपी पुत्र समय के अन्दर उत्पन्न नहीं हुआ किन्तु अनादि काल से है, क्योंकि पिता उसे 'सदा' जन्माता है। इस प्रकार से वह समझाता था कि कोई ऐसा समय नहीं था जब पुत्र पिता के साथ नहीं था और कि पुत्र किसी प्रकार से पिता से न्यूनतर नहीं है। आगे पिता और पुत्र का पारस्परिक सम्बन्ध स्पष्ट करने में वह कुछ नये पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करता है, जिन पर ध्यान देना आवश्यक है। इनमें दो विशेष शब्द है , अर्थात् ''ऊसिया '' और ''हुपास्टासिस '' जो अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे ओरिगेन के पश्चात् मसीही मण्डली के विश्वास वचनों में प्रयुक्त हुए। इन शब्दों का क्या अर्थ है ?

ऊसिया शब्द का प्रयोग प्राचीन यूनानी तत्व दर्शनों में हुआ था। यूनानी तत्वज्ञानियों में से प्लाटोन और अरस्तू का सब से अधिक प्रभाव मसीही मण्डली पर हुआ। प्लाटोन के अनुसार ऊसिया अनादि, असीम , अपरिमित सत्य या अस्तित्व है। अरस्तू के अनुसार वह या तो किसी वस्तु का मूल अस्तित्व है, जो उसकी उपाधियों को धारण करता है, या किसी जाति या वर्ग का सर्वसामान्य अस्तित्व है। हुपास्टिसस का अर्थ कुछ स्थलों में ऊसिया के समान है। इसका उदाहरण नये नियम में पाया जाता है, इब्रा० 1:3 में जहां उसका अनुवाद ''तत्व'' किया गया है। अधिकांश उसका प्रयोग कुछ और प्रकार का हुआ। जैसे ऊसिया असीम,अपरिमित अस्तित्व के लिये प्रयुक्त हुआ, वैसे हुपास्टासिस उस अस्तित्व के लिये अधिकाधिक प्रयुक्त हुआ जो किसी अंश तक सीमित या परिमित हो , विशेषकर उस अस्तित्व के लिये जो किसी जीवित व्यक्ति में परिमित हो।

मसीही मण्डली में ओरिगेन ने सब से पहले इन नये पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया। उसने सब स्थलों में इनका प्रयोग एक समान नहीं किया, तौभी इतना स्पष्ट है कि पिता और पुत्र का पारस्पकि सम्बन्ध बताने में उसने सिखाया कि उनका एक ही ऊसिया, अर्थात् एक ही अनादि, अपरिमित अस्तित्व है। उसने उस मत का खण्डन किया जिसके अनुसार ''पुत्र पिता के ऊसिया के बाहर है '' तथा अपना ही विश्वास प्रकट किया कि ''पुत्र पिता की ऊसिया से है ।'' उसने यह भी माना कि पिता और पुत्र में कुछ विभिन्नता भी है। उसने सिखाया कि हुपास्टसिस के विषय में वे एक दुसरे से भिन्न है , अर्थात् जहाँ तक उनका अस्तित्व या व्यक्तित्व कुछ अंश तक परिमित है वहाँ तक भिन्न भिन्न हुपास्टसिस है। उस प्रकार से उसने माना कि पवित्रात्मा की भी पृथक हुपास्टसिस है। ओरिगेन ने ऐसी आशा नहीं की कि इस प्रकार की परिभाषाओं के द्वारा वह इस गूढ़ विषय को स्पष्ट कर सकेगा। वह जानता था कि मसीह में और पवित्रात्मा में परमेश्वर का प्रकाशन जो है वह ऐसा आश्चर्यमय और ऐसा रहस्यमय है कि मनुष्य की बुद्धि उसे स्पष्ट करने में असमर्थ है। यीशु मसीह के विषय में उसने कहा-''जब हम उसमें ऐसी मानवी बातों को देखते है जो साधारण मनुष्यों की दुर्बलता से कुछ विभिन्न प्रतीत नहीं होती, और ऐसी ईश्वरीय बातों को भी जो अनादि , अकथनीय परमेश्वर की बातों को छोड़ और कुछ नहीं हो सकती है, तो हमारी संकीर्ण बुद्धि असमर्थ रहती है। वह

आश्चर्य और आदर से ऐसी विस्मित रहती है कि वह नहीं जानती कि कहॉ फिरना और किस बात को पकड़ना। यदि वह उसे ईश्वर समझती है, वह मनुष्य को देखती है और यदि वह उसे मनुष्य समझती है , वह उस व्यक्ति को देखती जो मृत्यु के राज्य को परास्त कर समाधि से लौट आता है।'' इस पर भी ओरिगेन ने इस रहस्यमय विषय को स्पष्ट करने का ऐसा प्रयास किया जिनके कारण सम्पूर्ण मसीही मण्डली उसकी ऋणी है।

दूसरी शताब्दी से लेकर मसीही मंडली में कुछ भ्रान्त विचार और शिक्षाएं फैलने लगीं। इन में दो विशेष शिक्षाएॅं थी जिनका निवारण करने के लिये मण्डली को अपना विश्वास अधिक स्पष्ट करना पड़ा । पहली सबेलियुस और उसके साथियों की शिक्षा थी, जिनके अनुसार पिता , पुत्र , और पवित्रात्मा में कोई नित्यस्थायी भेद नहीं है। ये तीनों केवल ऐसे रुप है जिनको अव्यक्त और अकथनीय परमेश्वर , स्थिति और अभिप्राय के अनुसार , कुछ समय के लिये धारण करता है। सबेलियुस के कुछ अनुयायियों ने ऐसा सिखाया कि पुराने नियम का समय पिता युग था, नये नियम का समय पुत्र का युग था, और मसीही मण्डली का समय आत्मा का युग है।

दूसरी भ्रान्त शिक्षा, जिसका 'निवारण करना मसीही मण्डली ने अत्यन्त आवश्यक समझा , आरियुस की थी। उसने परमेश्वर पिता को ऐसा अत्यन्त महान समझा कि उसके साथ और उसके बराबर किसी दूसरे के लिये स्थान नहीं हो सकता है। उसने सिखाया कि पुत्र पिता के समान अनादि से नहीं है, परन्तु वह जगत् की सृष्टि से पहिले पिता से उत्पन्न हुआ। वह पिता के अस्तित्व में सम्भागी नहीं है, परन्तु उसका पद और उसका आदर पिता से न्यूनतर है।

आरियुस और उसके साथियों का कड़ा विरोध अथनासियुस द्वारा हुआ। अथनासियुस ने कोई नयी शिक्षा नहीं निकाली किन्तु दृढ़ता के साथ बार बार दुहराया कि पिता और पुत्र का एक ही ऊसिया है। उनकी ऊसिया केवल एक दूसरे के सदृश नहीं, परन्तु एक ही है। निकेआ की महासभा (325) ने अथनासियुस के पक्ष का समर्थन किया । उस सभा द्वारा प्रकाशित विश्वास वचन में यह विश्वास स्पष्ट किया गया कि पुत्र ''पिता की ऊसिया से है'', और कि पिता और पुत्र की एक ही ऊसिया है।

इसके द्वारा यह विश्वास स्थिर किया गया कि पिता और पुत्र (और अनुमान से पवित्रात्मा) मूल में एक ही हैं, किन्तु न तो अथनासियुस न निकेआ की महासभा ने उनकी विभिन्नता की पर्याप्त परिभाषा की थी। अथनासियुस ने कभी ऐसा विचार व्यक्त किया कि पिता , पुत्र , और पवित्रात्मा कि एक ही हुपास्टसिस है, और कभी यह विचार कि तीनों की पृथक पृथक हुपास्टसिस है। कप्पदुकिया के तीन महान आचार्यों, अर्थात, वासिल, निस्सा के ग्रेगोरी, और नाजियांजुस के ग्रेगोरी, का बड़ा उपकार यह हुआ कि उन्होंने इस बात को स्पष्ट किया। उन्होंने सिखाया कि ''तीन हुपास्टसिस में एक ही ऊसिया है।'' हुपास्टसिस की परिभाषा वासिल ने इस प्रकार से की कि ''वह 'ऊसिया ' के समान ऐसा अपरिमित सत्य नहीं जो सर्वसामान्य होने के कारण असीम रहता है, किन्तु ऐसा सत्य है जो कुछ विशेष उपाधियों के कारण परिमित और व्यक्तिगत होता है।'' इस निर्णय को कलसीडन की महासभा (451) ने मान्यता दी।

ऊपर के प्रकरणों में हम ने दो यूनानी शब्दों का प्रयोग किया, अर्थात ऊसिया और हुपास्टसिस। यहां प्रश्न किया जा सकता है कि इन शब्दों का अनुवाद किस प्रकार से किया जाए। लाटीनो में ऊसिया का अनुवाद या तो ''Essentia'' या ''Substantia'' किया गया। इन में से ''Essentia'' वास्तव में अधिक उपयुक्त है, और सन्त अगस्तीन ने उसका प्रयोग किया , परन्तु अधिकांश ''Subtantia'' का प्रयोग हुआ। हुपास्टसिस का अनुवाद ''Persona'' किया गया । लाटीनी भाषा के उपयोग में ''Persona'' प्रारम्भ में वह नकाव था जो कोई अभिनेता पहिनता था जब वह कोई वेष धारण करना चाहता था । इससे उसका अर्थ ऐसा वेष हुआ जो कोई व्यक्ति किसी भी अभिप्राय से धारण करता हो। उसका अर्थ पृथक व्यक्तित्व कभी नहीं हुआ। त्रिएकत्व के सिद्धान्त के सम्बन्ध में उसका अर्थ पिता , पुत्र , और पवित्रात्मा की वह अंशमात्र विभिन्नता हुआ जो उन में हैं, यद्यपि वे मूल में एक ही हैं। अंग्रेजी में इनका अनुवाद साधारण रीति से ''Substance''और '' Person'' किया जाता है। ''Substance '' के स्थान में '' Essence'' अधिक उपयुक्त होता है । ''Person'' का अर्थ सदा उस रुप में समझना चाहिये जो ऊपर लाटीनी के विषय में बताया गया। हिन्दी में इनका अनुवाद किस प्रकार से किया जाए ? ऊसिया के लिये ''सत्य '' शब्द अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। भारतवर्ष में इसका प्रयोग वेदों के समय से लेकर आज तक अनादि, अपरिमित अस्तित्व के अर्थ से हुआ। बहुधा इसका प्रयोग परमेश्वर के लिये हुआ। महात्मा गान्धी ने उसको इस प्रकार से प्रयुक्त किया। हुपास्टसिस के लिये कोई उपयुक्त शब्द पाना कठिन है; क्योंकि भारतवर्ष की विचार परम्परा में जीवित व्यक्तित्व या पुरुषत्व का विचार अधिक स्पष्ट नहीं हुआ है। वह बहुधा कुछ न कुछ मायायुक्त प्रतीत होता है। ''तत्व'' शब्द का प्रयोग उस अस्तित्व के लिये हो सकता है जो कुछ अंश तक परिमित है, परन्तु वह निर्जीव सा मालूम होता है। पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा तीनों जीवित और क्रियाशील हैं । कदाचित् यह कुछ मात्रा तक उपयुक्त होगा यदि हम ''व्यक्तित्व '' कहें । यहॉ हम ''सत्य'' और ''व्यक्तित्व'' कहें। यहॉ हम ''सत्य'' और ''व्यक्तित्व'' का प्रयोग करेंगे ।

सन्त अगस्तीन ने सिखाया कि परमेश्वर ''परम सत्य'' है, जिसमें तीन ऐसे व्यक्तित्व हैं जो अनादि से सनातन तक एक दूसरे से विभिन्न है। उसने यह भी सिखाया कि प्रत्येक व्यक्तित्व में परमेश्वर सम्पूर्ण रीति से उपस्थित है और कार्य करता है।

कभी इस गूढ़ विषय को अधिक स्पष्ट करने के लिये त्रिएकत्व की कुछ उपमाएॅ दी गई है। निस्ता के ग्रेगरी ने सिखाया कि जिस प्रकार से मनुष्य में आत्मा है, वाक् है, व्यक्तित्व भी है जिस पर ये दोनों आधारित है, और ये तीनों अलग है तथापि मनुष्य एक ही है, उसके सदृश पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा अलग हैं और साथ ही एक हैं। तरतल्लियन ने सिखाया कि जैसे जड़,. वृक्ष , और उसके फल एक दूसरे से अलग हैं परन्तु एक ही वृक्ष है, तथा जैसे सूर्य , उसकी किरणें और उसका प्रकाश एक दूसरे से पृथक् हैं और फिर भी एक हैं, वैसे ही पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा पृथक् और साथ ही एक हैं। सन्त अगस्तीन ने , इस अभिप्राय से कि परमेश्वर का स्वभाव मूल में प्रेम है, और यह जान कर कि प्रेम एक व्यक्तिगत सम्बन्ध है, प्रेम की उपमा दी। प्रेम रखनेवाला अलग है, प्रेम का पात्र अलग है, और प्रेम स्वयं अलग है, तौभी प्रेम का सम्बन्ध मूल में एक

Creation Autonomous Academy

ही है। कुछ न कुछ इस प्रकार से पिता, पुत्र, और पवित्रात्मा का पारस्परिक सम्बन्ध है। ये सब उपमाएं केवल कुछ मात्रा तक उपयुक्त हैं क्योंकि परमेश्वर अनुपम है और उसकी तुलना किसी वस्तु से नहीं की जा सकती है। वह हमारी सारी कल्पनाओं से परे है इसलिए त्रियेकत्व का विषय रहस्यमय विषय रहता है।

त्रियेकत्व के सिद्धांत का सबसे विकसित रुप उस विश्वास वचन में पाया जाता है जो अथनासियुस का विश्वास वचन कहलाता है। इसमें निम्न महत्वपूर्ण वाक्य यहां दिए जा सकते हैं, जैसे वे 'साधारण प्रार्थना' की पुस्तक में पाए जाते हैं। इसमें ध्यान देना चाहिए कि हुपास्टसिस का अनुवाद 'पुरुष' से किया गया है।

'कैथोलिक विश्वास तो यह है कि हम त्रय में एक ईश्वर की और एक में त्रय की आराधना करें।

'क्योंकि पिता भिन्न पुरुष है, पुत्र भिन्न पुरुष है, पवित्र आत्मा भिन्न पुरुष है, परन्तु पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा मिल के एक ही ईश्वर हैं; उनकी महिमा तुल्य, उनका प्रताप तुल्य रीति से सनातन है।''

'' पिता असृष्ट, पुत्र असृष्ट, पवित्रात्मा असृष्ट है। पिता असीम, पुत्र असीम, पवित्रात्मा असीम है। पिता सनातन, पुत्र सनातन, पवित्रात्मा सनातन है।''

ऐसे ही पिता ईश्वर, पुत्र ईश्वर, पवित्रात्मा ईश्वर है; तिस पर भी तीन ईश्वर नहीं , परन्तु एक ही ईश्वर है। ऐसे ही पिता प्रभु , पुत्र प्रभु, और पवित्रात्मा प्रभु है; तिस पर भी तीन प्रभु नहीं , परन्तु एक ही प्रभु है।''

''पिता किसी से कृत नहीं हुआ, न सृष्ट , न जनित। पुत्र केवल पिता ही से है, न सृष्ट, परन्तु जनित । पवित्रात्मा पिता और पुत्र से है, न कृत, न सृष्ट , न जनित। परन्तु निकलता है।

''सो तीन पिता नहीं, परन्तु एक ही पिता है; तीन पुत्र नही परन्तु एक ही पुत्र है; तीन पवित्रात्मा नहीं, परन्तु एक ही पवित्रात्मा है। और त्रय में आगे पीछे कुछ नहीं, छोटा बड़ा कुछ नहीं; परन्तु सम्पूर्ण तीनों पुरूष आपस में एक दूसरे की नाई सनातन, और एक दूसरे के तुल्य हैं; ऐसा कि सव बातों में, जैसा कि ऊपर कहा गया है, त्रय में एक की और एक में त्रय की आराधना करना चाहिए।''

इस प्रकार मसीही मण्डली ने त्रिएक परमेश्वर -पर अपना विश्वास व्यक्त करने का प्रयत्न किया। इन वाक्यों ही को सीखने से कोई विशेष लाभ नहीं होता । यह कोई ऐसा ज्ञान नहीं जिसे हम बाहरी रीति से सीख सकें। जब वह हमारी आत्मा ही में अंकित किया जाए तब हम उसे सीख सकेंगे। जब हम प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर पिता को जानते हैं। जब हम मसीह के क्रूस के निकट आकर उसके उद्धार करने वाले अनुग्रह के पात्र होते हैं, और जब हम पवित्रात्मा के जीवित प्रभाव के द्वारा पुराने जीवन के वन्धनों से छुटकारा पाकर ऐसे नवीन जीवन में प्रविष्ट हुए हैं जो नित्य परमेश्वर की पवित्र संगति में व्यतीत किया जाए, तब वास्तव में हम त्रिएक परमेश्वर को जानेंगे । इस प्रकार के ज्ञान में हमारा परम कल्याण है।

5-भारतवर्ष में त्रिएक परमेश्वर के विश्वास का महत्व-

इस अध्याय के आरम्भ में हम ने देख लिया कि मुसलमान त्रिएक परमेश्वर के विश्वास पर कैसा आक्षेप करता हैं। हमने यह भी देखा कि ''एक '' शब्द का अर्थ कई प्रकार से समझा जा सकता है। अन्त में

हम मुसलमान को क्या उत्तर दें ? सबसे पहले हम यह कहेंगें कि हम भी मुसलमान के साथ दृढ़ता -पूर्वक मान लेते हैं कि परमेश्वर एक ही है, कि उसको छोड़ और कोई ईश्वर है नहीं । इसके साथ ही हम कहेंगे कि त्रिएकत्व के विश्वास से परमेश्वर की एकता भंग नहीं की जाती है। अनेक उदाहरणों द्वारा यह स्पष्ट हुआ है कि प्रकृति में, मानव का व्यक्तिगत अनुभव हुआ जिन्होंने पवित्रात्मा के प्रकाशन द्वारा परमेश्वर पिता को प्रभु यीशु में जानना सीख लिया था। इस समस्या को हल करने के लिये किसी ऐसे सिद्धान्त का निरुपण करना पड़ा जिस में बाइबल में प्रकाशित सब मूल तथ्यों का समावेश हो सके तथा जो विश्वासियों के अनुभव की सब आवश्यक बातों का संरक्षण करे ।

यह सिद्धान्त नये नियम में नहीं मिलता 'किन्तु जिन तथ्यों और जिस अनुभव पर वह आधारित है वे नये नियम में सुस्पष्ट हैं। प्राचीन मसीही मण्डली के अध्यात्मवेत्ताओं को ऐसे शब्दों और ऐसे वाक्यों को ढूँढ़ना पड़ा जिनके द्वारा ये मूल बातें योग्य रीति से संगठित और प्रकाशित की जा सकें । इस प्रयत्न में उनकी शिक्षाओं ने कभी बहुत गूढ़ और कठिन रुप को धारण किया, परन्तु यह उनके लिये दोष की बात नहीं है। प्रश्न यह था कि क्या मानव बुद्धि और मानव भाषा में इस रहस्यमय विषय को प्रकाशित करने की योग्यता है अथवा नहीं। उन्होंने यथाशक्ति उसे प्रकाशित करने का प्रयास किया। उनका यह प्रयास अत्यन्त आवश्यक हुआ और वह हमारे लिये भी लाभदायक है। वह उनके लिये इसलिये आवश्यक हुआ कि वे एकेश्वरवादी थे और साथ ही मसीही विश्वासी थे। उन्हें ज्ञात हुआ कि यदि वे उचित सिद्धान्त का निरुपण करने में असफल होते तो मसीही साक्षी स्वयं की हानि होती। यदि वे परमेश्वर पिता , पुत्र, और पवित्रात्मा के विषय का सम्पूर्ण सत्य संगठित करने में असमर्थ होते तो भय यह होता कि मसीही अपने विश्वास का कोई न कोई आवश्यक अंग त्याग न दें । इसलिये कि उन्होंने इस विश्वास के किसी अंग को न त्यागा और सब सम्बन्धित कठिनाइयों का सामना किया उन्होंने ऐसा कार्य किया जिससे मसीही मण्डली को आज तक अत्यन्त लाभ हुआ है। उनके इस कार्य से हम और अधिक स्पष्ट और उचित रीति से समझ सकते हैं कि जिस परमेश्वर ने अपने को प्रभु यीशु मसीह में तथा मसीही विश्वासियों के अनुभव में प्रकट किया वह वास्तव में कैसा है।

जो मनुष्य इस प्रकार का विश्वास रखते थे, उन्हें प्रभु यीशु के विषय में क्या समझाना चाहिये था ? उनके लिये यह निश्चित बात थी कि उसने स्त्री से जन्म लिया , वास्तविक मनुष्य का जीवन व्यतीत किया , वास्तविक मनुष्य की मृत्यु सही । इसके बराबर निश्चित बात यह थी कि वह मृत्यु से जी उठा था। उसके जीवन , उसके कार्य, और विशेष कर उसके जी उठने के आधार पर उन्हें मानना पड़ा कि सच्चा मनुष्य होकर भी वह साथ ही वास्तव में ईश्वरीय व्यक्ति है। वह सत्य मनुष्य है, और साथ ही सत्य परमेश्वर भी है। वह न केवल परमेश्वर का कोई अंश या शक्ति है, और ऐसा रुप भी नहीं है जिसे परमेश्वर ने थोड़े समय के लिये धारण किया। वह वास्तविक रीति से स्वयं परमेश्वर है।

जो मनुष्य एक ही परमेश्वर को मानते थे , उनके लिए ये बातें एक बहुत कठिन समस्या प्रस्तुत करती थीं। पिन्तेकुस्त के पश्चात् उनकी कठिनाई और अधिक बढ़ गई । जब वे पिन्तेकुस्त के अनुभव पर विचार करते थे और पिन्तेकुस्त के समय दी गई शक्ति के द्वारा अपना नवीन जीवन व्यतीत करने तथा अपने

Creation Autonomous Academy

नवीन कार्य को करने लगे तब उन्हें निश्वय हुआ कि इस आत्मा में भी सच्चे परमेश्वर का प्रकाशन है, और प्रभु यीशु के समान, आत्मा भी न केवल परमेश्वर का कोई अंश या शक्ति है, और ऐसा रुप भी नहीं है जिसे उसने थोड़े समय के लिये धारण किया , किन्तु वह परमेश्वर ही है।

इस प्रकार से वह समस्या उनके लिये उपस्थित हुई जिसे हल करने के लिये त्रिएकत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन करना आवश्यक हुआ । यह समस्या हमारे लिये भी उपस्थित है। पिता परमेश्वर है, यीशु मसीह परमेश्वर है, पवित्रात्मा परमेश्वर है। वे एक दूसरे से विभिन्न है, तौभी परमेश्वर एक ही है। उनका पृथक पृथक अस्तित्व नहीं है, उनका मूल में एक अस्तित्व है। वे केवल परमेश्वर के विभिन्न अंश या शक्तियॉ नहीं हैं, क्योंकि वे सब सच्ची रीति में पूर्णतया परमेश्वर है। यह कोई कल्पना की बात नहीं थी ।

बाइबल के अनुसार और मसीही अनुभव के अनुसार परमेश्वर का प्रकाशन त्रिएकात्मक है। परमेश्वर का यह स्वयं प्रकाशन तीन महान कार्यो के द्वारा हुआ । सब से पहले उसने अनुग्रह करके पतित मानव जाति का उद्धार करने का अभिप्राय किया । इस अभिप्राय से उसने इस्राएल को चुन लिया (व्य० वि० 7:6,7 उत्प०12; निर्ग० 24:1-11) तथा उसकी रक्षा की (होशे 11:1; यशा० 40:1-11) उसने इस्राएल को इसलिये चुन लिया कि उसके द्वारा सब जातियों का उद्धार हो (यशा० 49:5,6)। उसने ऐसी प्रतिज्ञा की कि उस जाति में से सब जातियों का उद्धारकर्ता निकलेगा (यशा० 11) । परमेश्वर का दूसरा महान कार्य यह था कि उचित समय पर उसने मनुष्यों के उद्धार के लिये अपने पुत्र को संसार में भेजा (लुका 2:2; यूह० 3:17; गल० 4:4,5)। मसीह में होकर वह मनुष्यों को अपने से मिला लेता था (2 कुरि० 5:18,19)। मसीह के द्वारा मनुष्य अपने पापों से छुटकारा पाकर परमेश्वर की संगति में आकर यहां नित्य काल तक रह सकता है (तीतुस 3:4-6)। परमेश्वर का तीसरा महान कार्य यह था कि उसने प्रथम मसीही विश्वासियों को अपना पवित्र, शक्तिशाली आत्मा दे दिया ,और उसे आज तक अपने लोगों को देता रहता है। यह आत्मा विश्वासियों में वास करता है (1 कुरि० 3:16), और उनकी सहायता करता है (यूह० 14:16)। वह सारे सत्य में उसकी अगुवाई करता है (यूह० 14:26, 15:26; 16:13), और उन्हें परमेश्वर के पुत्र बना देता है (गला० 4:6; रोमि० 8:14)।

इसके समान मसीही अनुभव भी त्रिएकात्मक है। विश्वासी उस परमेश्वर को जानता है जो उसके ऊपर अत्यन्त महान है (यशा० 55:8,9), जिनका शब्द शक्तिशाली है (उत्प० 1:3), और जिसकी आज्ञाओं के विषय में विवाद नहीं हो सकता (उत्प० 20:1-17; 12:1; यशा० 6:9)। साथ ही विश्वासी का यह अनुभव है कि मसीह में परमेश्वर हमारे साथ है । मसीह मनुष्य का रुप धारण कर मनुष्यों के जीवन में सम्भागी हुआ (फिलि ० 2:5-8 ; इब्रा० 2:14 ; यूह० 1:14)। इस अभिप्राय से उसका नाम ‘‘इम्मानुएल ’’ रखा गया (यशा० 7:14 मत्ती 1:23)। मसीह के साथ विश्वासी का सम्बन्ध इतना घनिष्ठ है कि जिस प्रकार से डाली वृक्ष में या लता में बनी रहती है उस प्रकार से विश्वासी मसीह में रहता है (यूह० 15:1-7)। वह मसीह की देह का अंग है (1 कुरि० 12:22-26)। वह मसीह के द्वारा लेपालक पुत्र के रुप में परमेश्वर

Creation Autonomous Academy

पिता के घराने में ग्रहण किया जाता है (कुल० 1:13; 1 यूह० 3:1,2; गल० 3:26; 4:5)। इसके अतिरिक्त विश्वासी यह भी जानता है कि परमेश्वर आत्मा के रुप में उसमें रहता है (रोम० 8:11; 2 कुरि० 1:22; गल० 4:6)। वह परमेश्वर का मन्दिर है , जिस में परमेश्वर आत्मा होकर वास करता है (1 कुरि० 3:16) इस त्रिविध रीति से विश्वासी परमेश्वर का अनुभव करता है ।

परमेश्वर अपने स्वयं -प्रकाशन में तथा अपने मुख्य कार्यो में अपने को त्रिएक प्रकट करता है, परन्तु प्रश्न यहां पर उपस्थित होता है कि क्या यह एक ही परमेश्वर अपने को केवल मनुष्यों पर तीन प्रकार से प्रकाशित करता है तथा तीन मुख्य प्रकार से अपना कार्य करता है अथवा वह आदि से सनातन तक स्वयं त्रिएकात्मक है। क्या उसमें ऐसे नित्यस्थायी भेद हैं जिनके कारण हम कह सकते हैं कि वह अपने ही में त्रिएक परमेश्वर है ? प्राचीन मण्डली के विश्वासी इस निर्णय तक पहुॅचे कि वह अपने में त्रिएक है। सब से पहले उन्होंने यह निर्णय नये नियम के आधार पर किया । प्रभु यीशु ने स्वयं अपने शिष्यों पर प्रकट किया कि वही सृष्टि से पहले पिता के साथ था (यूह० 17:5-24)। नये नियम के अन्य स्थल इसका समर्थन करते है , जैसे यूह० 1:1-3; कुल० 1:15-17। इसके साथ बाइबल का स्पष्ट प्रकाशन है कि परमेश्वर जीवित व्यक्ति है। वह ऐसा व्यक्ति है जिसका स्वभाव प्रेम ही है (यूह० 4:8)। प्रेम न केवल एक गुण है किन्तु एक सम्बन्ध है । यदि परमेश्वर का स्वभाव नित्य प्रेम है तो वह किसके साथ प्रेम के सम्बन्ध में रहें ?

परमेश्वर पिता में परमेश्वर परिपूर्णता है, प्रभु यीशु मसीह में परमेश्वर की परिपुर्णता है , और पवित्रात्मा में परमेश्वर की परिपूर्णता है । ये तीनों विभिन्न हैं , तौभी एक हैं । सैद्धान्तिक रुप में यह रहस्य है, परन्तु विश्वासी के अनुभव में यह ऐसे विश्वास का आाधार है जो मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की सब बातों के लिये पर्याप्त है। बाइबल इस विश्वास को सिखाती है , मसीही अनुभव गवाही देता है कि वह सत्य है , वह मसीही मण्डली की आराधना में व्यक्त किया जाता है । यह विश्वास इस जीवन को सार्थक और आशायुक्त बना देता है तथा इस जीवन के परे की अन्तिम सिद्धता की जीवित आशा दिलाता है ।

Creation Autonomous Academy

अध्याय-9

उद्धार

(Salvation)

(रोमियों की पत्री)

1-पौलुस स्वयं अपना और अपने उद्देश्य का परिचय देता है (1:1-15) :-

उस समय की प्रथा को ध्यान में रखते पौलुस अपने पत्र के प्रारम्भ में स्वयं का परिचय देता है । वह परमेश्वर का दास और प्रेरित है जो सुसमाचार प्रचार करने के लिये बुलाया गया, अर्थात् यह शुभ समाचार कि पापी मनुष्य आशाहीन स्थिति से छुटकारा प्राप्त कर सकता है और वापस परमेश्वर के साथ संगति का जीवन व्यतीत कर सकता है । यह सुसमाचार जिसका पौलुस प्रचार करता था पुराना -नियम के शास्त्रों में प्रतिज्ञात था और यह यीशु मसीह में पूर्ण हुआ जो मानव शरीर के अनुसार तो राजा दाऊद का वंशज था, परन्तु परमेश्वर के अनुसार परमेश्वर का पुत्र था । यह बाद का तथ्य बड़ी स्पष्टता और सामर्थ्य से उसके पुनरुत्थान द्वारा प्रकट हुआ (1:1-4)। यह वह मसीह है जिसने पौलुस को सारे लोगों तक सुसमाचार पहुंचाने का उत्तरदायित्व सौंपा, इसमें रोम में रहने वाले लोग भी सम्मिलित हैं जिसको वह यह पत्र लिखता है (5-7)।

रोमी मसीहियों का विश्वास सभी जगह के लोगों को अच्छी तरह मालूम था (8)। पौलुस न केवल उनके लिए प्रार्थना करता है परन्तु वह उनसे भेंट करने की इच्छा भी प्रकट करता है, ताकि वह और वे, रोमवासी दोनों ही आशीषित हों (9-12)। अभी तक वह उनसे भेंट करने नहीं जा पाया था । इसका कारण यह भी नहीं था कि वह चाहता नहीं था। परन्तु इसके विपरीत अनेकों बार उसने उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की, क्योंकि वह सभी लोगों में सुसमाचार प्रचार करने के लिए अपने को भारी कर्जदार मानता था, इसमें रोम में रहने वाले लोग भी सम्मिलित थे (13-15)। इस सुसमाचार के द्वारा पापी मनुष्यों का परमेश्वर के साथ संबंध ठीक हो सकता है। परमेश्वर अपनी दृष्टि में पापियों को धर्मी बना सकता है, और पापी यह धार्मिकता विश्वास के द्वारा ग्रहण करता है (16-17)।

2-मानव जाति की पापमय स्थिति (1:18-3:20) :-

गैरयहूदी संसार (1:18-32)

पाप के विरुद्ध परमेश्वर के क्रोध के कारण, अधर्मी मनुष्य दण्डित किए जाएंगे । वे यह कहकर कि वे परमेश्वर के विषय में नहीं जानते बच नहीं पाएंगे , क्योंकि सारी सृष्टि जिसे वे देखते हैं दृढ़ता से बताती है कि इसका एक सृष्टिकर्ता है जिसकी उन्हें आराधना करनी चाहिए और जिसके प्रति उन्हें कृतज्ञ होना चाहिए

। परन्तु इसके विपरीत , उन्होंने सृष्टिकर्ता के विमुख होकर सृष्टि की वस्तुओं को अपनी मूर्तियां बना लिया (18-23)। चूंकि इन वस्तुओं में जिनकी वे उपासना करते हैं कोई जीवन नहीं है, इसलिए बिना किसी दण्ड के भय के सभी प्रकार के पापों को करने के लिए वे अपने आप को स्वतंत्र समझते हैं। इसलिए परमेश्वर ने उन्हें छोड़ दिया । इसका परिणाम यह हुआ कि वह अनैतिकता में अधिक से अधिक फंसते चले गए, स्त्री और पुरुष दोनों ही (24-27)। इसके शर्मनाक व्यवहार ने उनके जीवनों में बुराई की शक्ति को इतना बढ़ा दिया कि वे ऐसी ही बुराइयों के लिये दूसरों को उत्साहित करने में अधिक आनन्द अनुभव करते हैं (28-32)।

यहूदी (2:1-3:8)

न केवल मूर्तिपूजक गैरयहूदी ही परमेश्वर के दण्ड की आज्ञा के अधीन है, परन्तु यहूदी भी हैं। यहूदी अपने पडोसी गैरयहूदियों में दोष ढूंढते हैं, इसके बावजूद वे स्वयं वही बुराइयों को करते हैं (2:1)। वे सोचते हैं कि चूंकि उन्हें तत्काल दण्डित नहीं किया गया, इसीलिए उन्हें फिर कभी दण्ड नहीं मिलेगा। वे इस बात को अनुभव नहीं करते कि परमेश्वर वास्तव में उन्हें पश्चाताप करने का मौका दे रहा है (2-4)। जितना अधिक वे पाप करेंगे, उतनी ही कठोरता से उनका न्याय भी किया जाएगा, क्योंकि सभी जैसा करते हैं उसी के अनुसार उनका न्याय होता है चाहे यहूदी हो या नहीं (5-11)।

यहूदियों का जिनको मूसा की व्यवस्था दी गई थी, न्याय उसी व्यवस्था के अनुसार होगा। गैरयहूदियों का जिनको कोई व्यवस्था नहीं दी गई थी, का न्याय उनके स्वयं के विवेक के अनुसार होगा जो उन्हें बताता है कि क्या सही क्या गलत है (12-16)।

यहूदियों को उन आशिषों के विषय में घमण्ड था जो परमेश्वर के लोग होने के कारण उन्हें मिली थी, और उन्होंने सोचा कि व्यवस्था के अन्तर्गत उन्हें शिक्षा मिलने के कारण वे दूसरों को शिक्षा दे सकते हैं (17-20)। फिर भी, उन्होंने उन बातों को व्यवहार में नहीं लाया जिसे उन्होंने दूसरों को सिखाया था, और इसलिए परमेश्वर के नाम पर एक धब्बा थे (21-24)। यहूदियों को यह याद दिलाया गया है कि जिन धार्मिक रीतियों का वे पालन करते हैं, उसका कोई मूल्य नहीं है यदि उनका जीवन उस धार्मिक रीति के अर्थ के अनुसार नहीं है। खतना इस्राइल को एक चिन्ह के रुप में दिया गया था, जो स्वच्छता और पवित्रता के विषय में बताता है; परन्तु एक खतनारहित व्यक्ति जिसका जीवन शुद्ध है परमेश्वर को ज्यादा ग्रहणयोग्य होगा, बनिस्बत एक खतना किए हुए व्यक्ति के जिसका जीवन अशुद्ध है (25-27)। सच्चे यहूदी परमेश्वर के सच्चे जन, वे लोग नहीं है जो खतना को स्वीकार किया, परन्तु वे है जिनके हृदय शुद्ध है (28-29)।

सम्भवतः कई यहूदी पौलूस से विवाद करते कि यदि जो कुछ उसने कहा था सही है तो क्यों परमेश्वर ने इस्राएल को अपने लोगों के रुप में चुना ताकि वह उनके द्वारा स्वयं मनुष्यों तक यहूदियों द्वारा ही आए। यह एक दुःखद सच्चाई है कि इन चुने हुए लोगों में से बहुत से लोग परमेश्वर के प्रति अविश्वासयोग्य सिद्ध

Creation Autonomous Academy

हुए परन्तु वह अभी भी उनको बचाने के लिए तैयार है। वास्तव में उनकी अविश्वासयोग्यता यही दर्शाती है फिर भी, कुछ लोग हैं जो यह विवाद करते हैं कि यदि उनके अविश्वास ने परमेश्वर का न्याय और विश्वासयोग्यता को और अधिक सफाई से दर्शाया है तो यह अन्यायी है (5)। पौलुस कहता है निश्चय ही नहीं। यदि ऐसा होता तो न्याय का स्तर कभी होता ही नहीं। परमेश्वर संसार का कभी न्याय ही नहीं कर पाता (6)। पौलूस उत्तर देता है कि यदि यहूदी इस प्रकार वाद -विवाद करते हैं तो वे, जो कुछ वह सिखाता है उसके कारण क्यों उस पर पापी होने का दोष लगाते हैं? इसी प्रकार उनके वाद -विवाद के अनुसार पौलुस का 'पाप' भी परमेश्वर की महिमा को प्रकट करने में सहायक होगा (7)!अन्त में यह तर्क किसी को बुरे विश्वास की ओर बढ़ा सकता है कि बुराई करना भले परिणाम पाने के लिए अच्छा है (8)।

सारी मानव जाति (3:9-20)

अतः निष्कर्ष यह निकलता है कि सम्पूर्ण मानव जाति पाप के शक्ति के अधीन है, और यह मनुष्य के प्रत्येक भाग को प्रभावित करता है (9-18)। परमेश्वर ने यहूदियों को सम्पूर्ण मानव जाति के लिए उदाहरण स्वरुप चुना और उन्हें अपनी व्यवस्था देकर परखा। परन्तु वे व्यवस्था के अनुसार जो परमेश्वर ने उन्हें दी और वे दोषी ठहरे थे। चुंकि उदाहरण दोषी पाया गया था इसलिए सम्पूर्ण मानव जाति दोषी ठहराई गई थी। वास्तव में, व्यवस्था मनुष्य के दोष प्रकट करने के आलावा और कुछ नहीं कर सकती। किसी व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं है कि व्यवस्था की आज्ञाओं को मानकर परमेश्वर की दृष्टि में सही या धर्मी ठहरे (19,20)।

3-"विश्वास द्वारा धर्मी ठहराया जाना" से सम्बन्धित स्पष्टीकरण

3:20 तक पौलूस पाप के विषय बता रहा था, यह दर्शाने के लिए कि सभी मनुष्य पापमय दोषी और परमेश्वर के दण्ड की आज्ञा के अधीन हैं। 3:21 से 5:21 तक वह उद्धार को समझाता है जिसे परमेश्वर ने मनुष्य को प्रभु यीशु मसीह द्वारा दिया, और जो विश्वास के द्वारा ग्रहण किया है। इस उद्धार की रुपरेखा के साथ ही, पौलुस द्वारा शब्दों और वाक्याशों का स्पष्टीकरण, इस भाग को अच्छी तरह समझने में सहायक होगा।

Creation Autonomous Academy

यह सही है कि परमेश्वर मनुष्य को प्रेम करता है और उन्हें क्षमा करना चाहता है, परन्तु प्रेम ही एक मात्र आधार नहीं है जिस पर परमेश्वर कार्य करता है। उसे न्याय अनुसार कार्य करना भी अवश्य है। उदाहरण के लिए, माना एक व्यक्ति क्रूरता से एक हत्या करता है गिरफ्तार किया जाता है उस पर मुकदमा चलता है और दोषी पाया जाता है, परन्तु न्यायधीश ने कहा, " हो सकता है तुमने एक भयानक काम किया है, परन्तु मैं तुम्हें बहुत प्रेम करता हूँ, इसलिए मैं तुम्हें क्षमा कर दूंगा। तुम स्वतंत्रता से जा सकते हो।" एक ऐसा न्यायधीश कभी भी मनुष्यों का आदर नहीं पा सकता। उसके पास प्रेम दया, कृपा हो सकती है परन्तु

उसके पास कोई नैतिक न्याय नहीं है। परमेश्वर प्रेम है और पापियों को क्षमा करना चाहता है; परन्तु साथ ही साथ वह न्यायी पवित्र और धर्मी है, और पाप की अवहेलना ऐसे नहीं कर सकता मानो इसका कोई महत्व ही न हो ।

इसलिए यदि परमेश्वर को क्षमा करना ही है, तो यह तभी हो सकता है, जब कि वह इस विषय में धार्मिक और न्यायोचित रुप से कार्य करे। यह कैसे हो सकता है? परमेश्वर ने क्रूस पर मसीह की मृत्यु में पापों की सजा स्वयं अपने ऊपर लेकर इस समस्या का समाधान कर दिया । प्रभु यीशु दोषी मनुष्यों के स्थान पर या उनके स्थानापन्न के रुप में मरा। वह पूर्णतया और पूरा -पूरा मनुष्य है पूरी तरह मनुष्य जाति के एक सदस्य की तरह जैसे हम हैं; परन्तु इसलिए क्योंकि वह पूर्णतः निष्पाप मसीह पाप से अज्ञात था, उसने कोई पाप नहीं किया।, उसके स्वभाव में पाप नहीं है । जब यीशु मरा, परमेश्वर ने इस व्यक्ति को जो पाप में अज्ञात था हमारे लिए पाप ठहराया, ताकि हम उसमें होकर परमेश्वर हमारे पाप को, जैसा यह था लेता है और इसे मसीह पर डाल देता है (2 कुरि० 5:21)। इस प्रकार पाप को दण्डित हुआ देखकर परमेश्वर का न्याय संन्तुष्ट है, इसलिए पाप की क्षमा को देखते हुए उसका प्रेम और दया प्रवाहित हो सकती है।

धर्मी ठहराया जाना (justification)

धर्मी ठहराया जाने का अर्थ है कि परमेश्वर अपनी दृष्टि में पश्चाताप करने वाले पापी को धर्मी घोषित करता है। वह पापी को अपने से मेल - मिलाप करने वाला बना देता है। पापी को धर्मी इस अर्थ में नहीं बना दिया है कि वह सिद्ध मनुष्य बन जाता है जो फिर पाप कर ही नहीं सकता। निश्चय ही उसका जीवन ऐसा बदल जाएगा कि पाप नहीं, धार्मिकता उसका गुण बन जाता है। परन्तु धर्मी ठहराये जाने में इस सत्य पर बल दिया गया है। कि पश्चाताप करने वाला पापी धर्मी घोषित कर दिया गया है। उसे एक धार्मिकता दी गई है जो कि स्वयं उसकी नहीं है -मसीह की धार्मिकता। परमेश्वर उसे एक धार्मिक स्थिति प्रदान करता है। जो उसे एक पवित्र परमेश्वर की उपस्थिति में रहने योग्य बना देती है। अब परमेश्वर उसे, जैसा वह ‘‘मसीह ’’ है वैसा ही देखता है, और उसे स्वीकार करता है, जो कुछ उसने किया है उसके कारण नहीं, परन्तु जो कुछ अपनी मृत्यु और पुनरुत्थान में मसीह ने उसके लिए किया है उसके कारण।

Creation Autonomous Academy

यीशु ने मनुष्यों के पाप क्रूस पर स्वयं अपने शरीर पर उठाया, ताकि परमेश्वर उसकी धार्मिकता मनुष्यों को दे सके। इस प्रकार परमेश्वर स्वयं न्यायी और धर्मी रहते हुए पापियों को, जिनका प्रभु में विश्वास है निर्दोष ठहरा सकता है (रोमियों 3:21-26)। तब ये दोषमुक्त, धर्मी घोषित किए गए है।

8, 1 यूहन्ना 4:16; 2 पतरस 3:9

9, 2 कुरि० 5:21

10, 1 पतरस 2:22

11, 1 यूहन्ना 3:5

परमेश्वर के न्याय की अदालत में कोई उन्हें पापी के रुप में अपराधी नहीं ठहरा सकता या उनके विरुद्ध दोषारोपण तक नहीं कर सकता, क्योंकि परमेश्वर ने उन्हें निर्दोष ठहराया है। परमेश्वर यह सब अपने अनुग्रह, अपनी कृपादृष्टि के द्वारा करता है, मनुष्य जिसके योग्य नहीं है।
(टिप्पणीः मूल नया -नियम में ‘‘निर्दोष ठहरना’’ (justify)और ‘‘धार्मिक’’ (righteous) ये दो शब्द के दो भाग है।)

धर्मी ठहराया जाना क्षमा से कहीं अधिक है

जब लोग हमारे विरुद्ध अपराध करते हैं तो हम उन्हें क्षमा कर सकते हैं।, परन्तु यह उन्हें धार्मिक घोषित नहीं करता। यह सही है कि परमेश्वर पापी को क्षमा करता है, परन्तु वह इससे भी अधिक करता है। वह मसीह की मृत्यु के कारण उसे धार्मिक घोषित करता है, जबकि वह अभी भी पापी है। क्षमा नकारात्मक है; धर्मी ठहराया जाना स्वीकारात्मक है। क्षमा दण्ड की आज्ञा को दूर करता है; धर्मी ठहराया जाना धार्मिकता प्रदान करता है। क्षमा ऐसी है जिसकी विश्वासियों को हमेशा आवश्यकता रहती है, क्योंकि वह हमेशा पाप करता है; धर्मी ठहराया जाना एक ही बार और अंतिम घोषणा है जब परमेश्वर उसे अपने पुत्रों में स्वीकार करता है।

प्रायश्चित और मेल -मिलाप (propitiation and reconciliation)

जैसा कि हम देख चुके है!, पाप ने मनुष्य को परमेश्वर से अलग कर दिया है, मनुष्य ने पाप द्वारा स्वयं को परमेश्वर का शत्रु बना लिया, उसके साथ सहभागिता रखने या उसे प्रसन्न करने में असमर्थ। परमेश्वर पाप के विरुद्ध हमेशा एक क्रोध की मनोवृति रखता है, और मनुष्य ऐसा कुछ नहीं कर सकता जो परमेश्वर को मना सके (अर्थात् संतुष्ट कर सके, क्रोध शान्त करने या उसकी कृपा पा सके)। आदि यूनानी बलिदान चढ़ा- कर अपने देवताओं का क्रोध शान्त करने का प्रयत्न करते थे; वे अपने देवताओं को मनाने का प्रयत्न करते थे। परन्तु पापमय मनुष्य इस प्रकार परमेश्वर के प्रति कार्य कर ही नहीं सकता। मनुष्य ऐसा कुछ नहीं कर सकता जो पाप के विरुद्ध परमेश्वर के क्रोध को शान्त कर सके या उसकी कृपादृष्टि पा सके। केवज एक ही तरीके से परमेश्वर को मनाया गया है

Creation Autonomous Academy

12, 2 कुरि० 5:21 ,1 पतरस 2:24

13, रोमियों 8:33,34

14, रोमियों 3:24

15, 1 यूहन्ना 1:9

और वह है मसीह की मृत्यु द्वारा, जो ‘‘प्रायश्चित ठहराया’’ गया है (रोमियों 3:25 इब्रानियों 2:17 ; 1 यूहन्ना 2:2! RSV इसे प्रायश्चित (expiation) कहता है; Good News इसे, ‘‘ऐसा उपाय जिसके द्वारा मनुष्यों के पाप क्षमा हो गए हैं’’ कहता है)।

अतः प्रायश्चित का अर्थ है पाप के विरुद्ध परमेश्वर का पवित्र क्रोध मसीह की मृत्यु द्वारा धार्मिकता के रुप से संन्तुष्ट हो चुका है, इसलिए परमेश्वर विश्वास करने वाले पापियों पर दया प्रकट कर सकता है। अतः पापी का परमेश्वर के साथ मेल-मिलाप हो सकता है, अर्थात् शत्रु होने के स्तर से, शान्ति और मित्रता के स्तर तक वापस लाया जाना। विश्वास (Faith)

अभी तक जो कुछ कहा गया है वह सब सम्पूर्ण मानव जाति के लिए स्वयं अपने आप से सही नहीं हो जाता। यह उन्हीं लोगों के लिए सही है जो विश्वास करते हैं। छुटकारा प्रभु यीशु मसीह में है, जिसे परमेश्वर ने उसके लहू के द्वारा एक प्रायश्चित के रुप में दिया जिसे विश्वास द्वारा ग्रहण किया जाना चाहिए (रोमियों 3:25)। अतः विश्वास वह साधन है जिसके द्वारा एक व्यक्ति उद्धार प्राप्त करता है। परन्तु विश्वास है क्या? विश्वास भरोसा है यह एक व्यवहार है जिसके द्वारा एक मनुष्य उद्धार प्राप्त करने के अपने सारे प्रयत्न छोंड़ देता है, चाहे वह कितने ही अच्छे क्यों न हों, और पूरी तरह से मसीह और केवल मसीह में ही अपने पूर्ण उद्धार के लिए भरोसा रखता है। यह स्थिति तथ्य विशेष की सिर्फ बौद्धिक स्वीकृति भर नहीं है (फिर भी विश्वास करने वाले को अच्छी तरह जानना चाहिए कि वह वास्तव में किस में भरोसा कर रहा है), परन्तु एक विश्वास है जिसमें एक मनुष्य अपने सम्पूर्ण हृदय से मसीह से चिपके रहता है। यह विशेष बातों को सिर्फ सही के रुप में स्वीकार करना ही नहीं है, परन्तु एक व्यक्ति, यीशु मसीह, में भरोसा रखता है। उदाहरणार्थ, एक व्यक्ति एक सूचना को जो उसे मिलती है सही के रुप में स्वीकार कर सकता है कि एक शत्रु उसे नाश करने की योजना बना रहा है। वह इस सूचना को बहुत अच्छी तरह से समझ सकता और सच के रुप में इसे मान सकता है, परन्तु यह यकीन प्रतीति विश्वास नहीं है। यह भरोसा नहीं है। वह विश्वास जो बचाता है यीशु मसीह में भरोसा है, जो उसके कार्य को उद्धार का एकमात्र मार्ग मानता है। यह एक मनुष्य को उसके स्वयं से निकालकर उसे मसीह यीशु में रखता है।

16, रोमियों 5:10,11 कुलु० 1:20-22

17, रोमियों 3:22

फिर भी विश्वास स्वयं नहीं बचाता। यह केवल एक साधन है जिसके द्वारा पापी एक उद्धार को स्वीकार करता है जो मसीह देता है। विश्वास कोई ऐसी चीज नहीं जिस पर घमण्ड किया जा सके। विश्वास के उद्देश्य में जो कुछ भी महत्व है, वह स्वयं परमेश्वर है। यदि एक मनुष्य डूबते हुए जहाज में है, और वह अपना जीवन बचाने के लिए एक जीवन -रक्षक नौका में छलांग लगा देता है, तो वह जीवन -रक्षक नौका उसके लिए सब कुछ हो जाएगी। वह भरोसा रखता है कि यह उसे सुरक्षित जगह पहुँचा देगी। जहां तक उसका इससे कूदने के विश्वास का सवाल है, उसमें कोई प्रतिष्ठा नहीं। यह सिर्फ मृत्यु से बच निकलना है। विश्वास प्रयत्न करना नहीं है,परन्तु अपने स्वयं के प्रयत्नों को बन्द कर देता है। यह कार्य करना नहीं है।, परन्तु जो कुछ मसीह कर चुका है उस पर भरोसा रखना है। यह भावना नहीं है, परन्तु परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं को सच के रुप में स्वीकार करना और उनमें भरोसा रखना है।

Creation Autonomous Academy

(टिप्पणीः ''विश्वास'' (Faith)और ''भरोसा'' (Believe) ये दोनों शब्द एक ही यूनानी शब्द के दो अलग-अलग भाग हैं।)

छुटकारा (Redemption)

बाइबल के लिखे जाने के युग में एक दास को उसका मूल्य चुकाकर दासता के बंधन से स्वतंत्र किया जा सकता था, जो बहुधा ''मुक्ति-धन'' (ransom) कहलाता था। यह पूरा कार्य दास का छुटकारा के रुप में जाना जाता था। यह पापी के छुटकारे को स्पष्ट करता है, क्योंकि जो पाप करते हैं, वे पाप के दास हैं। 18 वे पाप के बंधन से एक मूल्य चुका कर छुड़ाए (या बचाए, मुक्त किए) जा सकते हैं। यह मूल्य यीशु मसीह का लहू है (1 पतरस 1:18, 19; इब्रा० 9:12)। 19 उसका जीवन छुटकारे के मूल्य के रुप में दे दिया गया था,20 ताकि पापी पापों की क्षमा प्राप्त कर सकें 21 और इसकी शक्ति से छुड़ाए जा सकें।

(टिप्पणीः नया-नियम की यूनानी भाषा में ये दो शब्द ''छुटकारा (rdeem) और ''मुक्ति-धन'' (ransom) एक ही मूल यूनानी शब्द से संम्बधित है।)

18, यूहन्ना 8:34; रोमियों 3:23; 6:17

19, शब्द ''लहू'' बाइबल में लगभग हमेशा मृत्यु के प्रतीक शब्द के रुप में आया है; देखें उत्पत्ति 9:3-6; 1 राजा 2:32,33, 37; गिनती 35:19,33, 2 शमूएल 23:15-17; प्रेरितों 5:28; रोमियों 5:7-9; कुलु, 1:20,22 प्रका०1:5; 5:9

20, मत्ती 20:28

21, इफिसियों 1:7; कुलु० 1:14

3:1-5:21 विश्वास द्वारा धर्मी ठहराया जाना (उद्धार का मार्ग)

घोषित सिद्धान्त (3:21-31)

Creation Autonomous Academy

परमेश्वर की धार्मिकता पापी की मृत्यु की मांग करती है, परन्तु उसका प्रेम उसके उद्धार की अभिलाषा करता है। अपने पुत्र को पापमय मनुष्यों की खातिर मरने के लिए भेजकर उसने समस्या का समाधान कर दिया। अब वह पापियों को एक धार्मिकता देता है जो ऐसे करके भी वह स्वयं को धर्मी बनाए रख सकता है। वह पापियों को एक धार्मिकता देता है जो ऐसे अपनी पवित्र उपस्थिति में उन्हें स्वीकार करने की अनुमती देती है। यह उनकी अपनी धार्मिकता नहीं, परन्तु मसीह यीशु की धार्मिकता है और यह विश्वास द्वारा ग्रहण की गई है (21,22)। चूंकि सबने पाप किया है, इसलिए सभी निर्दोष ठहराए जा सकते हैं।, परन्तु केवल परमेश्वर के अनुग्रह के कारण और मसीह ने जो कुछ किया है उसके कारण (23,24)।

जब मसीह क्रूस पर मरा तो उसने पाप का दण्ड अपने ऊपर उठा लिया जो परमेश्वर के पवित्र क्रोध की मांग थी। अतः अब परमेश्वर की धार्मिकता की मांग पूरी हो चुकी है, उसका अनुग्रह, सेंतमेंत मसीह की धार्मिकता किसी भी व्यक्ति को जो इसे विश्वास से ग्रहण करेगा, प्राप्त हो सकती। यहां तक कि यीशु मसीह से पहले रहने वाले लोगो के पाप भी मसीह के मृत्यु के आधार पर क्षमा कर दिए गये थे। परमेश्वर ने उन्हें स्वीकार किया जिनका उनमें विश्वास था। उनके बलिदान पापों को कभी हटा ही नहीं सकते थे (इब्रा० 10:4)। परन्तु वे विश्वास के अभिव्यक्ति हो सकते थे जिसके द्वारा मनुष्य ने अपने पापों का अंगीकार किया कि वह दण्ड के योग्य है और अपनी क्षमा के लिए परमेश्वर की दया के लिए पुकारा। इसलिए परमेश्वर ने विश्वास करने वाले पापी को स्वीकार किया,उसके पाप उस पर से हटा दिए, तब तक के लिए, जब मसीह आता और पूरा -पूरा दण्ड उठा लेता (इब्रा० 9:15)। मसीह की मृत्यु ही वह आधार है जिसके आधार पर परमेश्वर उन सभों को जो उसमें भरोसा रखते हैं, निर्दोष ठहराता हैं, चाहे वे यीशु मसीह के समय से पहले निवास करते थे या बाद में (25,26)।

उद्धार की इस योजना में मनुष्य का कोई स्थान नहीं है, क्योंकि यह मनुष्य के नहीं परन्तु परमेश्वर के कार्य पर आधारित है। मनुष्य केवल इसमें विश्वास और भरोसा ही रख सकता है, और बात में घमण्ड करने का कोई कारण ही नहीं है। यह यहूदियों और गैरयहूदियों दोनों के लिए सही है (27-30)। इस प्रकार व्यवस्था की धार्मिक आवश्यकता पुष्ट हुई। इसने उन लोगों की मृत्यु की मांग की थी जिन्होंने इसे तोड़ा था; मसीह मरा ताकि पापियों के लिए इसकी संम्पूर्ण आवश्यकता को पूरा करे (31)।

कुछ उदाहरण (4:1-25)

जो कुछ पौलुस अभी तक लिख रहा था। उसे समझाने के लिए वह इब्राहीम को एक उदाहरण की तरह उद्धृत करता है। इब्राहीम अपने विश्वास के कारण निर्दोष ठहराया गया था, न कि किसी अच्छे कार्य के कारण जो उसने किया था (4:1-3 पढ़ें उत्पत्ति 12:1-3; 15:1-6; 16:1-16; 17:15-22; 18:1-15; 21:1-21)। Creation Autonomous Academy

धार्मिकता एक दान है जो विश्वास द्वारा ग्रहण किया जाता है किए गए कार्यो के भुगतान के रुप में नहीं प्राप्त होता (4,5)। दाऊद भी जानता था कि धार्मिकता केवल परमेश्वर के अनुग्रह के द्वारा ही आती है, किसी अच्छे कार्यो के द्वारा नहीं (6-8)। इसका खतना के साथ कोई संबंध नहीं है, क्योंकि इब्राहीम को खतना कराने से पहले ही निर्दोष ठहराया गया था। उसे खतना की विधी बाद में मिली, जो उसके अंदरुनी विश्वास का,जो उसके पास पहले ही से था, एक बाहरी चिन्ह था। उसे उन सभों का जो विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराए गए हैं आत्मिक पिता कहा जा सकता है चाहे वे यहूदी हों या गैरयहूदी (9-12)।

न ही इस धार्मिकता का व्यवस्था से कोई संबंध है, क्योंकि इब्राहीम ने परमेश्वर की प्रतिज्ञा को सिर्फ विश्वास के द्वारा ही स्वीकार किया था। उसे इसके लिए व्यवस्था और नियमों को मानने का प्रयत्न का कार्य नहीं करना पड़ा था। व्यवस्था लोगों को धार्मिक नहीं बनाती; यह सिर्फ उनके पापों और अनाज्ञाकारिता को दर्शाती है (13-15)।

अतः परमेश्वर की प्रतिज्ञाएं उसके अनुग्रह द्वारा दी गई और विश्वास द्वारा ग्रहण की गई (16)। परमेश्वर ने निःसंतान इब्राहीम से प्रतिज्ञा की कि वह एक बड़ी जाति का पिता होगा। साधारणतः संतान हो सकती थी, इब्राहीम ने फिर भी परमेश्वर की प्रतिज्ञा पर भरोसा किया और विश्वास किया कि परमेश्वर असंभव को भी संभव कर सकता है (17-21)। जैसे परमेश्वर ने इब्राहीम को उसके विश्वास के कारण धर्मी के रुप में स्वीकार किया, वैसे ही वह उन्हें भी धर्मी के रुप में स्वीकार करेगा जिन्हें यह विश्वास है कि प्रभु यीशु मसीह की मृत्यु और पुनरुत्थान के कारण वह उन्हें बचाएगा (22-25)।

विश्वासी की धार्मिकता (5:1-21)

जो व्यक्ति विश्वास के द्वारा निर्दोष ठहराया गया है उसके पास न केवल परमेश्वर की शान्ति है, परन्तु वास्तव में वह परमेश्वर की पवित्र उपस्थिति में खड़ा होने योग्य है और एक दिन उसकी महीमा में सहभागी होगा (5:1,2)। यह निश्चित आशा ही उसे कष्ट और संकट सहने योग्य बनाती है। उसके पास और अधिक निश्चय है, क्योंकि परमेश्वर का प्रेम पवित्र आत्मा के द्वारा उसके हृदय को भरता है (3-5)। यही प्रेम मसीह को पापियों के लिए स्वयं को मृत्यु में देने का कारण बना। कभी- कभी हम किसी व्यक्ति के बारे में सुन सकते हैं। जो एक अच्छे व्यक्ति के लिए मरा, परन्तु मसीह बुरे मनुष्यों के लिए मरा- पापियों के लिए! और ऐसा करने के द्वारा उसने परमेश्वर का पूरा क्रोध अपने ऊपर उठा लिया (6-9)। जिस प्रकार उसकी मृत्यु के द्वारा पापियों का परमेश्वर के साथ संबंध ठीक हो गया है, उसी प्रकार उसके पुनरुत्थान के द्वारा उन्हें पवित्र, आनन्दमय और जयवन्त जीवन जीने के साथ दी गई है (10,11)।

Creation Autonomous Academy

मानव जाति का अस्तित्व मूलतः आदम में है, मानव जाति ने मूलतः आदम में पाप किया (12)। यह सही है कि पाप व्यवस्था का उल्लघंन करना है, जैसे कि परमेश्वर द्वारा आदम को दी गई आज्ञा या मूसा द्वारा दी गई व्यवस्था। फिर भी दुःख और मृत्यु के क्रम से यह स्पष्ट है कि मूसा को व्यवस्था मिलने के पहिले ही से पाप ने सम्पूर्ण मानव जाती को दूषित कर दिया है, केवल आदम को ही नहीं (13,14) आदम की अनाज्ञाकारिता के कारण ही मृत्यु सभी मनुष्यों का दुःखद अन्त बन गई जो कि मृत्यु तक कि आज्ञाकारिता के कारण (पूरे जीवन भर की, यहां तक कि मृत्यु तक की आज्ञाकारिता) धर्मी ठहराए जाने, जीवन और धार्मिकता की एक मुफ्त भेंट सभी व्यक्तियों के लिए उपलब्ध है जो इसे ग्रहण करते हैं। यह सब केवल परमेश्वर के अनन्त अनुग्रह के द्वारा ही संभव है। यह मुफ्त भेंट आदम के पाप के सिर्फ विपरीत ही नहीं है,

क्योंकि जैसा आदम की एक अनाज्ञाकारिता के द्वारा सभों पर दण्ड की आज्ञा आई, उसी प्रकार मसीह की एक आज्ञाकारिता (क्रूस पर उसकी मृत्यु)के द्वारा सभों के लिए उद्धार संभव हो जाता है, यद्यपि उन्होंने कई बार आदम का पाप दोहराया है (15-19)। व्यवस्था का उद्देश्य मनुष्यों को यह दिखाना था कि पाप कितना बुरा है, और वह परमेश्वर के स्तर से कितना अधिक गिर चुका है। फिर भी पाप चाहे कितना ही अधिक क्यों न बढ़ता लगे, मसीह के द्वारा परमेश्वर का अनुग्रह हमेशा जयवन्त हो सकता है (20,21)

‘‘विश्वास द्वारा पवित्रीकरण’’ से संबंधित स्पष्टीकरण

पिछले अध्यायों में पौलुस ने विश्वास द्वारा धर्मी ठहरा जाने के विषय में बताया है- कैसे विश्वासी परमेश्वर की दृष्टि में धर्मी बन गया है। आगे के अध्यायों में यह विश्वास द्वारा पवित्रीकरण के विषय में बताता है- कैसे विश्वासी एक व्यावहारिक पवित्रता का जीवन व्यतीत कर सकता है। इस भाग में वह पापमय स्वभाव की समस्या के विषय में बताता है, जो आदम से सभी मनुष्यों को विरासत में मिला है, और कैसे विश्वासी इस पापमय स्वभाव पर जयवन्त हो जाता है ताकि वह पाप को अवसर न दे।

पापमय मानव स्वभाव

प्रत्येक पाप मनुष्य के भीतर से आते हैंः एक पापमय मन, हृदय, या इच्छा से। 22 बुरे कार्य और बुरे शब्द केवल बाह्य चिन्ह हैं; परन्तु बीमारी स्वयं एक बुरा हृदय है, आदम के पुत्रों के रुप में, जिसके साथ ही हम पैदा हुए हैं। 23 यह सारी मानव जाति के लिए सही है, क्योंकि ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं है जो धर्मी है। 24 हालांकि सभी मनुष्य इस पापमय दशा को समान रुप से प्रकट नहीं करते, क्योंकि इच्छा शक्ति और विवेक के समान कुछ शक्तियां हैं जो मनुष्यों को वे सारी बातें करने से रोकती हैं जो उनके दिलो में हैं। फिर भी, यह सही है कि मनुष्य का मन परमेश्वर की व्यवस्था द्वार नियन्त्रित नहीं है, और वास्तव में हो भी नहीं सकता। 25

Creation Autonomous Academy

चूंकि मानव स्वभाव ऐसी पापमय स्थिति में है इसलिए यह संभव ही नहीं है कि परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए मनुष्य कुछ कर सके। 26 प्रत्येक मनुष्य का स्वभाव ही न पापमय है, परन्तु उसके कार्य भी पापमय हैं। 27 मनुष्य जो निर्णय लेता और जो कार्य करता है उसके लिए वह जिम्मेदार है। जब पाप में गिरने की परीक्षा आती है तो वह ‘‘हां’’ या ‘‘नहीं’’ कह सकता है। यद्यपि वह कितना भी उचित कार्य करना चाहे वह लगातार बुरा ही करता जाता है उसका स्वभाव और उसके कार्य दोनों ही यह दर्शाते हैं कि यह पापी है, और इसलिए वह परमेश्वर के न्याय की अधीनता में है। वह परमेश्वर से अलग हो जाने के कारण पूर्णतया आशाहीन स्थिति में है और स्वयं को परमेश्वर के पास वापस लौटा ले आने में असमर्थ है। 28

22, मर० 7:20-23; यिर्म० 17:9

23, भजन० 51:5 इफि० 2:3 उत्प० 8:21

24, रोमियों 3:10-18

25, रोमियों 8:5-8

26, रोमियों 8:7, 8; मत्ती 7:18

तथापि, मसीह की मृत्यु के द्वारा परमेश्वर मनुष्य के पाप दूर करने और उसे मसीह की धार्मिकता प्रदान करने में समर्थ है। मनुष्य तभी परमेश्वर के पास वापस लाया जा सकता है। 29 पुराना पापी जीवन, ''पुराना मनुष्यत्व'' , ''पुराना अहम्'', ''पुराना अस्तित्व'', जैसा वह एक समय आदम के पतित पुत्र के समान था, मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ा दिया गया। अब मसीह में उसके पास एक नया जीवन है। वह ईश्वरीय स्वभाव में सहभागी हो जाता है। 30

मसीह की विजय

यहां तक कि जब मनुष्य को परमेश्वर के साथ मित्रता की स्थिति तक ले आया गया और परमेश्वर के स्वभाव में सहभागी बनाया गया है। फिर भी उसे अपने प्रतिदिन के मसीही जीवन में पाप से युद्ध करना ही पड़ेगा, क्योंकि उसके पास अभी भी वही पुराना पापमय स्वभाव है जो ऐसे आदम से विरासत में मिल था। बाइबल में इस आदम के स्वभाव से ''शरीर'' या '' पुराना मनुष्य प्रभावित हैं, और यह विश्वासी के जीवन से तब तक नहीं हटाई जाएगा जब तक कि वह स्वर्ग को नहीं चला जाता। यह हमेशा बुराई करने की इच्छा रखता है, और यदि इसे नियन्त्रण में नहीं रखा जाएगा तो यह व्यक्ति के मसीही जीवन को ऐसा बरबाद कर देगा, कि वह परमेश्वर के लिए व्यर्थ हो जाएगा। इन अगले तीन अध्यायों में पौलुस का उद्देश्य यह दर्शाना है कि पापमय स्वभाव यीशु मसीह द्वारा क्रूस पर दण्डित किया जा चुका है, ताकि विश्वासी पर अब इसका कोई अधिकार न रहे। वह इसके नियन्त्रण और अधिकार से मुक्त किया जा चुका है। अब उसे इसके दासत्व में बने रहने कि आवश्यकता नहीं है। यदि वह इसे अवसर देता है तो यह उसे फिर एक बुरे स्वामी की अधीनता की तरह, अपने अधिकार में ले लेगा।

मसीहियों को, किसी भी हालत में इस पुराने पापमय स्वभाव, शरीर की अभिलाषाओं को संतुष्ट करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। उसे इस पुराने स्वभाव को ऐसा कोई अवसर नहीं देना चाहिए जिससे यह फिर से नियन्त्रण स्थापित कर ले, चाहे उसके जीवन की छोटी से छोटी या सबसे तुच्छ बात ही क्यों न हो। इसका बिल्कुल भरोसा नहीं किया जा सकता। इसकी न तो सेवा करनी चाहिए, और न ही आज्ञा माननी चाहिए। 31 यह बहुत आसान नहीं होगा, क्योंकि ऐसा व्यक्ति के जीवन में हमेशा एक युद्ध होता रहेगा- पुराना

स्वभाव नये स्वभाव के विरुद्ध, शरीर आत्मा के विरुद्ध 32 पौलुस यह दर्शाना चाहता है कि मसीह पहले ही इस शरीर पर विजय प्राप्त कर चुका है, और पवित्र आत्मा की सामर्थ के द्वारा मसीही प्रतिदिन यह विजय प्राप्त कर सकता है।

4- विश्वास द्वारा पवित्रीकरण (पवित्रता का मार्ग)6:1-8:39

पाप से मुक्ति (6:1-23)

चूंकि परमेश्वर का अनुग्रह मनुष्य के पाप से इतना अधिक है, इसलिए इसका यह मतलब नहीं है कि विश्वासी जो चाहे सो पाप कर सकता है। वह मसीह के साथ क्रूस पर मर गया। वह उसके साथ गाड़ा गया और एक नया जीवन जीने के लिए उसका शरीर फिर से जिलाया गया, पाप पर विजय प्राप्त करता हुआ। वह इसे अपने बपतिस्मे से चित्रित करता है (6:1-4)।

जब एक व्यक्ति मर जाता है, तब फिर कोई भी उस व्यक्ति पर अधिकार या नियन्त्रण नहीं रख सकता। इसी प्रकार विश्वासी मसीह के द्वारा पाप के प्रति मर गया ताकि पाप आगे को उस पर अधिकार न रख सके। वह पाप से मुक्त है। इसका उस पर कोई अधिकार नहीं है (5-7)। परन्तु पाप के प्रति मर कर यीशु फिर से जी उठा, और अब पाप और मृत्यु उसे छु नहीं सकते। चूंकि विश्वासी '' मसीह में '' है, इसलिए पाप के प्रति यह मृत्यु और नये जीवन में जयवन्त प्रवेश भी उसका हो जाता है। अतः उसे अवश्य ही उस पर विश्वास करना और इसे व्यवहार में सच बनाना होगा (8-11)। परन्तु यदि वह पाप को फिर से अवसर देगा तो यह फिर से उन पर विजयी होकर अधिकार कर लेगा। अतः उसे स्वयं का हर एक भाग परमेश्वर को देना होगा ताकि पाप नहीं, पर वह उसमें कार्य कर सके (12-14)।

अनुग्रह विश्वासी को पाप से स्वतन्त्र कर देता है। जैसा कुछ लोग सोचते हैं, यह उसे आसानी से पाप करने की अनुमति नहीं देता क्योंकि वह इसे फिर से पाप की दासता की ओर ले जाएगा जैसा वह पहले था। पर इसके विपरीत वह व्यक्ति अपने स्वयं का परमेश्वर को उपयोग करने देता है, ताकि वह परमेश्वर का एक सच्चा दास बन सके। इसका कोई महत्व नहीं है कि एक व्यक्ति व्यवहार में क्या करता है, पाप या धार्मिकता, वह उस बात में निपुण हो जाएगा। (15-19)। पाप कोई भी संतोष नहीं देगा, इस संसार में और उसके बाद दोनों ही में (20-23)।

Creation Autonomous Academy

व्यवस्था कोई सहायता नहीं कर सकती (7:1-25)

मसीह के द्वारा विश्वासी न केवल पाप के लिए मर गया, परन्तु वह व्यवस्था के लिए भी मर गया। उदाहरणार्थ, यदि कोई पति मर जाता है तो उसकी पत्नी आगे को उसके बन्धन में नहीं रहती और वह फिर

से विवाह करने के लिए स्वतन्त्र है। इसी प्रकार विश्वासी को एक नए जीवन के लिए जिलाया गया है अब वह दूसरे, जीवित मसीह, के साथ जोड़ा गया है (7:1-4)। पहिले उसे मालूम था कि व्यवस्था किसी बात को करने को जितना अधिक मना करती थी , मानव हृदय उसे उतना ही अधिक करना चाहता था। और जब वह उसे करता है, तब तो व्यवस्था तोडने का फल मृत्यु ही है। परन्तु अब जबकि विश्वासी व्यवस्था के लिए मरा हुआ है वह एक तत्पर हृदय से प्रभु की सेवा कर सकता है। वह अब भय के कारण कार्य नहीं करता, क्योंकि अब वह व्यवस्था की घोर शक्ति के अधीन नहीं है (5,6)।

इसका यह मतलब नहीं है कि व्यवस्था पापमय है। इसके एकदम विपरीत यह व्यवस्था की पवित्रता है जो मनुष्यों पर प्रकट करती है कि वह कितना पापी है। पौलुस अपने पिछले अनुभवों का वर्णन यह दर्शाने के लिए करता है कि जब कोई व्यवस्था नहीं होती, तो एक व्यक्ति पाप की ओर ध्यान नहीं देता है। यह ऐसा होता है मानो पाप मरा हुआ हो। परन्तु ज्यों ही व्यवस्था आती है पाप जीवित हो उठता है और बुरी अभिलाषाओं को भड़का देता है। यह एक व्यक्ति में वे चीजें करने की इच्छा उत्पन्न करता है जिसे करने को उसे मना किया गया है। अतः आज्ञा यह थी ‘‘तू लालच न करना’’ जिसने पौलुस को यह सिखाया कि लालच कैसे करना है (7-11)। पवित्र और आत्मिक व्यवस्था ने पापमय स्वभाव की बुरी शक्ति को प्रकट कर दिया है। अतः जीवन लाने के बदले, व्यवस्था ने केवल पाप को उकसाया है जिससे मृत्यु आ गई (12,13)।

पवित्र जीवन जीने के लिए विश्वासी अपने स्वयं के प्रयत्नों द्वारा व्यवस्था का पालन करने का जितना अधिक प्रयत्न करता है, उतना ही अधिक उसे निराशा और पराजय का सामना करना पड़ता है। पौलुस पुनः अपना अनुभव उद्धत करता है; वह उन बातों को नहीं कर पाता जिन्हें वह जानता है कि करना चाहिएः वह उन बातों को ही करता है जिन्हें वह जानता है कि नहीं करना चाहिए। यह दर्शाता है कि अन्दरुनी पाप कितना अधिक शक्तिशाली है और विश्वासी अपनी स्वयं की शक्ति के द्वारा इस पर विजय पाने में अधिक असमर्थ है (14-20)।

यहां तक कि वह जानता है कि व्यवस्था अच्छी है, परन्तु वह अपने को पापमय कर सकता है? अपनी स्वयं कि शक्ति के द्वारा विजय तो विल्कुल भी नहीं परन्तु प्रभु यीशु मसीह के द्वारा (24,24), क्योंकि मसीह में आत्मा की एक नई सामर्थ है जो पापमय स्वभाव की शक्ति से कहीं अधिक महान है (8:1,2)।

Creation Autonomous Academy

आत्मा के द्वारा विजय (8:1-17)

पुराने पापमय स्वभाव के नीचे की ओर खिंचाव, पृथ्वी के गुरुत्व के नीचे की ओर खिंचाव से तुलना की जा सकती है। हवा में फेंका गया एक पत्थर जमीन पर ही गिरेगा, क्योंकि इसमें कोई जीवन या शक्ति नहीं है कि गुरुत्वाकर्षण शक्ति पर विजय हासिल कर सके; परन्तु हवा में फेंकी गई एक चिड़िया उड़कर दूर चली जाएगी, क्योंकि इसमें एक जीवित शक्ति है जो इसे पृथ्वी के नीचे की ओर खींचने की शक्ति पर विजय प्राप्त

करने के योग्य बना देती है। इसके पास एक नई ''व्यवस्था'' (यानि,जीवन) है जो गुरुत्व की ''व्यवस्था'' से महान है। इसी प्रकार मसीह में विश्वासी के पास आत्मा की एक नई ऊपर ले जाने वाली शक्ति है जो पुराने पापमय स्वभाव की नीचे खींचने वाली शक्ति से कहीं अधिक सामर्थी है। (8:1,2)

व्यवस्था का पालन करने का प्रयत्न धार्मिकता नहीं उत्पन्न कर सकता, क्योंकि पापमय स्वभाव इतना खराब है कि इसका उपचार नहीं किया जा सकता है। यहां तक कि इसे उन्नत भी नहीं किया जा सकता। केवल एक ही बात की जा सकती है और वह है नाश के लिए उसका दोषी ठहराया जाना और क्रूस पर अपनी मृत्यु के द्वारा मसीह ने यही किया। दूसरी ओर, आत्मा के सामर्थ देने के अनुसार जीवन व्यतीत करने के द्वारा विश्वासी अपने जीवन में वह धार्मिकता उत्पन्न कर सकता है जो व्यवस्था का उद्देश्य था परन्तु वह इसे उत्पन्न न कर सकी (3,4)। यह असंभव है कि परमेश्वर की आत्मा और पुराना पापमय स्वभाव दोनों ही एक ही समय में मन को नियन्त्रित करें। एक तो जीवन की ओर ले जाता है; दूसरा मृत्यु की ओर ले जाता है (5-8)।

चूंकि विश्वासी के पास पवित्र आत्मा है, इसलिए उसे स्वयं पवित्र आत्मा को नियन्त्रण रखने की अनुमति अवश्य देना चाहिए। यह पापों पर विजय का निश्चित है, अभी और भविष्य दोनों ही में (9-11)। मसीही शरीर का कुछ भी ऋणी नहीं है। यह उसका स्वामी नहीं है और उस पर नियन्त्रण रखने का इसे कोई अधिकार नहीं। अतः उसे इसकी आज्ञा नहीं माननी चाहिए या इसका दास नहीं बनना चाहिए। बल्कि वह परमेश्वर का एक पुत्र है, जिसे परमेश्वर की आत्मा द्वारा अगुवाई प्राप्त है। वह परमेश्वर का एक वारिस है,जो एक दिन उसकी महिमा का हिस्सेदार होगा (12-17)।

मसीही का दृढ़ विश्वास (8:18-39)

विश्वासी मानता है कि वर्तमान दुख -तकलीफें भविष्य की महिमा की तुलना में, जिसे वह एक दिन प्राप्त करेगा, एकदम नगण्य है। उस दिन भौतिक सृष्टि, जिसे मनुष्य के पाप के कारण दुख सहना पड़ा, मनुष्य के साथ पूर्ण महिमा में प्रवेश करेगी। जब विश्वासी मृतको में से अविनाशी आत्मिक शरीरों में, जो स्वर्गीय राज्य के जीवन के लिए उपयुक्त है, जीवित हो उठेंगे तब सड़ाहट और मृत्यु जो पाप का परिणाम है पूरी तरह से पराजित हो जाएगी 33 (18-25)।

Creation Autonomous Academy

प्रार्थना में भी विश्वासी को आत्मा की सहायता प्राप्त है, क्योंकि वह हृदय के गहरे से गहरे विचारों और भावनाओं को जानता है (26,27)। वास्तव में अपने लोगों से संबंधित सभी बातों में परमेश्वर कार्य कर रहा है, पुत्र के रुप में परमेश्वर द्वारा उनके अनन्त चुनाव से लेकर उस दिन तक जब वे परमेश्वर के एकलौते पुत्र यीशु मसीह की समानता में सहभागी होंगे (28-30)।

अतः इसके विषय में कोई संदेह न रहने दें। यदि परमेश्वर सभी दानों से बड़ा दान अपने पुत्र का दान, दे चुका है, तब तो उसके परे कुछ भी नहीं है (31,32)। किसी के भी दोषारोपण से न डरो, क्योंकि जो निर्दोष ठहराता है वह स्वयं परमेश्वर के अलावा दूसरा नहीं है, और वह यीशु मसीह के सिद्ध कार्य द्वारा ऐसा करता है (33,34)। फिर भी यदि ऐसी सबसे खराब बात जिसकी कल्पना की जा सकती है, उसके साथ घटती है, तौभी विश्वासी के पास यह निश्चित है कि यह बात भी उसे कभी परमेश्वर के अपरिवर्तनीय प्रेम से अलग नहीं कर सकती (35-39)।

5-इस्राएल से सम्बन्धित समस्या 9:1-11:36

वर्णित समस्या (9:1-5)

जब पौलुस परमेश्वर के दिए उद्धार की महानता पर विचार करता है तो वह दुख से भर जाता है, क्योंकि उसके अपने लोगों, इस्राएल, ने इसे अस्वीकार कर दिया है वह उन्हें पश्चाताप करते और विश्वास में इसे ग्रहण करते हुए देखने के लिए कुछ भी करने को तैयार है। एक राष्ट्र के रुप में वे सुसमाचार ग्रहण करने के लिए तैयार किये गए हैं-परमेश्वर द्वारा उसके लोगों के रुप में उनके विशेष चुनाव के द्वारा, व्यवस्था के द्वारा आराधना की विधि के द्वारा, और उनके महान लोगों के जीवनों के द्वारा तैयार किए गए -जब सुसमाचार अन्तिम रुप से यीशु मसीह के व्यक्तित्व में आया तो उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया (9:15)। अब क्या? इन सब ईश्वरीय तैयारी के बाद क्या वे त्यागने और छोड़ने के लिए हैं?

33, 1 कुरि० 15:42-57

परमेश्वर अपनी इच्छा के अनुसार चुनता है (9:6-29)

Creation Autonomous Academy

नहीं, परमेश्वर का वचन विफल नहीं हुआ है। वास्तव में, वे सभी लोग जो याकूब (इस्राएल) के शारीरिक वंशज है आन्तरिक और आत्मिक रुप में परमेश्वर के सच्चे लोग, सच्चा इस्राएल, नहीं हैं (6ःतुलना करें 2:28,29; 4:11,12)। इसे समझने के लिए इब्राहिम को देखें। उसके कई पुत्र थे, परन्तु उसके सभी वंशज परमेश्वर के चुने हुए लोग नहीं थे; केवल वे ही थे जो प्रतिज्ञा के पुत्र इसहाक के वंशज थे (7-9)। फिर इसहाक के दो पुत्र हुए, परन्तु परमेश्वर ने अपने लोगों का पिता होने के लिए याकूब को चुना और एसाव को अस्वीकार किया (10-13)। इस तथ्य से कि परमेश्वर एक को चुनता है और दूसरे को अस्वीकार करता है का मतलब यह नहीं है कि वह अन्यायी है। सभी मनुष्य पापी हैं और कोई भी उसके अनुग्रह के योग्य नहीं है परन्तु इसलिए की वह परमेश्वर है वह किसी को भी अपनी दया के लिए चुन सकता है। वह किसी को कठोर

होने के लिए भी चुन सकता है,जैसे उसने फिरौन को किया। फिर भी,वह हमेशा वैसा ही करता है जैसा वह देखता है कि सही, और उसकी अपनी पूर्ण इच्छा के अनुसार है (14-18)।

परमेश्वर के विरोधी यह तर्क कर सकते हैं कि कुछ को एक उद्देश्य के लिए और दूसरों को एक निम्न उद्देश्य के लिए चुनने के कारण वह अन्यायी है। पौलुस यह पूछते हुए तुरन्त उत्तर देता है कि मनुष्य कौन है जो सोचता है कि वह परमेश्वर के साथ तर्क कर सकता है? परमेश्वर मनुष्य के प्रति उत्तरदायी नहीं है। एक कुम्हार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि मिट्टी के एक लौदे को यह बताए कि वह क्यों उससे सुन्दर बरतन या एक पुराना बरतन बनाने का निर्णय करता है (19-21)। और परमेश्वर के साथ ऐसा ही है। वह पापमय मनुष्य के प्रति हमेशा धीरजवन्त और सहनशील रहा है, परन्तु यदि किसी में अपना न्याय और सामर्थ तथा दूसरों में अपनी दया और महिमा दर्शाने के लिए चुनता है, तो मनुष्य उसके सामर्थ दर्शाने के उसके अधिकार पर प्रश्न करने वाला कौन है?(22,23) इसलिए परमेश्वर गैरयहूदियों को अपने लोग बनाने के लिए बुलाने का (24-26), और सम्पूर्ण इस्राएल के थोड़े लोगों को ही उनमें शामिल करने का (27-29) चुनाव कर सकता है।

इस्राएल अपनी हानि का स्वयं जिम्मेवार है (9:30-10:21)

फिर भी परमेश्वर के उद्देश्य के होते हुए भी, यहूदी हानि के लिए स्वयं जिम्मेवार हैं। वे यह नहीं कहते कि परमेश्वर ने उनका बहिष्कार किया है। उन्होंने ही परमेश्वर का बहिष्कार किया है। गैरयहूदी, जिनके पास कोई व्यवस्था नहीं थी, विश्वास के द्वारा निर्दोष ठहराए गए, और यहूदी भी ठहराए गए होते यदि उन्होंने व्यवस्था का पालन करके परमेश्वर का अनुग्रह कमाने का प्रयत्न करने की जगह उस पर विश्वास किया होता। वे यह विश्वास नहीं करेंगे कि यदि उन्हें बचाना है तो यह उसी आधार पर ही होगा जैसा गैरयहूदियों के साथ हुआ अर्थात् क्रूस पर चढ़ाए गए मसीह में विश्वास के द्वारा यह यहूदियों के लिए एक ठोकर का कारण था कुछ ऐसी बात जिसे वे कभी स्वीकार नहीं कर सकते थे (30-33)। उन्होंने अपने आप को असहाय पापियों के रुप में स्वीकार करने और मसीह की धार्मिकता को ग्रहण करने के बदले व्यवस्था का पालन करने के द्वारा अपनी स्वयं की धार्मिकता उत्पन्न करने का प्रयत्न किया (10:1-4)

व्यवस्था कहती है, ‘‘यह सब करो और तुम जीवित रहोगे।’’ समस्या यह है कि कोई भी सिद्ध रीति से व्यवस्था का पालन करने के योग्य नहीं है। सभी को मृत्यु के लिए दोषी ठहराया गया है (5) विश्वास कहता है, ‘‘कुछ मत करो। स्वर्ग की ऊँचाई पर चढ़ाने या उसके गहराई को खोजने का प्रयत्न मत करो, क्योंकि मसीह पहले ही स्वर्ग से पृथ्वी पर आ चुका है, क्रूस पर चढ़ चुका है,गाडा गया और मृतकों में से जी उठा है। विश्वास के द्वारा जहां कहीं आप हैं वहीं वह आप का हो सकता है (6-8)। अपने जी उठे उद्धार कर्ता के रुप

Creation Autonomous Academy

में विश्वास करें, उसे अपना प्रभु या स्वामी घोषित करें, और आपको सच्चा जीवन मिलेगा। चाहे आप यहूदी हों या गैरयहदी" (9-13)।

इस संदेश पर विश्वास करने के लिए लोगों को पहले इसे सुनाना आवश्यक है, इसलिए मसीहियों को मसीह से सम्बन्धित वचन को प्रचार करने के लिए भेजा जाना आवश्यक है (14-17)। यहूदियों ने वास्तव में यह सुसमाचार सुना है अतः उनके पास कोई बहाना नहीं है (18)। उनकी समस्या यह नहीं है कि उन्होंने संदेश न तो सुना है और न समझा है, परन्त यह है कि इस पर विश्वास करने से इन्कार कर देते हैं। वे क्रोध और डाह से भर उठते हैं, जब वे देखते हैं कि उनके गैरयहूदी पड़ोसी (यहूदी सोचते हैं कि उन्हें परमेश्वर के बारे में कुछ नहीं मालूम) इसे ग्रहण करते हैं, परन्तु वे स्वयं उसकी नहीं सुनेंगे (19-21)।

उद्धार गैरयहूदियों को भेजा (11:1-24)

फिर भी इसका यह मतलब नहीं कि परमेश्वर ने अपने लोगों इस्राएल को पूरी तरह से त्याग दिया है। यह तथ्य कि पौलुस ने उद्धार प्राप्त किया है इसका प्रमाण है कि उसने त्यागा नहीं है (11:1)। जैसे एल्लियाह के समय में इस्राएल में थोड़े से लोग थे, जिन्होंने परमेश्वर की ओर से अपना मुँह नहीं मोड़ा था, उसी प्रकार पौलुस के समय में भी जो परमेश्वर के प्रति विश्वासयोय थे वह उनके साथ था (2-6)। वे संख्या में कम हैं, पर उसके द्वारा चुने हुए हैं। जहां तक विद्रोही लोगों का सवाल है, परमेश्वर ने उन्हें सत्य के प्रति अन्धा या बहरा बना दिया है (7-10)।

यद्यपि परमेश्वर ने इस्राएल को दण्ड दिया है, फिर भी वह उनकी कठोर दशा को हमेशा के लिए बना नहीं रहने देगा। इस्राएल द्वारा मसीह के इन्कार के परिणामस्वरुप सुसमाचार का गैरयहूदियों में पहुँचना सारे संसार के लिए एक आशीष का कारण हुआ। अतः इस्रएल द्वारा मसीह का ग्रहण किया जाना कितनी बड़ी आशिष का कारण होगा (11-12)। पौलुस बहुत प्रसन्न है यदि गैरयहूदियों में उसकी सफलता यहूदियों में जलन उत्पन्न कर दे और इस प्रकार कुछ लोगों के लिए विश्वास का कारण हो जाए। वे पहले समूह के लोगों के समान होंगे, या वृक्ष की जड़ के समान –आने वाली महान आशीष का एक पुर्वानुभव (13-16)।

Creation Autonomous Academy

परमेश्वर के महान परिवार की तुलना जैतून के एक वृक्ष से की गई है। अभी तक अपनी जड़ों, तने और डालियों में यह वृक्ष यहूदी ही था। जब उन्होंने मसीह का इन्कार किया तो इन डालियों में से बहुत सी तोड़ दी गई और इनकी जगह जंगली वृक्ष की डालियां (अर्थात् गैरयहूदी) इनमें कलम लगाकर जोड़ दी गईं (17)। गैरयहूदियों को नीची दृष्टि से नहीं देखा जाना चाहिए और अपने पर घमण्ड नहीं करना चाहिए, क्योंकि अब वे परमेश्वर के परिवार में आ गए हैं। उन्हें याद करना चाहिए कि वे यहूदी ही थे, जिन्होंने सुसमाचार के लिए रास्ता तैयार किया जिस पर अब इन गैरयहूदियों ने विश्वास किया था। इस यहूदी तैयारी

के बिना गैरयहूदियों का उद्धार सम्भव न हुआ होता (18)। परमेश्वर ने बढ़ी हुई यहूदी डालियों को उनके अविश्वास के कारण तोड़ दिया और अपनी दया से जंगली डालियों को जोड़ दिया। गैरयहूदी घमण्डी हो जाते हैं तो वे भी तोड़ दिए जाएंगे और पोषित यहूदी डालियों को फिर से मूल वृक्ष में लगाने में कोई परेशानी नहीं होगी। यह उनके विश्वास के अलावा और कुछ नहीं है, जो उन्हें रोक देता है (19-24)।

परमेश्वर की महान योजना की पूर्णता (11:25-36)

गैरयहूदी को स्वयं संतुष्ट अनुभव करना चाहिए। इस्राएल की कठोरता और इसमें उद्धार का जो मौका गैरयहूदियों के लिए केवल परमेश्वर का उद्देश्य पूरा होने तक ही रहेगा। इस्राएल फिर से परमेश्वर के अनुग्रह में वापस आ जाएगा। दूसरें शब्दों मे गैरयहूदियों का हृदय परिवर्तन इस्राएल के उद्धार का कारण बन जाएगा; फिर भी इन अभिव्यक्तियों ‘‘गैरयहूदियों का हृदय परिवर्तन’’ और ‘‘इस्राएल का उद्धार’’ से हमें यह नहीं समझना चाहिए कि इसका अर्थ एक -एक व्यक्ति के परिवर्तन से है, परन्तु, सामान्य रुप से दो पूरे समूहों का उल्लेख करने के लिए है (25-27)।

वर्तमान के लिए इस्राएल को अलग किया गया है, उसका एक कारण यह है कि गैरयहूदी सुसमाचार ग्रहण कर सकें। परन्तु पुराने समय में इस्राएल से की गई प्रतिज्ञाओं को सदा याद रखता है, और उसके पास अभी भी उनके लिए विशेष वाचा प्रेम है (28,29)। गैरयहूदी और यहूदी दोनों क्रमशः अनाज्ञाकारी हैं, परन्तु ठीक जैसे यहूदी परमेश्वर की दया गैरयहूदियों तक पहुंचने के माध्यम थे, वैसे ही उसकी दया यहूदियों तक पहुंचने के गैरयहूदी माध्यम होंगे। इसलिए कि सभी मनुष्य पापी सिद्ध हुए हैं, परमेश्वर सभी पर दया कर सकता है (30-32)।

तब हम परमेश्वर की अथाह बुद्धि और ज्ञान देखतें हैं। उसका चुनाव भी अन्याय होने से बहुत -बहुत दूर, सभी तक उसकी दया पहुंचाने का माध्यम बनता है। उसकी महिमा युगानयुग होती रहे (33-36)।

Creation Autonomous Academy

6-सच्चा व्यावहारिक विश्वास 12:1-15:13

मसीही जिम्मेवारियां और संबंध (12:1-21)

ग्यारह अध्यायों तक पौलुस यह समझाता रहा कि सर्वदयालु, सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने क्या किया है, और आगे भी पापमय, अनाज्ञाकारी मनुष्यों के लिए क्या-क्या करेगा। अब वह उन मनुष्यों को जिन्होंने इस दया का अनुभव किया है, याद दिलाता है कि आराधना का सबसे उपयुक्त कार्य जिसके द्वारा वे अपनी

धन्यवादिता दर्शा सकते हैं, वह है स्वयं को परमेश्वर के सामने एक जीवित बलिदान करके चढ़ाना। अब उन्हें दूसरे मनुष्यों की तरह न सोचना और न कार्य करना है। उनका मन बदल जाना चाहिए, ताकि वे चीजों को एक अलग दृष्टिकोण से देखें- परमेश्वर के दृष्टिकोण से। और जब उनके विचार परमेश्वर की इच्छा के अधिक अनुकूल हो जाते हैं तब उनके कार्य उसे अधिक प्रसन्न करने वाले होंगे (12:1,2)।

इसका यह मतलब नहीं है कि वे घमण्डी हो जाएंगे या अपने स्वयं के बारे में उच्च विचार बना लेंगे। इसकी जगह उनके ईमानदार बनने और यह समझने में सहायक होगी कि मसीह की देह, कलीसिया, के अंगों के रुप में, उन सभी को अलग-अलग योग्यताएं दी गई है। प्रत्येक को वह कार्य खोजना चाहिए जिसके लिए परमेश्वर ने उन्हें जोड़ा है, तब उसे मेहनत से और विश्वासयोग्यता से करें (3-8)।

एक ही देह के अंगों के रुप में आत्मिक और भौतिक दोनों ही बातों में उन्हें एक -दूसरे का प्रेमपूर्वक और प्रसन्नतापूर्वक, ध्यान रखना चाहिए (9-13)। ऐसी ही व्यवहार उनके प्रति भी दर्शाना है जो कलीसिया से बाहर हैं, यहां तक कि उनके साथ भी जो उनसे बुरा व्यवहार करते हैं। बुराई करने वाले को सजा देना परमेश्वर का कार्य है, मसीही की जिम्मेदारी उसके साथ ऐसा व्यवहार करना है मानो जैसे उसका मित्र हो। इसका प्रभाव ऐसा हो सकता है कि वह इतना शर्मिन्दा हो कि अपने बुरे कार्यों से पश्चाताप करें (14-21)।

राष्ट्र और एक दूसरे के प्रति कर्त्तव्य (13:1-14)

चूंकि परमेश्वर सारे अधिकरों का स्रोत है, अतः वे लोगों का संचालन करते हैं उसी को ऐसा करने में कोई परेशानी नहीं होनी चाहिए क्योंकि कानून का पालन करने वाले नागरिक को किसी बात का भय नहीं है; जबकि कानून तोड़ने वाले को अवश्य भय है (3:4)। फिर भी यह दण्ड का भय मसीहियों को कानून का पालन कराने वाला और टेक्स अदा कराने वाला ही नहीं होना चाहिए। उसे इन बातों को साधारणतः परमेश्वर की सेवकाई के और आगे के मार्गो के रुप में देखना चाहिए (5-7)।

इसी प्रकार मसीहियों को अपने साथी मनुष्य के साथ अच्छे संबंध रखने चाहिए, केवल इसलिए नहीं कि व्यवस्था ऐसा कहती है, परन्तु प्रेम के कारण (8-10) जैसे-जैसे पूर्ण उद्धार का दिन प्रतिदिन निकट आ रहा है, वैसे ही वैसे मसीहियों के पास मसीह के समान गुणों में बढ़ने का समय कम से कम होता जा रहा है। पौलुस कहता है -अतः जाग उठो! ऐसा व्यवहार मत करो जैसा गैरमसीही ही करते हैं। पाप को कोई अवसर मत दो। प्रभु यीशु मसीह के सामर्थ में जीवन व्यतीत करो (11-14)।

Creation Autonomous Academy

मसीही स्वतन्त्रता का उपयुक्त उपयोग (14:1-15:13)।

यद्यपि मसीही धार्मिक नियमों और विधियों, जैसा की मूसा के व्यवस्था में पाए जाते हैं, से स्वतंत्र हैं, ऐसे हैं जो अपने स्वयं के नियम का पालन करना आवश्यक समझते हैं। ऐसे लोगों को उनके व्यक्तिगत विचारों पर बिना किसी बहस के मसीही सहभागिता में बड़े उत्साह से ग्रहण करना चाहिए (14:1)। उदाहरणार्थ, कुछ यहूदी मसीही भोजन संबंधी पुराने यहूदी नियमों और विशेष पर्व दिवसों को अब भी मानते थे। विश्वास में दृढ़ मसीही इन नियमों का पालन करने की बिल्कुल भी आवश्यकता महसूस नहीं करते। फिर भी, विश्वास में दृढ़ इन मसीहियों को चेतावनी दी गई है कि वे अपने निर्बल सहयोगियों को नीची दृष्टि से न देखें, जबकि विश्वास में इन निर्बलों को चेतावनी दी गई कि वे दृढ़ विश्वासियों की आलोचना न करें जो सब कुछ खाने और कोई विशेष पर्व दिवस न मानने की स्वतन्त्रता अनुभव करतें हैं। इन दोनों बातों में यह परमेश्वर और व्यक्ति के बीच का सम्बन्ध है (2-6)। सभी मसीह के दास है। केवल वही स्वामी है। केवल वही है जिनके प्रति सभी मसीही सारी बातों में उत्तरदायी हैं (7-9)। केवल वही है जो सभो का न्याय और जांच करेगा। इसलिए एक दूसरे की जांच करने की कोई आवश्यकता नहीं है (10-12)

यह कहीं अच्छी बात है कि प्रत्येक मसीही स्वयं अपने को जांचे और यह ठान ले कि वह ऐसा कुछ नहीं करेगा जिससे दूसरे को ठेस लगे। कुछ चीजें कुछ लोगों के लिए अहानिकर हैं वही दूसरों के लिए पापमय हैं (13,14)। विश्वास में निर्बल एक व्यक्ति यह अनुभव कर सकता है कि कोई बात -विशेष गलत है, फिर भी चूंकि वह विश्चास में दृढ़ एक मसीही को वह कार्य करते देखता है तो उसका अनुसरण कर सकता है और वही कार्य करता भी है। परन्तु ऐसा करने के द्वारा वह स्वयं अपने विवेक के विरुद्ध पाप कर बैठता है। दूसरे शब्दों में, विश्वास में दृढ़ व्यक्ति की स्वतंत्रता ने विश्वास में निर्बल व्यक्ति को ऐसा कार्य करने को प्रेरित किया जिसे यह गलत समझता है, और उसके मसीही जीवन के नाश का आरम्भ हो सकता है। अतः विश्वास में दृढ़ व्यक्ति की स्वतंत्रता पाप का एक साधन हो गया (15,16)। मसीही जीवन में महत्वपूर्ण बात खाना और पीना नहीं है, बल्कि वे चीजें है, जो शान्ति और जीवन में विकास लाती हैं (17-19)। वास्तव में दृढ़ विश्वास वाला मनुष्य प्रसन्न है जिसका विवेक महत्वहीन बातों से संबंधित व्यवस्था और नियमों के बंधन में नहीं है; परन्तु उसके लिए अच्छा है कि वह स्वयं को नियन्त्रित करे और उसका विवेक जिन कार्यो को करने की अनुमति देता है उसे न करे, यदि उसके स्वतंत्र कार्य दूसरे विश्वासी के जीवन में परमेश्वर के कार्य को नष्ट करने जा रहे हैं (20-23)।

विश्वास में दृढ़ व्यक्ति को विश्वास में निर्बल व्यक्ति के प्रति एक सहानुभूतिपूर्ण समझ रखनी चाहिए, और स्वयं अपने को ही प्रसन्न रखने में नहीं लगे रहना चाहिए। प्रभु यीशु मसीह का जीवन एक ऐसा सिद्ध उदाहरण है जिसने हमेशा अपने मन में दूसरों की भलाई की चिन्ता करते हुए ही जीवन व्यतीत किया (15:1-3)। पवित्रशास्त्र बाइबल के द्वारा साथ ही साथ मसीह के उदाहरण के द्वारा, परमेश्वर मसीहियों को एक दूसरे के साथ एकता का जीवन जीने के लिए उत्साहित करता है (4-6)। मसीह ने सभों को ग्रहण किया –विश्वास में दृढ़ और निर्बलों; यहूदियों और गैरयहूदियों सभी को। अपने जीवन और मृत्यु में वह सभी का

Creation Autonomous Academy

सेवक था, और इस प्रकार पुराने समय में इस्राएल से की गई प्रतिज्ञाओं को पूरा किया और गैरयहूदियों के लिए उद्धार लाया (7-13)।

7-पौलुस की तात्कालिक योजनाएं; अभिवादन और विदाई (15:14-16:27):-

पौलुस ने रोम के विश्वासियों को इसलिए पत्र नहीं लिखा है कि उसे उनकी समझने या सिखाने की योग्यता पर संदेह है, परन्तु इसलिए कि वह उन्हें सुसमाचार के सिद्धान्तों में जिसे वे पहले ही ग्रहण कर चुके थे, और अधिक निश्चय दिलाना चाहता है । यह इसलिए कि गैरयहूदियों के प्रेरित के रुप में, वह चाहता है कि हर जगह, रोम सहित, गैरयहूदियों के मध्य में होने वाला यह कार्य परमेश्वर को ग्रहण योग्य हो (14-16)। पौलुस के पास प्रसन्न होने का कारण है जब वह यह याद करता है कि कैसे उसने यरुशलेम में से इल्लुरिकुम तक गैरयहूदियों के बीच में सुसमाचार का प्रचार किया, मुख्तः उन क्षेत्रो में जहां इससे पहले इसका प्रचार नहीं किया गया था (17-21)।

अब जबकि वह इस क्षेत्र में अपना काम समाप्त कर चुका है, वह अन्त में रोम के मसीहियों से मिलने के लिए अपने को स्वतंत्र अनुभव करता है, और वहां से सुदूर–पश्चिम में जाकर, अभी भी अछूते क्षेत्रो में सुसमाचार प्रचार करना चाहता है, यहां तक कि स्पेन में भी (22-24) फिर भी पहले वह गैरयहूदी कलीसियाओं द्वारा यरुशलेम के गरीब मसीहियों के लिए दिए गए उपहार को देने जा रहा है। वह इसे ऐसे उपयुक्त समझता है जैसे कि गैरयहूदियों को यह भेंट अपने यहूदी भाइयों को चढ़ाना चाहिए, यह देखते हुए कि वे मसीही विश्वास के कारण यहूदियों के पहले से ऋणी हैं (25-27)। तब वह रोम को और स्पेन को लौटेगा (28,29)। वह विशेष रुप से दुष्ट मनुष्यों के हाथों में न पड़ जाए, और कि वह उसके साथी यरुशलेम की कलीसिया द्वारा अच्छी रीति से ग्रहण किए जाएं (30-33)।

यह पत्र स्पष्ट रुप से एक स्त्री फीबे द्वारा रोम ले जाया गया था, जो पौलुस और बहुत से परमेश्वर के जनों के लिए आधिक सहायक थी। अतः वह रोम के मसीहियों से आग्रह करता है कि वे उसे सच्चा मसीही आतिथ्य और सहभागिता प्रदान करें (16:1,2)। वह अपने महत्वपूर्ण सहकर्मी प्रिंसकिल्ला और अक्विला, तथा उनके घर में कि कलीसिया (3-5), और पहचान के कई अन्य मित्रों के साथ ही साथ उन दोनों व्यक्तियों को जिनके घरों में मसीहियों के समूह प्रार्थना–सभा के लिए एकत्रित होते हैं, को विशेष अभिवादन भेजता है (6-16)।

पौलुस मसीहियों को उपद्रवी लोगों से चौकस रहने की चेतावनी देता है जो वाद–विवाद बढ़ाते और सहभागियों में मतभेद उत्पन्न करते हैं। सतर्क और बुद्धिमत्तापूर्ण सोच–विचार के द्वारा, वास्तविक आत्मिक

Creation Autonomous Academy

अगुए इन कार्यो को शैतान के कार्य के रुप में पहचानने के योग्य होंगे, और इस प्रकार उस पर जयवन्त होने में समर्थ होंगे (17-20)।

पौलुस के साथ बहुत से लोग–सहकर्मी, पत्र को लिपिबद्ध करने में सहायक, मेजबान, और मित्र–सभी को अभिवादन भेजते हैं (21-24)। वह अद्धैत बुद्धिमान परमेश्वर की स्तुति की एक और टिप्पणी के साथ अपना पत्र समाप्त करता है, जिसने पुरानी और नई दोनों व्यवस्थाओं के द्वारा मानव जाति के लिए विश्वास और आज्ञाकारिता का एक नया जीवन संभव बना दिया है (25-27)

Creation Autonomous Academy

परिभाषिक शब्दावली

प्रकाशन-प्रगटीकरण, रहस्योदघाटन, भेद खोलना

संचारित करना-पहुंचाना, बताना, बातचीत करना

व्यक्त करना- बताना

अवलोकन-देखना

स्वतः-स्वयं से

विशिष्ट-विशेष

अभिलेख-दस्तावेज, रिकार्ड

देहधारी-शरीर धारण करना

काल्पनिक-कल्पना करके बनाया गया

श्रृद्धा- आस्था

अकर्मण्य- जो कार्य न कर सके

सनातन-आदि से, हमेंशा हमेंशा से

स्वयंभू-स्वयं से

स्वयंजात-स्वयं से

सर्वव्यापी- सब जगह उपस्थित

सर्वशक्तिमान-सबसे शक्तिशाली

अनुकूल-चरित्र के अनुसार

प्रतिकूल-चरित्र के अनुसार नहीं

सर्वप्रभुत्वसम्पन्न- सभी अधिकारों से सम्पन्न

सर्वज्ञानी-सब कुछ जानने वाला

सर्वबुद्धिमान-सबसे अधिक बुद्धि वाला

अपरिवर्तनीय- न बदलने वाला

समाधान-हल

सर्वोत्तम- सबसे उत्तम

अविनाशी-जो कभी नष्ट नहीं होगा

आश्रित- निर्भर

संरचना-बनावट

अवश्यम्भावी-अवश्य होगा

उत्तरदायित्व-जवाबदेह

भवितव्यता-भविष्य

पूर्व अस्तित्व-पहले से होना

परिज्ञान-ज्ञान, जानकारी

क्षणिक-तत्काल, तुरन्त

अर्जित-कमाना

उपेक्षा-अनदेखा करना

अविच्छेद्य-अलग न होने वाला,अभिन्न

निषेध-रोक लगाना

परिणित- बदल जाना

प्रतीक-चिन्ह

भ्रान्ति-भ्रम

आलौकिक-ईश्वरीय

भव्य-सुन्दर

वियुक्त-अलग

दृष्टिपात-देखें, देखना

निरभिप्राय- उद्देश्यहीन, बिना उद्देश्य के

समाविष्ट-शामिल

परिमित-सीमित

अन्दरुनी-आन्तरि

Creation Autonomous Academy

Bibliography

1- Mr.Robert Duff, Foundation of Faith, Delhi Bible Institute, 50 Amrita Shergill Marg, New Delhi 1985

2- Mr.Robert Duff, Everybody should know, Delhi Bible Institute, 50 Amrita Shergill Marg, New Delhi 1985

3- Isaac J Shaw, Notes of Christian Foundation Course, Delhi Bible Institute, 50 Amrita Shergill Marg, New Delhi 1985

4- http://www.pbministries.org/Theology/Simmons/simmons.htm

5- http://bible-truth.org/Trinity.html

Creation Autonomous Academy

लेखक : डॉ० रामराज डेविड

आज कल अध्यात्म विज्ञान को लेकर ही कलीसियाओं में अनेक विवाद उठ खड़े हो रहे हैं। यह अध्ययन इस बात पर ध्यान केन्द्रित करेगा कि किस प्रकार पवित्र आत्मा की अगुवाई में अध्यात्म विज्ञान को विश्वासियों के जीवन में स्थापित किया जाए।

'अध्यात्म विज्ञान' नामक यह पुस्तक अनेक वर्षों के अध्ययन-अध्यापन के उपरान्त हिन्दी भाषी विश्वासियों की आवश्यकता के अनुसार तैयार की गयी है। यह पुस्तक विश्वासियों के अन्दर अध्यात्म विज्ञान स्थापित करने के लिए लिखी गयी है। ताकि कलीसिया के विश्वासियों के बीच अध्यात्म विज्ञान को सीखा व सिखाया जा सके, जिससे विश्वासी मसीही विश्वास में दृढ़ हो सकें। यह पुस्तक सभी पाठकों के लिए सरल, रोचक एव व्यवहारिक है। पुस्तक में उदाहरणों का समुचित प्रयोग किया गया है।

मेरी इच्छा है कि कलीसिया के विश्वासीगण इस पुस्तक का अध्ययन कर अध्यात्म विज्ञान में दृढ़ हों। कलीसिया में अध्यात्म विज्ञान को सिखाने हेतु इस पुस्तक का उपयोग करें।